

**THE BOOK WAS
DRENCHED**

**TEXT FLY WITHIN
THE BOOK ONLY**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182327

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—556—13-7-71—4,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No.

H81

Accession No.

H 596

Author

S 89 K.

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.

काशी-नागरी-प्रचारिणी ग्रंथमाला—३३

कबीर-ग्रंथावली

संपादक

श्यामसुंदरदास, बी० ए०



काशी-नागरीप्रचारिणी सभा की ओर से

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१९२८

[मूल्य ३]

Published by
K. Mittra,
at The Indian Press, Ltd.,
Allahabad.

Printed by
A. Bose,
at The Indian Press, Ltd.,
Benares-Branch.

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
भूमिका	१—७
प्रस्तावना	१—७२
(१) साखी	१
(१) गुरुदेव कौ अंग	१
(२) सुमिरण कौ अंग	४
(३) विरह कौ अंग	७
(४) ग्यान विरह कौ अंग	११
(५) परचा कौ अंग	१२
(६) रस कौ अंग	१६
(७) लावि कौ अंग	१७
(८) जर्णी कौ अंग	१७
(९) हैरान कौ अंग	१८
(१०) लै कौ अंग	१८
(११) निहकरमी पतिव्रता कौ अंग	१८
(१२) चितावणी कौ अंग	२०
(१३) मन कौ अंग	२८
(१४) सूषिम मारग कौ अंग	३१
(१५) सूषिम जनम कौ अंग	३२
(१६) माया कौ अंग	३२
(१७) चाणक कौ अंग	३५
(१८) करणी बिना कथणी कौ अंग	३८
(१९) कथणी बिना करणी कौ अंग	३८
(२०) कामी नर कौ अंग	४१

विषय	पृष्ठ
(२१) सहज कौ अंग	४१
(२२) साच कौ अंग	४२
(२३) भ्रम विधौसण कौ अंग	४३
(२४) भेष कौ अंग	४५
(२५) कुसंगति कौ अंग	४७
(२६) संगति कौ अंग	४८
(२७) असाध कौ अंग	४८
(२८) साध कौ अंग	४८
(२९) साध सापीभूत कौ अंग	५०
(३०) साध महिमा कौ अंग	५२
(३१) मधि कौ अंग	५३
(३२) सारब्राही कौ अंग	५४
(३३) विचार कौ अंग	५५
(३४) उपदेश कौ अंग	५६
(३५) बेसास कौ अंग	५७
(३६) पीव पिछाणन कौ अंग	६०
(३७) विर्कवाई कौ अंग	६०
(३८) सम्रथवाई कौ अंग	६१
(३९) कुसबद कौ अंग	६२
(४०) सबद कौ अंग	६३
(४१) जीवन मृतक कौ अंग	६४
(४२) चित कपटी कौ अंग	६६
(४३) गुरसीष हेरा कौ अंग	६६
(४४) हेत प्रीति सनेह कौ अंग	६७
(४५) सूरा तन कौ अंग	६८

विषय	पृष्ठ
(४६) काल कौ अंग	७१
(४७) सजीवनि कौ अंग	७६
(४८) अपारिष कौ अंग	७७
(४९) पारिष कौ अंग	७८
(५०) उपजणि कौ अंग	७८
(५१) दया निरवैरता कौ अंग	८०
(५२) सुंदरि कौ अंग	८०
(५३) कस्तूरियाँ मृग कौ अंग	८१
(५४) निंद्या कौ अंग	८२
(५५) निगुणां कौ अंग	८३
(५६) वीनती कौ अंग	८४
(५७) सापीभूत कौ अंग	८५
(५८) बेला कौ अंग	८६
(५९) अविहङ्ग कौ अंग	८६
(२) पद	८७
(३) रमैणी	२२३
परिशिष्ट	२४८



कबीर-ग्रंथावली

(१) साखी

(१) गुरदेव की अंग

सतगुर सवाँन को सगा, सोधी सईं न दाति ।
हरिजी सवाँन को हितू, हरिजन सईं न जाति ॥ १ ॥
बलिहारी गुर आपणै, द्यौं हाड़ो कै बार ।
जिनि मानिष तैं देवता, करत न लागी बार ॥ २ ॥
सतगुर की महिमा अनंत, अनंत किया उपगार ।
लोचन अनंत उघाड़िया, अनंत दिखावणहार ॥ ३ ॥
राम नाम कै पटंतरै, देवे कौं कुछ नाहि ।
क्या ले गुर संतोषिए, हँस रही मन मांहि ॥ ४ ॥
सतगुर कै सकै करुं, दिल अपणों का साछ ।
कलियुग हम स्युं लड़ि पड़ा, मुहकम मेरा बाछ ॥ ५ ॥
सतगुर लई कमाण करि, बांहरण लागा तीर ।
एक जु बाह्या प्रीति सूं, भीतरि रह्या सरीर ॥ ६ ॥
सतगुर साँचा सूरिवाँ, सबद जु बाह्या एक ।
लागत ही भैं मिलि गया, पड़ा कलेजै छेक ॥ ७ ॥

(२) क-ख—देवता के आगे 'क्या' पाठ है जो अनावश्यक है ।

(५) ख—सदकै करों । ख—साच । तुक मिलाने के लिये 'साङ्ग'
'साङ्ग' लिखा है ।

सतगुर मारया बाण भरि, धरि करि सुधी मूठि ।
 अंगि उधाड़ै लागिया, गई दवा सँ फूटि ॥ ८ ॥
 हँसै न बोलै उनमनों, चंचल मेल्ह्या मारि ।
 कहै कबीर भोतरि भिया, सतगुर कै हथियारि ॥ ९ ॥
 गूंगा हूवा बावला, बहरा हूवा कान ।
 पाऊं थैं पंगुल भया, सतगुर मारया बाण ॥ १० ॥
 पीछें लागा जाइ था, लोक बेद के साथि ।
 आगें थैं सतगुर मिल्या, दीपक दीया हाथि ॥ ११ ॥
 दीपक दीया तेल भरि, बाती दर्ई अघट्ट ।
 पूरा किया बिसाहुणां, बहुरि न आँवैं हट्ट ॥ १२ ॥
 ग्यान प्रकास्या गुर मिल्या, सो जिनि बोसरि जाइ ।
 जब गोबिंद कृपा करी, तब गुर मिलिया आइ ॥ १३ ॥
 कबोर गुर गरवा मिल्या, रलि गया आटैं लुण्ण ।
 जाति पाँति कुल सब मिटे, नाँव धरौगे कौण ॥ १४ ॥
 जाका गुर भी अंधला, चेला खरा निरंध ।
 अंधै अंधा ठेलिया, दून्यूं कूप पड़ंत ॥ १५ ॥
 नां गुर मिल्या न सिष भया, लालच खेल्या डाव ।
 दून्यूं बूड़े धार मै, चढ़ि पाथर की नाव ॥ १६ ॥
 चौसठि दीवा जोइ करि, चौदह चंदा मांहि ।
 तिहिं घरि किसकौ चानिणौ, जिहि घरि गोबिंद नांहि ॥ १७ ॥
 निस अधियारी कारणैं, चौरासी लख चंद ।
 अति आतुर उदै किया, तऊ दिष्टि नहीं मंद ॥ १८ ॥

(१२) क-ख-अघट, हट ।

(१३) क-गोब्यंद

(१५) क-चेला हैजा चंद (? है गा अंध)

(१७) ख-चारिणौ । ख-तिहिं जिहिं ।

भली भई जु गुर मिल्या, नहीं तर होती हांणि ।
 दीपक दिष्टि पतंग ज्युं, पड़ता पूरी जांणि ॥ १८ ॥
 माया दीपक नर पतंग, भ्रमि भ्रमि इवै पड़ंत ।
 कहै कबीर गुर ग्यान थै, एक आध उवरंत ॥ २० ॥
 सतगुर बपुरा क्या करै, जे सिषही मांहै चूक ।
 भावै त्यूं प्रमोधि ले, ज्युं बैसि बजाई फूक ॥ २१ ॥
 संसै खाया सकल जुग, संसा किनहुँ न खद्व ।
 जे बेधे गुर अषिषरां, तिनि संसा चुणि चुणि खद्व ॥ २२ ॥
 चेतनि चौकी बैसि करि, सतगुर दीन्हां धीर ।
 निरभै होइ निसंक भजि, केवल कहै कबीर ॥ २३ ॥
 सतगुर मिल्या त का भया, जे मनि पाड़ी भोल ।
 पासि बिनंठा कप्पड़ा, क्या करै बिचारी चोल ॥ २४ ॥
 बूढ़े थे परि ऊबर, गुर की लहरि चमंकि ।
 भेया देख्या जरजरा, (तब) ऊतरि पड़े फरंकि ॥ २५ ॥
 गुर गोविंद तौ एक है, दूजा यहु आकार ।
 आपा मेट जीवत मरै, तौ पावै करतार ॥ २६ ॥
 कबीर सतगुर नां मिल्या, रही अधूरी सीष ।
 स्वांग जती का पहरि करि, घरि घरि मांगै भीष ॥ २७ ॥

(२१) ख-प्रमोधि । जांणै वास जनाई कूद ।

(२२) ख-सैल जुग ।

(२५) ख-जाजरा ।

(२६) इस दोहे के आगे ख प्रति में यह दोहा है—

कबीर सब जग यों अम्या फिरै, ज्युं रामे का रोज ।

सतगुर थै सोधी भई, तब पाया हरि का योज ॥ २७ ॥

(२७) इसके आगे ख प्रति में यह दोहा है—

कबीर सतगुर ना मिल्या, सुणी अधूरी सीष ।

मरुं ड मुंडावै मुक्ति कूं, चालि न सकई बीष ॥ २८ ॥

सतगुर साँचा सूरिवाँ, तातैं लोहिं लुहार ।
 कसणो दे कंचन किया, ताइ लिया ततसार ॥ २८ ॥
 थापणि पाई थिति भई, सतगुर दीन्हों धीर ।
 कबीर हीरा-बणजिया, मानसरोवर तीर ॥ २९ ॥
 निहचल निधि मिलाइ तत, सतगुर साहस धीर ।
 निपजी में साभो घणाँ, बाँटै नहीं कबीर ॥ ३० ॥
 चौपड़ि माँडी चौहटै, अरध उरध बाजार ।
 कहै कबीरा राम जन, खेलौ संत बिचार ॥ ३१ ॥
 पासा पकड़या प्रेम का, सारी किया सरीर ।
 सतगुर दाव बताइया, खेलै दास कबीर ॥ ३२ ॥
 सत गुर हम सूं रीझि करि, एक कह्या प्रसंग ।
 बरस्या बादल प्रेम का, भीजि गया सब अंग ॥ ३३ ॥
 कबीर बादल प्रेम का, हम परि बरण्या आइ ।
 अंतरि भीगी आत्माँ, हरी भई बनराइ ॥ ३४ ॥
 पूरे सूं परचा भया, सब दुख मेल्या दूरि ।
 निर्मल कीन्हों आत्माँ, ताथै सदा हजूरि ॥ ३५ ॥

(२) सुमिरण कौ अंग

कबीर कहता जात हूँ, सुणता है सब कोइ ।
 राम कहें भला होइगा, नहिं तर भला न होइ ॥ १ ॥

(२८) ख-सतगुर मेरा सूरिवाँ ।

(२९) इसके आगे ख प्रति में यह दोहा है—

कबीर हीरा बणजिया हिरदै उकठी खाणि
 पारब्रह्म क्रिपा करी, सतगुर भये सुजाण ॥

(३५) ख. में नहीं है ।

कबीर कहै मैं कथि गया, कथि गया ब्रह्म महेश ।
 राम नाँव ततसार है, सब काहू उपदेस ॥ २ ॥
 तत तिलक तिहूँ लोक मैं, राम नाँव निज सार ।
 जन कबीर मस्तक दिया, सोभा अधिक अपार ॥ ३ ॥
 भगति भजन हरि नाँव है, दूजा दुक्ख अपार ।
 मनसा बाचा क्रमनां, कबीर सुमिरण सार ॥ ४ ॥
 कबीर सुमिरण सार है, और सकल जंजाल ।
 आदि अंति सब सोधिया, दूजा देखौं काल ॥ ५ ॥
 क्यंता तौ हरि नाँव की, और न चिंता दास ।
 जे कुछ चितवै राम बिन, सोइ काल की पास ॥ ६ ॥
 पंच सेंगी पिव पिव करै, छठा जु सुमिरे मन ।
 आई सुति कबीर की, पाया राम रतन ॥ ७ ॥
 मेरा मन सुमिरै राम कूँ, मेरा मन रामहिं आहि ।
 अब मन रामहिं हूँ रखा, सीस नवावौं काहि ॥ ८ ॥
 तूँ तूँ करता तूँ भया, मुझ मैं रही न हूँ ।
 वारी फेरी बलि गई, जित देखौं तित तूँ ॥ ९ ॥
 कबीर निरभै राम जपि, जब लग दीवै बाति ।
 तेल घट्या बाती बुझो, (तब) सोवैगा दिन राति ॥ १० ॥
 कबीर सूता क्या करे, जागि न जपै मुरारि ।
 एक दिनां भी सोवणां, लंबे पाँव पसारि ॥ ११ ॥
 कबीर सूता क्या करै, काहे न देखै जागि ।
 जाका संग तैं बोलुड़ा, ताही के सँग लागि ॥ १२ ॥
 कबीर सूता क्या करै, उठि न रोवै दुक्ख ।
 जाका बासा गोर मैं, सो क्यूँ सोवै सुक्ख ॥ १३ ॥

कबीर सूता क्या करै, गुण गोबिंद के गाइ ।
 तेरे सिर परि जम खड़ा, खरच कदे का खाइ ॥ १४ ॥
 कबीर सूता क्या करै, सूतां होइ अकाज ।
 ब्रह्मा का आसण खिस्सा, सुणत काल की गाज ॥ १५ ॥
 कोसौ कहि कहि कूकिये, नां सोइयै असरार ।
 राति दिवस कै कूकणै, (मत) कबहुँ लगै पुकार ॥ १६ ॥
 जिहि घटि प्रीति न प्रेम रस, फुनि रसना नहीं राम ।
 ते नर इस संसार में, उपजि षुये बेकाम ॥ १७ ॥
 कबीर प्रेम न चषिया, चषि न लीया साव ।
 सूनें घर का पाहुणां, ज्यूं आया त्यूं जाव ॥ १८ ॥
 पहली बुरी कमाइ करि, बांधी विष की पोत ।
 कोटि करम फिल पलक मैं, (जब) आया हरि की वोट ॥ १९ ॥
 कोटि क्रम पेलै पलक मैं, जे रंचक आवै नाउँ ।
 अनेक जुग जे पुनि करै, नहीं राम बिन ठाउँ ॥ २० ॥
 जिहि हरि जैसा जाणियां, तिन कूँ तैसा लाभ ।
 ओसों प्पास न भाजई, जब लग धसै न आभ ॥ २१ ॥
 राम पियारा छाड़ि करि, करै आन का जाप ।
 बेखां केरा पूत ज्यूं, कहैं कौन सूं बाप ॥ २२ ॥
 कबीर आपण राम कहि, औरां राम कहाइ ।
 जिहि मुख राम न उचरे, तिहि मुख फेरि कहाइ ॥ २३ ॥
 जैसें माया मन रमै, यूँ जे राम रमाइ ।
 (तौ) तारा-मंडल छाड़ि करि, जहाँ के सो तहाँ जाइ ॥ २४ ॥

(१६) ख. में नहीं है ।

(१७) क-आइ संसार में

(२३) ख-जा युष, ता युष ।

लूटि सकै तौ लूटियौ, राम नाम है लूटि ।
 पीछैं हो पछिताहुगे, यहु तन जैहे छूटि ॥ २५ ॥
 लूटि सकै तौ लूटियौ, राम नाम भंडार ।
 काल कंठ तैं गहैगा, रुंधै दसूँ दुवार ॥ २६ ॥
 लंबा मारग दूरि घर, बिकट पंथ बहु मार ।
 कहौ संतौ क्यूँ पाइये, दुर्लभ हरि-दीदार ॥ २७ ॥
 गुण गायेँ गुण नाम कटै, रटै न राम विवोग ।
 अह निसि हरि ध्यावै नहीं, क्यूँ पावै दुर्लभ जोग ॥ २८ ॥
 कबीर कठिनाई खरी, सुमिरतां हरि-नाम ।
 सूली ऊपरि नट विद्या, गिरुं त नाहीं ठाम ॥ २९ ॥
 कबीर राम ध्याइ लै, जिभ्या सौं करि मंत्र ।
 हरि सागर जिनि बोंसरै, छीलर देखि अनंत ॥ ३० ॥
 कबीर राम रिझाइ लै, मुखि अमृत गुण गाइ ।
 फूटा नग ज्यूँ जोड़ि मन, संधे संधि मिलाइ ॥ ३१ ॥
 कबीर चित चमकियम, चहुं दिसि लागी लाइ ।
 हरि सुमिरण हाथूँ घड़ा, बेगे लेहु बुझाइ ॥ ३२ ॥ ६७ ॥

(३) बिरह कौ अंग

रात्यूँ रुंनो बिरहनीं, ज्यूँ बंचौ कूँ कुंज ।
 कबीर अंतर प्रजल्या, प्रगट्या बिरहा पुंज ॥ १ ॥
 अंबर कुंजां कुरलियाँ, गरजि भरे सब ताल ।
 जिनि पै गोबिंद बोल्लुटे, तिनके कौण हवाल ॥ २ ॥
 चकवी बिछुटी रैणि की, आइ मिली परभाति ।
 जे जन बिछुटे राम सूँ, ते दिन मिले न राति ॥ ३ ॥

बासुरि सुख नाँ रेंणि सुख, नाँ सुख सुपिनै माहिं ।
 कबीर बिछुट्या राम सूँ, नाँ सुख धूप न छाँह ॥ ४ ॥
 बिरहनि ऊभी पंथ सिरि, पंथी बूझै धाइ ।
 एक सबद कहि पीव का, कबर मिलेंगे आइ ॥ ५ ॥
 बहुत दिनन की जोवती, बाट तुम्हारी राम ।
 जिव तरसै तुम्ह मिलन कूँ, मनि नार्हीं विश्राम ॥ ६ ॥
 बिरहिन ऊठै भी पड़े, दरसन कारनि राम ।
 मूवां पीछें देहुगे, सो दरसन किहि काम ॥ ७ ॥
 मूवां पीछें जिनि मिलै, कहै कबोरा राम ।
 पाथर घाटा लोह सब, (तब) पारस कौणै काम ॥ ८ ॥
 अंदेसड़ा न भाजिसी, संदेसौ कहियां ।
 कै हरि आयां भाजिसी, कै हरि ही पासि गयां ॥ ९ ॥
 आइ न सकौं तुम्ह पै, सकूँ न तुम्ह बुलाइ ।
 जियरा यौंही लेहुगे, बिरह तपाइ तपाइ ॥ १० ॥
 यहु तन जालौं मसि करूं, ज्यूं धूवां जाइ सरगि ।
 मति वै राम दया करै, बरसि बुझावै अगि ॥ ११ ॥
 यहु तन जालौं मसि करौं, लिखौं राम का नाउं ।
 लेखणि करूं करंक की, लिखि लिखि राम पठाउँ ॥ १२ ॥
 कबीर पीर पिरावनीं, पंजर पीड़ न जाइ ।
 एक ज पीड़ परीति की, रही कलेजा छाई ॥ १३ ॥
 चोट सताणों बिरह की, सब तन जर जर होइ ।
 मारणहारा जाणिहै, कै जिहिं लागी सोइ ॥ १४ ॥
 कर कमाण सर साँधि करि, खैचिजु मारया माहि ।
 भीतरि भिया सुमार है, जीवै कि जीवै नाहि ॥ १५ ॥
 जबहुँ मारया खैचि करि, तब मैं पाई जाणि ।
 लागी चोट मरम्ह की, गई कलेजा छाणि ॥ १६ ॥

जिहि सरि मारी कालिह, सो सर मेरे मन बस्या ।
 तिहि सरि अजहूँ मारि, सर बिन सचपाऊं नहीं ॥ १७ ॥
 बिरह भुवंगम तन बसै, मंत्र न लागै कोइ ।
 राम बिबोगी ना जिवै, जिवै त बैरा होइ ॥ १८ ॥
 बिरह भुवंगम पैसि करि, किया कलेजै घाव ।
 साधू अंग न मोड़ही, ज्यूं भावै त्यूं खाव ॥ १९ ॥
 सब रंग संतर बाबतन, बिरह बजावै नित्त ।
 और न कोई सुणि सकै, कै साईं कै चित्त ॥ २० ॥
 बिरहा बुरहा जिनि कहौ, बिरहा है सुलितान ।
 जिस घटि बिरह न संचरै, सो घट सदा मसान ॥ २१ ॥
 अंघड़ियां भाईं पड़ी, पंथ निहारि निहारि ।
 जीभड़ियां छाला पड़्या, राम पुकारि पुकारि ॥ २२ ॥
 इस तन का दीवा करौं, बाती मेल्युं जीव ।
 लोही सींचैं तेल ज्यूं, कब मुख देखौं पीव ॥ २३ ॥
 नैनं नीभर लाइया, रहट बहै निस जाम ।
 पपीहा ज्यूं पिव पिव करौं, कबरु मिलहुगे राम ॥ २४ ॥
 अंघड़ियां प्रेम कमाइयां, लोग जाणैं दुखड़ियां ।
 साईं अपणैं कारणैं, रोइ रोइ रतड़ियां ॥ २५ ॥
 सोई आसु सजणां, सोई लोक बिड़ाहि ।
 जे लोइण लोहीं चुवै, तौ जाणैं हेत हियांहि ॥ २६ ॥
 कबोर हसणां दूरि करि, करि रोवण सौं चित्त ।
 बिन रोयां क्यूं पाइए, प्रेम पियारा मित्त ॥ २७ ॥
 जौ रोऊं तौ बल घटै, हँसैं तौ राम रिसाइ ।
 मनहो माहि बिसुरणां, ज्यूं घुंण काठहि खाइ ॥ २८ ॥
 हँसि हँसि कंत न पाइए, जिनि पाया तिनि रोइ ।
 जे हाँसेही हरि मिलै, तौ नहीं दुहागनि कोइ ॥ २९ ॥

हाँसी खेलौं हरि मिलै, तौ कौण सहै घरसान ।
 काम क्रोध त्रिष्णां तजै, ताहि मिलै भगवान ॥ ३० ॥
 पूत पियारो पिता कौं, गौहनि लागा धाइ ।
 लोभ मिठाई हाथि दे, आपण गया भुलाइ ॥ ३१ ॥
 डारी खाँड़ पटक करि, अंतरि रोस उपाइ ।
 रोवत रोवत मिलि गया, पिता पियारे जाइ ॥ ३२ ॥
 नैनं अंतरि आचरूं, निस दिन निरषौं तोहि ।
 कब हरि दरसन देहुगे, सो दिन आवै मोहि ॥ ३३ ॥

कबीर देखत दिन गया, निस भी देखत जाइ ।
 बिरहणि पिव पावै नहीं, जियरा तलपै माइ ॥ ३४ ॥
 कै बिरहनि कूँ मीच दे, कै आपा दिखलाइ ।
 आठ पहर का दाभणां, मोपै सख्या न जाइ ॥ ३५ ॥
 बिरहणि थी तौ क्यूं रहीं, जली न पिव के नालि ।
 रहु रहु मुगध गहेलड़ी, प्रेम न लाजूं मारि ॥ ३६ ॥
 हैं बिरह की लकड़ी, समझि समझि धूँधाडं ।
 छूटि पड़ौं या बिरह तैं, जे सारीही जलि जाऊं ॥ ३७ ॥
 कबीर तन मन यैं जलया, बिरह अगनि सूं लागि ।
 मृतक पीड़ न जाणई, जाणैंगी यहु आगि ॥ ३८ ॥
 बिरह जलाई मैं जलौं, जलती जल हरि जाऊं ।
 मो देख्यां जल हरि जलै, संतौ कहां बुझाऊं ॥ ३९ ॥
 परबति परबति मैं फिरया, नैन गँवाये रोइ ।
 सो बूटी पाँऊं नहीं, जातैं जीवनि होइ ॥ ४० ॥

(३२) ख—में इसके अनन्तर यह दोहा है—

मो चित तिली न बीसरौ, तुम्ह हरि दूरि थंयाह ।
 इहि अगि औलू भाइ जिसी, जदि तदि तुम्ह म्यलियांह ॥

फाड़ि पुटोला धज करौं, कामलड़ी पहिराउं ।
 जिहिं जिहि भेषां हरि मिलै, सोइ सोइ भेष कराउं ॥ ४१ ॥
 नैन हमारे जलि गए, छिन छिन लोड़ै तुझ ।
 नां तूं मिलै न मैं खुसी, ऐसी बेदन मुझ ॥ ४२ ॥
 भेला पाया श्रम सौं, भौसागर कं मांहि ।
 जे छांडौ तौ डूबिहौ, गहौ त डसिये बांह ॥ ४३ ॥
 रैणा दूर बिछोहिया, रहु रे संपम भूरि ।
 देवलि देवलि धाहड़ी, देसी ऊगं सूरि ॥ ४४ ॥
 सुखिया सब संसार है, खायै अरु सोवै ।
 दुखिया दास कबोर है, जागै अरु रोवै ॥ ४५ ॥ ११२ ॥

(४) ग्यान बिरह कौ अंग

दीपक पावक आंणिया, तेल भी आंण्या संग ।
 तीन्यूं मिलि करि जोइया, (तब) उडि उडि पडै पतंग ॥ १ ॥
 मारया है जे मरैगा, बिन सर थोथी भालि ।
 पड़या पुकारै बिछ तरि, आजि मरै कै काल्हि ॥ २ ॥
 हिरदा भीतरि दौं बलै, धूवां न प्रगट होइ ।
 जाकै लागी सौ लखै, कै जिहि लाई सोइ ॥ ३ ॥
 भल उठी भोली जली, खपरा फूटिम फूटि ।
 जोगी था सो रमि गया, आसणि रही बिभूत ॥ ४ ॥
 अगनि जु लागी नीर मैं, कंदू जलिया भारि ।
 उतर दषिण के पंडिता, रहे बिचारि बिचारि ॥ ५ ॥

(४३) ख—में इसके आगे यह दोहा है ।

बिरह जलाई मैं जलौं, मो बिरहनि कै दुष ।

छाहन बैसों डरपती, मति जलि ऊठै रूप ॥ ४६ ॥

दौं लागी साइर जलया, पंषी बैठे आइ ।
 दाधी देह न पालवै, सतगुर गया लगाय ॥ ६ ॥
 गुर दाधा चेला जलया, बिरहा लागी आगि ।
 तिणका बपुड़ा ऊबरया, गलि पूरे कै लागि ॥ ७ ॥
 अहेड़ी दौं लाइया, मृग पुकारे रोइ ।
 जा बन में क्रीला करी, दाभत है बन सोइ ॥ ८ ॥
 पार्थी मांहैं प्रजली, भई अप्रबल आगि ।
 बहती सलिता रहि गई, मंछ रहे जल त्यागि ॥ ९ ॥
 समंदर लागी आगि, नदियां जलि कोइला भई ।
 देखि कबीरा जागि, मंछी रूषां चढि गई ॥ १० ॥ १२२ ॥

(५) परचा कौ अंग

कबीर तेज अनंत का, मानौं ऊगी सूरज सेणि ।
 पति सँगि जागी सुंदरी, कौतिग दीठा तेणि ॥ १ ॥
 कौतिग दीठा देह बिन, रवि ससि बिना उजास ।
 साहिब सेवा मांहि है, बेपरवांही दास ॥ २ ॥
 पारब्रह्म के तेज का, कैसा है उनमान ।
 कहिबे कूँ रोभा नहीं, देख्याही परवान ॥ ३ ॥
 अगम अगोचर गमि नहीं, तहां जगमगै जोति ।
 जहां कबीरा बंदिगी, (तहां) पाप पुन्य नहीं छोति ॥ ४ ॥
 हृदे छाडि बेहदि गया, हुवा निरंतर बास ।
 कवल ज फूलया फूल बिन, को निरपै निज दास ॥ ५ ॥

(६) ख—कवल जो फूला फूल बिन ।

(१०) ख—मैं इसके आगे यह दोहा है—

बिरहा कहै कबीरकौं तू जनि छांडै मोहि
 पारब्रह्म के तेज मैं, तहां ले राखौं तोहि ॥

कबीर मन मधकर भया, रह्या निरंतर बास ।
 कवल ज फूल्या जलह बिन, को देखै निज दास ॥ ६ ॥
 अंतरि कवल प्रकासिया, ब्रह्म बास तहाँ होइ ।
 मन भवरा तहाँ लुबधिया, जाँगैगा जन कोइ ॥ ७ ॥
 सायर नाहीं सीप बिन, स्वांति बूंद भी नाहिं ।
 कबीर मोती नीपजै, सुनि सिषर गढ मांहि ॥ ८ ॥
 घट मांहीं औघट लह्या, औघट मांहीं घाट ।
 कहि कबीर परचा भया, गुरु दिखाई बाट ॥ ९ ॥
 सूर समाणां चंद मैं, दहूँ किया घर एक ।
 मनका ज्यंता तब भया, कछु पूरबला लेख ॥ १० ॥
 हृद छाड़ि बेहद गया, किया सुनि असनान ।
 मुनि जन महल न पावई, तहाँ किया विश्राम ॥ ११ ॥
 देखौ कर्म कबीर का, कछु पूरव जनम का लेख ।
 जाका महल न मुनि लहैं, सो दासत किया अलेख ॥ १२ ॥
 पिंजर प्रेम प्रकासिया, जाग्या जोग अनंत ।
 संसा खूटा सुख भया, मिल्या पियारा कंत ॥ १३ ॥
 प्यंजर प्रेम प्रकासिया, अंतरि भया उजास ।
 मुखि कसतूरी महमहीं, बांणीं फूटी बास ॥ १४ ॥
 मन लागा उन मन सौं, गगन पहुँचा जाइ ।
 देख्या चंद बिहूँणां चांदिणां, तहां अलख निरंजन राइ ॥ १५ ॥
 मन लागा उन मन सौं, उन मन मनहि बिलग ।
 लूण बिलगा पांणियां, पांणीं लूण बिलग ॥ १६ ॥
 पांणीं ही तैं हिम भया, हिम हूँ गया बिलाइ ।
 जो कुछ था सोई भया, अब कछु कहा न जाइ ॥ १७ ॥

भली भई जु भै पड्या, गई दसा सब भूलि ।
 पाला गलि पांणी भया, दुलि मिलिया उस कूलि ॥ १८ ॥
 चौहटै च्यंतामणि चढ़ी, हाडी मारत हाथि ।
 मीरां मुभसूं मिहर करि, इव मिलौं न काहु साथि ॥ १९ ॥
 पंषि उडाणीं गगन कूं, प्यंड रङ्ग पस्देस ।
 पांणीं पीका चंच बिन, भूलि गया यहु देस ॥ २० ॥
 पंषि उडानीं गगन कूं, उड़ो चढ़ी असमान ।
 जिहिं सर मंडल भेदिया, सो सर लागा कान ॥ २१ ॥
 सुरति समांणीं निरति में, निरति रही निरधार ।
 सुरति निरति परचा भया, तब खुले स्यंभ दुवार ॥ २२ ॥
 सुरति समांणीं निरति में, अजपा मांहीं जाप ।
 लेख समांणीं अलेख में, यूं आपा मांहीं आप ॥ २३ ॥
 आया था संसार में, देषण कौं बहु रूप ।
 कहै कबीरा संत हौ, पड़ि गया नजरि अनूप ॥ २४ ॥
 अंक भरे भरि भेटिया, मन में नाहीं धीर ।
 कहै कबीर ते क्यूं मिलैं, जब लग दोइ सरीर ॥ २५ ॥
 सचुपाया सुख ऊपनां, अरु दिल दरिया पूरि ।
 सकल पाप सहजें गये, जब साईं मिल्या हजूरि ॥ २६ ॥
 धरती गगन पवन नहीं होता, नहीं तोया, नहीं तारा ।
 तब हरि हरि के जन होते, कहै कबीर बिचारा ॥ २७ ॥
 जा दिन कृतमनां हुता, होता हट न पट ।
 हुता कबीरा राम जन, जिनि देखै औघट घट ॥ २८ ॥
 थिति पाई मन थिर भया, सतगुर करी सहाइ ।
 अनिन कथा तनि आचरी, हिरदै त्रिभुवन राइ ॥ २९ ॥

हरि संगति सीतल भया, मिटी मोह की ताप ।
 निस बासुरि सुख निध्य लह्या, जब अंतरि प्रगट्या आप ॥ ३० ॥
 तन भीतरि मन मानियां, बाहरि कहा न जाइ ।
 ज्वाला तैं फिरि जल भया, बुझी बलंती लाइ ॥ ३१ ॥
 तत पाया तन बीसरया, जब मनि धरिया ध्यान ।
 तपनि गई सीतल भया, जब सुनि किया असनान ॥ ३२ ॥
 जिनि पाया तिनि सू गह गह्या, रसनां लागी स्वादि ।
 रतन निराला पाईया, जगत ढंडौलया बादि ॥ ३३ ॥
 कबीर दिल स्यावति भया, पाया फल संग्रथ ।
 सायर माहि ढंडोलतां, हीरै पड़ि गया हथ ॥ ३४ ॥
 जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहि ।
 सब अंधियारा मिटि गया, जब दीपक देख्या माहि ॥ ३५ ॥
 जा कारणि मैं ढूँढता, सनमुख मिलिया आइ ।
 धन मैली पिव उजला, लागि न सकौं पाइ ॥ ३६ ॥
 जा कारणि मैं जाइ था, सोई पाई ठौर ।
 सोई फिरि आपण भया, जासूं कहता और ॥ ३७ ॥
 कबीर देख्या एक अंग, महिमा कही न जाइ ।
 तेज पुंज पारस धर्णी, नैनूं रहा समाइ ॥ ३८ ॥
 मानसरोवर सुभर जल, हंसा केलि कराहि ।
 मुकताहल मुकता चुगैं, अब उड़ि अनत न जाहि ॥ ३९ ॥
 गगन गरजि अमृत चवै, कदली कवल प्रकास ।
 तहां कबीरा बंदिगी, कौ कोई निज दास ॥ ४० ॥
 नींव बिहूणां देहुरा, देह बिहूणां देव ।
 कबीर तहां बिलंबिया, करे अलष की सेव ॥ ४१ ॥
 देवल मांहैं देहुरी, तिल जेहै बिसतार ।
 मांहैं पाती मांहिं जल, मांहैं पूजणहार ॥ ४२ ॥

कबीर कवल प्रकासिया, ऊग्या निर्मल सूर ।
 निस अँधियारी मिटि गई, बागे अनहद नूर ॥ ४३ ॥
 अनहद बाजै नीभर भरै, उपजै ब्रह्म गियान ।
 आबगति अंतरि प्रगटै, लागै प्रेम धियान ॥ ४४ ॥
 आकासे मुखि झँधा कुवाँ, पाताले पनिहारि ।
 ताका पांणी को हंसा पीवै, बिरलां आदि बिचारि ॥ ४५ ॥
 सिव सकती दिसि कौण जु जोवै, पछिम दिसा ठठै धूरि ।
 जल में स्यंघ जु घर करै, मछली चढै खजूरि ॥ ४६ ॥
 अमृत बरिसै हीरा निपजै, घंटा पड़ै टकसाल ।
 कबीर जुलाहा भया पारपू, अनभै उतरया पार ॥ ४७ ॥
 ममिता मेरा क्या करै, प्रेम उघाड़ीं पैलि ।
 दरसन भया दयाल का, सुल भई सुख सौड़ि ॥ ४८ ॥ १७० ॥

(६) रस कौ अंग

कबीर हरि रस यौं पिया, बाकी रही न थाकि ।
 पाका कलस कुँभार का, बहुरि न चढ़ई चाकि ॥ १ ॥
 राम रसाइन प्रेम रस, पीवत अधिक रसाल ।
 कबीर पीवण दुलभ है, मांगै सीस कलाल ॥ २ ॥
 कबीर भाठी कलाल की, बहुतक बैठे आइ ।
 सिर सौपै सोई पिवै, नहीं तौ पिया न जाइ ॥ ३ ॥
 हरि रस पीया जाँणिये, जे कबहूँ न जाइ खुमार ।
 मैमंता घूमत रहै, नांही तन की सार ॥ ४ ॥
 मैमंता तिण नां चरै, सालै चिता सनेह ।
 बारि जु बांध्या प्रेम कै, डारि रखा सिरि बेह ॥ ५ ॥

मैमंता अविगत रता, अकलप आसा जीति ।
 राम अमलि माता रहै, जीवत मुक्ति अतीति ॥ ६ ॥
 जिहि सर घड़ा न डूबता, अव मै गल मलि मलि न्हाइ ।
 देवल बूडा कलस सूं, पंषि तिसाई जाइ ॥ ७ ॥
 सबै रसांइण मै किया, हरि सा और न कोइ ॥
 तिल इक घट मै संचरै, तौ सब तन कंचन होइ ॥ ८ ॥ १६८ ॥

(७) लांबि कौ अंग

काया कमंडल भरि लिया, उज्जल निर्मल नीर ।
 तन मन जोवन भरि पिया, प्यास न मिटी सरीर ॥ १ ॥
 मन उलट्या दरिया मिल्या, लागा मलि मलि न्हान ।
 थाहत थाह न आवई, तूं पुरा रहिमान ॥ २ ॥
 हेरत हेरत हे सखी, रह्या कबीर हिराइ ।
 बूंद समानी समद मै, सो कत हेरी जाइ ॥ ३ ॥
 हेरत हेरत हे सखी, रह्या कबीर हिराइ ।
 समंद समाना बूंद मै, सो कत हेरया जाइ ॥ ४ ॥ १७२ ॥

(८) जर्णों कौ अंग

भारी कहौ त बहु डरौ, हलका कहूँ तौ भूठ ।
 मै का जाणौ राम कूँ, नैनू कबहूँ न दीठ ॥ १ ॥
 दीठा है तौ कस कहूँ, कहाँ न को पतियाइ ।
 हरि जैसा है तैसा रहौ, तूं हरिषि हरषि गुण गाइ ॥ २ ॥

(८) ख—रिंचक घट मै संचरै ।

(१) क—हलवा कहूँ

ऐसा अदभुत जिनि कबै, अदभुत राखि लुकाइ ।
 बेद कुरानौं गमि नहीं, कहां न को पतियाइ ॥ ३ ॥✓
 करता की गति अगम है, तूं चलि अपगुँ उनमान ।
 धीरै धीरै पाव दे, पहुँचैंगे परवान ॥ ४ ॥✓
 पहुँचैंगे तब कहेंगे, अमड़ेंगे उस ठाँइ ।
 अजहूँ बेरा समंद में, बोलि बिगूचैँ काँइ ॥ ५ ॥ १७७ ॥

(८) हैरान कौ अंग

पंडित सेती कहि रहे, कहां न मानै कोइ ।
 ओ अगाध एका कहैं, भारी अचिरज होइ ॥ १ ॥
 बसै अपंडो पंड में, ता गति लपै न कोइ ।
 कहै कबीरा संत हो, बड़ा अचंभा मोहि ॥ २ ॥ १७८ ॥

(१०) लै कौ अंग

जिहि बन सीह न संचरै, पंषि उड़ें नहीं जाइ ।
 रैनि दिवस का गमि नहीं, तहां कबीर रखा ल्यौ लाइ ॥ १ ॥
 सुरति ढीकुली ले जल्यौ, मन नित ढोलन हार ।
 कँवल कुवाँ मैं प्रेम रस, पीवै बारं बार ॥ २ ॥
 गंग जमुन डर अंतरै, सहज सुनि ल्यौ घाट ।
 तहां कबीरै मठ रच्या, मुनि जन जोवै बाट ॥ ३ ॥ १८२ ॥

(११) निहकर्मो पतिव्रता कौ अंग

कबीर प्रीतड़ी तौ तुझ सौं, बहु गुणियाले कंत ॥
 जे हँसि बोलौं और सौं, तौ नील रँगाऊँ दंत ॥ १ ॥✓

नैनां अंतरि आव तूँ, ज्यूं हैं नैन भूँपेउं ।
 नां हैं देखौ और कूँ, नां तुझ देखन देउं ॥ २ ॥
 मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तेरा ।
 तेरा तुझकौं सौंपतां, क्या लागै मेरा ॥ ३ ॥
 कबीर रेख स्यंदूर की, काजल दिया न जाइ ।
 नैनूं रमइया रमि रह्या, दूजा कहां समाइ ॥ ४ ॥
 कबीर सीप समंद की, रटै पियास पियास ।
 समदहि तिणका बरि गिणै, स्वाँति बूंद की आस ॥ ५ ॥
 कबीर सुख कौं जाइ था, आगै आया दुख ।
 जाहि सुख घरि आपणै, हम जाणौं अरु दुख ॥ ६ ॥
 दो जग तौ हम अंगिया, यहु डर नाहीं मुझ ।
 भिस्त न मेरे चाहिये, बाझ पियारे तुझ ॥ ७ ॥
 जे वो एकै जांणियां, तौ जांण्यां सब जांण ।
 जे ओ एक न जांणियां, तो सबहीं जांण अजांण ॥ ८ ॥
 कबीर एक न जांणियां, तौ बहु जांण्यां क्या होइ ।
 एक तै सब होत है, सब तै एक न होइ ॥ ९ ॥
 जब लग भगति सकांमता, तब लग निर्फल सेव ।
 कहै कबीर वै क्यूं मिलै, निहकामी निज देव ॥ १० ॥
 आसा एक जु राम की, दूजी आस निरास ।
 पांथी मांहीं घर करै, ते भी मरै पियास ॥ ११ ॥

(७) ख-भिसति ।

(११) इसके आगे ख. में ये दोहे हैं—

आसा एक ज राम की, दूजी आस निवारि ।

आसा फिरि फिरि मारसी, ज्यूं चौपड़ि की सारि ॥ ११ ॥

आसा एक ज राम की, जुग जुग पुरवै आस ।

जै पाडल क्यों रे करै, बसैहिं जु चंदन पास ॥ १२ ॥

जे मन लागै एक सूं, तौ निरबाल्या जाइ ।
 तूरा दुह मुखि बाजणां, न्याइ तमाचे खाइ ॥ १२ ॥
 कबीर कलिजुग आइ करि, कीये बहुतज मोत ।
 जिन दिल बंधी एक सूं, ते सुखु सोवै नर्चात ॥ १३ ॥
 कबीर कूता राम का, मुतिया मेरा नाउं ।
 गलै राम की जेवड़ी, जित खैंचै तित जाउं ॥ १४ ॥
 तो तो करै त बाहुड़ौं, दुरि दुरि करै तौ जाउं
 ज्यूं हरि राखै त्यूं रहै, जो देवै सो खाउँ ॥ १५ ॥
 मन प्रतीति न प्रेम रस, नां इस तन में ढंग ।
 क्या जाणौं उस पीव सूं, कैसै रहसी रंग ॥ १६ ॥
 उस संग्रथ का दास हैं, कदे न होइ अकाज ।
 पतिव्रता नाँगी रहै, तौ उसही पुरिस कौं लाज ॥ १७ ॥
 घरि परमेशुर पाहुणां, सुणौं सनेही दास ॥
 षट रस भोजन भगति करि, ज्यूं कदे न छाड़ै पास ॥ १८ ॥ २०० ॥

(१२) चितावणी कौ अंग

कबीर नौबति आपणीं, दिन दस लेहु बजाइ ।
 ए पुर पटन ए गली, बहुरि न देखै आइ ॥ १ ॥
 जिनकै नौबति बजाती, मैंगल बँधते बारि ।
 एकै हरि के नाँव बिन, गए जन्म सब हारि ॥ २ ॥
 ढोल दमामा दुड़बड़ी, सहनाई संगि भेरि ।
 औसर चल्या बजाइ करि, है कोई राखै फेरि ॥ ३ ॥
 सातौं सबद जु बाजते, घरि घरि होते राग ।
 ते मंदिर खाली पड़े, वैसण लागे काग ॥ ४ ॥

कबीर थोड़ा जीवणा, माड़े बहुत मँड़ाण ।
 सबही ऊभा मेल्हि गया, राव रंक सुलितान ॥ ५ ॥
 इक दिन ऐसा होइगा, सब सँ पड़ै बिछोह ।
 राज राणा छत्रपति, सावधान किन होई ॥ ६ ॥
 कबीर पटण कारिवा, पंच चोर दस द्वार ।
 जम राणों गढ भेलिसी, सुमिरि लै करतार ॥ ७ ॥
 कबीर कहा गरबियौ, इस जीवन की आस ।
 केसू फूले दिवस चारि, खंखर भये पलास ॥ ८ ॥
 कबीर कहा गरबियौ, देही देखि सुरंग ।
 बोल्लडियाँ मिलिबौ नहीं, ज्यूं कांचली भुवंग ॥ ९ ॥
 कबीर कहा गरबियौ, ऊँचे देखि अवास ।
 काल्ह पर्युं भवै लोटणां, ऊपरि जामैं घास ॥ १० ॥
 कबीर कहा गरबियौ, चाँम पलेटे हड ।
 हँवर ऊपरि छत्र सिरि, ते भी देबा खड ॥ ११ ॥
 कबीर कहा गरबियौ, काल गहै कर केस ।
 नां जाणों कहाँ मारिसी, कै घरि कै परदेस ॥ १२ ॥
 यहु ऐसा संसार है, जैसा सँबल फूल ।
 दिन दम के व्यौहार कौं, भूठै रंगि न भूलि ॥ १३ ॥

(६) ख० में इसके आगे यह दोहा है—

ऊजड़ खेड़ै ठीकरी, घड़ि घड़ि गए कुँभार ।

रावण सरीखे चलि गए, लंका के सिकदार ॥ ७ ॥

(७) ख—जम...भेलिसी, बोल गले गोपाल ।

(१२) ख—कत मारसी ।

(१३) ख० में इसके आगे ये दोहे हैं—

मोति बिसारी बावरे, अचिरज कीया कौन ।

तन माटी में मिलि गया, ज्यूं आटे में लूण ॥ १४ ॥

जामण मरण बिचारि करि, कूड़े काम निवारि ।
 जिनि पंथुं तुफ चालणां, सोई पंथ सँवारि ॥ १४ ॥
 बिन रखवाले बाहिरा, चिड़ियै खाया खेत ।
 आधा प्रधा ऊबरै, चेति सकै तौ चेति ॥ १५ ॥
 हाड जलै ज्युं लकड़ी, केस जलै ज्युं घास ।
 सब तन जलता देखि करि, भया कबीर उदास ॥ १६ ॥
 कबीर मंदिर ढहि पड़्या, सँट भई सैवार ।
 कोई चेजारा चिणि गया, मिल्या न दूजी बार ॥ १७ ॥
 कबीर देवल ढहि पड़्या, ईंट भई सैवार ॥
 करि चिजारा सौं प्रीतिडो, ज्युं ढहै न दूजी बार ॥ १८ ॥
 कबीर मंदिर लाष का, जड़िया हीरै लालि ।
 दिवस चारि का पेषणां, बिनस जाइगा कालिह ॥ १९ ॥
 कबीर धूलि सकेलि करि, पुड़ो ज बांधो एह ।
 दिवस चारि का पेषणां, अंति षेह की षेह ॥ २० ॥

[१६, १७ नंबर के दोहे क० प्रति में २२, २३ नंबर पर हैं]

आजि कि कालिह कि पचे दिन, जंगल होइगा बास ।
 ऊपरि ऊपरि फिरहिंगे, ढेर चरंदे घास ॥ १८ ॥
 मरहिंगे मरि जाहिंगे, नांव न लेगा कोइ ।
 ऊजड़ जाइ बसाहिंगे, छाड़ि बसंती लोइ ॥ १९ ॥
 कबीर खेति किसान का, अगौं खाया भाड़ि ।
 खेत बिचारा क्या करै, जो खसम न करई बारे ॥ २० ॥

(१६) ख० में इसके आगे ये दोहे हैं—

मडा जलै लकड़ी जलै, जलै जलावणहार ।
 कैतिगहारे भी जलै, कासनि करै पुकार ॥ २३ ॥
 कबीर देवल हाड़ का, मारी तया बधाण ।
 खड हडतां पाया नहीं, देवल का सहनाण ॥ २४ ॥

(१७) ख—देवल ढहि ।

(२०) ख—धूलि समेटि ।

कबीर जे धंधै तौ धूलि, बिन धंधै धूलै नहीं ।
 ते नर बिनठे मूलि, जिनि धंधै मैं ध्याया नहीं ॥ २१ ॥
 कबीर सुपनै रैनै कै, ऊघड़ि आये नैन ।
 जीव पड़्या बहु लुटि मैं, जागै तौ लैण न दैण ॥ २२ ॥
 कबीर सुपनै रैनै कै, पारस जीय मैं छेक ।
 जे सोऊं तौ दोइ जणां, जे जागूं तौ एक ॥ २३ ॥
 कबीर इस संसार मैं, घणै मनिष मतिहीण ।
 रान नाम जाणै नहीं, आए टापा दीन ॥ २४ ॥
 कहा कीयौ हम आइ करि, कहा कहेंगे जाइ ।
 इत के भए न उत के, चाले मूल गँवाइ ॥ २५ ॥
 आया अणआया भया, जे बहुरता संसार ।
 पड़्या भुलावां गाफिलां, गये कुबुधी हारि ॥ २६ ॥
 कबीर हरि की भगति बिन, ध्रिग जीमण संसार ।
 धूवाँ केरा धौलहर, जात न लागै बार ॥ २७ ॥
 जिहि हरि की चोरी करी, गये राम गुण भूलि ।
 ते बिधना बागुल रचे, रहे अरध मुखि भूलि ॥ २८ ॥
 माटी मलणि कुँभार की, घणै सँहै सिरि लात ।
 इहि औसरि चेत्या नहीं, चूका अब की घात ॥ २९ ॥
 इहि औसरि चेत्या नहीं, पसु ज्युं पाली देह ।
 राम नाम जाण्या नहीं, अंति पड़ी मुख पेह ॥ ३० ॥

(२२) ख—बहु भूलि मैं ।

(२३) इसके आगे ख. में यह दोहा है—

कबीर इहै चितावणी, जिन संसारी जाइ ।

जे पहली सुख भोगिया, तिनका गुड ले खाइ ॥ ३० ॥

(२४) ख. में इसके आगे यह दोहा है—

पीपल रूनीं फूल बिन, फल बिन रूनी गाइ ।

एकां एकां माणसां, टापा दीन्हा आइ ॥ ३२ ॥

राम नाम जाण्यौं नहीं, लागी मोटी षोड़ि ।
 काया हाँडो काठ की , ना ऊँ चढै बहोड़ि ॥ ३१ ॥
 राम नाम जाण्या नहीं, बात बिनंठो मूल ।
 हरत इहाँ ही हारिया, परति पड़ो मुख धूलि ॥ ३२ ॥
 राम नाम जाण्यां नहीं, पाल्यो कटक कुटंब ।
 धंधा ही में मरि गया, बाहर हुई न बंब ॥ ३३ ॥
 मनिषा जनम दुलभ है, देह न बारं बार ।
 तरवर थै फल भुड़ि पड़या, बहुरि न लागै डार ॥ ३४ ॥
 कबीर हरि की भगति करि, तजि बिषिया रस चोज ।
 बार बार नहीं पाइए, मनिषा जन्म की मौज ॥ ३५ ॥
 कबीर यहु तन जात है, सकै तौ ठाहर लाइ ।
 कै सेवा करि साध की , कै गुण गोविंद के गाइ ॥ ३६ ॥
 कबीर यहु तन जात है, सकै तौ लेहु बहोड़ि ।
 नागो हाथूँ ते गये, जिनकै लाष करोड़ि ॥ ३७ ॥
 यहु तन काचा कुंभ है, चोट चहूँ दिसि खाइ ।
 एक राम के नाँव बिन, जदि तदि प्रलै जाइ ॥ ३८ ॥

(३२) ख० में इसके आगे ये दोहे हैं—

राम नाम जाण्यां नहीं, मेल्या मनहि बिसारि ।
 ते नर हाली बादरी, सदा पराए बारि ॥ ४२ ॥
 राम नाम जाण्यां नहीं, ता मुखि आनहि आन ।
 कै मूसा कै कातरा, खातां गया जनम ॥ ४३ ॥
 राम नाम जाण्यों नहीं, हूवा बहुत अकाज ।
 बूझा लौरे बापुड़ा, बड़ां बूटां की लाज ॥ ४४ ॥

(३५) ख० में इसके आगे यह दोहा है—

पाणीं ज्यौर तलाब का, दह दिसि गया बिलाइ ।
 यह सब यौही जायगा, सकै तो ठाहर लाइ ॥ ४८ ॥

(३६) ख—कै गोविंद का गुण गाइ ।

(३७) ख—नागो पाऊँ ।

यहु तन काचा कुंभ है, लियां फिरै था साथि ।
 ढबका लागे फूटि गया, कछू न आया हाथि ॥ ३८ ॥
 काँची कारी जिनि करै, दिन दिन बधै बियाधि ।
 राम कबीरै रुचि भई, याही ओषधि साधि ॥ ४० ॥
 कबीर अपने जीवतैं, ए दोइ बातैं धोइ ।
 लोभ बडाई कारणै, अछता मूल न खोइ ॥ ४१ ॥
 खंभा ऐक गइंद दोइ, क्यूं करि बंधिसि बारि ।
 मानि करै तौ पीव नहीं, पीव तौ मानि निवारि ॥ ४२ ॥
 दीन गँवाया दुनीं सौं, दुनो न चाली साथि ।
 पाइ कुहाड़ा मारिया, गाफिल अपणै हाथि ॥ ४३ ॥
 यहु तन तौ सब बन भया, करंम भए कुहाड़ि ।
 आप आप कूँ काटिहैं, कहै कबीर बिचारि ॥ ४४ ॥
 कुल खोयाँ कुल ऊबरै, कुल राख्याँ कुल जाइ ।
 राम निकुल कुल भेंटि लै, सब कुल रह्या समाइ ॥ ४५ ॥
 दुनियां के धोखै मुवा, चलै जु कुल की काणि ।
 तब कुल किसका लाजसी, जब ले धरया मसाणि ॥ ४६ ॥
 दुनियां भाँडा दुख का, भरी मुहांमुह भूष ।
 अदया अलह राम की, कुरहै ऊर्णा कूष ॥ ४७ ॥
 जिहि जेवड़ी जग बंधिया, तूँ जिनि बँधै कबार ।
 हँसी आटा लूण ज्यूं, सोना सँवाँ सरीर ॥ ४८ ॥

(३६) ख० में इसके आगे यह दोहा है—

यह तन काचा कुंभ है, माँहि किया ढिग बास ।

कबीर नैण निहारियाँ, तौ नहीं जीवण की आस ॥ ५२ ॥

(४६) ख—का कौ लाजसी ।

(४७) इसके आगे ख. में यह दोहा है—

दुनियाँ के मैं कुछ नहीं, मेरे दुनी अकथ ।

साहिब दरि देखौं खड़ा, सब दुनिया दोजग जंत ॥ ६१ ॥

कहत सुनत जग जात है, विषै न सूझै काल ।
 कबीर प्यालै प्रेम कै, भरि भरि पिवै रसाल ॥ ४९ ॥
 कबीर हृद के जीव सूं, हित करि मुखां न बोलि ।
 जे लागे बेहद सूं, तिन सूं अंतर खोलि ॥ ५० ॥
 कबीर केवल राम की, तूं जिनि छाड़ै ओट ।
 घण अहरणि बिचि लोह ज्यूं, घणीं सदै सिरि चोट ॥ ५१ ॥
 कबीर केवल राम कहि, सुध गरीबी भालि ।
 कूड़ बड़ाई बूड़सी, भारी पड़सी काल्हि ॥ ५२ ॥
 काया मंजन क्या करै, कपड़ धोइम धोइ ।
 उजल हूवा न छूटिए, सुख नोदड़ों न सोइ ॥ ५३ ॥
 उजल कपड़ा पहरि करि, पान सुपारी खाहिं ।
 एकै हरि का नाँव बिन, बांधे जमपुरि जाहिं ॥ ५४ ॥
 तेरा संगी को नहीं, सब स्वारथ बंधी लोइ ।
 मनि परतीति न ऊपजै, जीव बेसास न होइ ॥ ५५ ॥
 मांइ बिड़ाणीं बाप बिड़, हम भी मंझि बिड़ांह ।
 दरिया केरी नाव ज्यूं, संजोगे मिलियांह ॥ ५६ ॥
 इत प्रघर उत घर, बणजण आये हाट ।
 करम किराणां बेचि करि, उठि ज लागे बाट ॥ ५७ ॥

(५०) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

कबीर साषत की सभा, तूं मत बैठे जाइ ।

एके बाड़ै क्यूं बड़ै, रोऊ गदहड़ा गाइ ॥ ६१ ॥

(५४) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

थली चरतै त्रिघ लै, बीव्या एकज सौण ।

हम तौ पंथी पंथ सिरि, हरया चरैगा कौण ॥ ७० ॥

(५७) ख—

एथि परिघरि उथि घरि, जेवण आए हाट ।

नान्हा काती चित दे, महँगे मोलि बिकाइ ।
 गाहक राजा राम है, और न नेड़ा आइ ॥ ५८ ॥
 डागल उपरि दौड़णां, सुख नौदड़ी न सोइ ।
 पुनै पाये दौड़डे, ओछी ठौर न खोइ ॥ ५९ ॥
 मैं मैं बड़ी बलाइ है, सकै तौ निकसी भाजि ।
 कब लग राखौं हे सखी, रुई पलेटी आगि ॥ ६० ॥
 मैं मैं मेरी जिनि करै, मेरी मूल बिनास ।
 मेरी पग का पैषड़ा, मेरी गल की पास ॥ ६१ ॥
 कबीर नाव जरजरी, कूड़े खेवणहार ।
 हलके हलके तिरि गये, बूड़े तिनि सिर भार ॥ ६२ ॥ २६२ ॥

(१६) ख—पुन पाया देहड़ी, वोछी ठौर न खाइ ॥

(१६) ख० में इसके आगे यह दोहा है—

ज्युं कोली पेटां बुणै, बुणतां आवै बोड़ि ।

ऐसा लेखा मीच का, कछु दौड़ि सकै तो दौड़ि ॥ ७६ ॥

(६१) ख० में इसके आगे ये दोहे हैं—

मेर तेर की जिवड़ी, बसि बंध्या संसार ।

कहाँ सकुणबा सुत कलित, दाम्नि बारंबार ॥ ७६ ॥

मेर तेर की रासड़ी, बलि बंध्या संसार ।

दास कबीरा जिमि बँधै, जाकै राम अधार ॥ ८२ ॥

कबीर नाँव जरजरी, भरी बिराणै भारि ।

खेवट सौं परचा नहीं, क्यों करि उतरै पारि ॥ ८३ ॥

(६२) ख० में इसके आगे यह दोहा है—

कबीर पगड़ा दूरि है, जिनकै बिचिहै राति ।

का जाणौं का होइगा, उगवै तै परभाति ॥ ८५ ॥

(१३) मन कौ अंग

मन कै मतै न चालिये, छाडि जीव की बांणि ।
 ताकू करे सूत ज्यूं, चलटि अपृठा आंणि ॥ १ ॥
 चिंता चिति निवारिये, फिरि बृभिये न कोइ ।
 इंद्रो पसर मिटाइये, सहजि मिलैगा सोइ ॥ २ ॥
 आसा का ईंधण करूं, मनसा करूं बिभूति ।
 जोगी फेरी फिल करौं, यौं बिननां वैं सुति ॥ ३ ॥
 कबीर सेरी सांकड़ी, चंचल मनवां चोर ।
 गुण गावै लैलीन होइ, कछू एक मन में और ॥ ४ ॥
 कबीर मारूं मन कूं, टूक टूक ह्वै जाइ ।
 बिष की क्यारी बोइ करि, लुणत कहा पछिताइ ॥ ५ ॥
 इस मन कौं बिसमल करौं दीठा करौं अदीठ ।
 जे सिर राखौं आपणां, तौ पर सिरिज अंगीठ ॥ ६ ॥
 मन जांणै सब बात, जाणत ही औगुण करै ।
 काहे की कुसलात, कर दीपक कूँवै पड़ै ॥ ७ ॥
 हिरदा भीतरि आरसी, मुख दंषणां न जाइ ।
 मुख तौ तौपरि देखिए, जे मन की दुविधा जाइ ॥ ८ ॥
 मन दीयां मन पाइए, मन बिन मन नहीं होइ ।
 मन उनमन उस अंड ज्यूं, अनल अकासां जोइ ॥ ९ ॥

(१) ख—केरा तार ज्यूं ।

(२) ख—पसर निवारिए ।

(८) ख. में इसके आगे ये दोहे हैं—

कबीर मन मृघा भया, खेत बिराना खाइ ।'

सूलां करि करि से किसी, जब खसम पहुँचे आइ ॥ १ ॥

मन को मन मिलता नहीं, तौ होता तन का भंग ।

अब ह्वै रहु काली कांवली, ज्यौ दूजा चढ़े न रंग ॥ १० ॥

मन गोरख मन गांविंदौ, मन हीं औघड़ होइ ।
 जे मन राखै जतन करि, तौ आपैं करता सोइ ॥ १० ॥
 एक ज दोसत हम किया, जिस गलि लाल कबाइ ।
 सब जग धोबी धोइ मरै, तौ भी रंग न जाय ॥ ११ ॥
 पांणों हों तै पातला, धूवां हों तै भीण ।
 पवना बेगि उतावला, सो दोसत कबोरै कीन्ह ॥ १२ ॥
 कबीर तुरी पलाणियां, चाबक लीया हाथि ।
 दिवस थकां साईं मिलों, पीछे पड़िहै राति ॥ १३ ॥
 मनवां तौ अधर बस्या, बहुतक भीणां होइ ।
 आलोकत सचुपाइया, कबहू न न्यारा सोइ ॥ १४ ॥
 मन न मारया मन करि, सकं न पंच प्रहारि ।
 सील साच सरधा नहीं, इंद्री अजहूं उधारि ॥ १५ ॥
 कबीर मन बिकरै पड़या, गया स्वाद कै साथि ।
 गलका खाया बरजतां, अब क्यूं आवै हाथि ॥ १६ ॥
 कबीर मन गाफिल भया, सुमिरण लागै नाहिं ।
 घणीं सहैगा सासनां, जम की दरगह माहिं ॥ १७ ॥
 कोटि कर्म पल में करै, यहु मन बिषिया स्वादि ।
 सतगुर सबद न मानई, जनम गँवाया बादि ॥ १८ ॥
 मैमंता मन मारि रे, घटहीं मांहैं घेरि ।
 जबहीं चालै पीठि दे, अंकुस दे दे फेरि ॥ १९ ॥
 मैमंता मन मारि रे, नान्हां करि करि पीसि ।
 तब सुख पावै सुंदरी, ब्रह्म भलकै सीसि ॥ २० ॥
 कागद केरी नाँव री, पांणी केरी गंग ।
 कहै कबीर कैसैं तिरुं, पंच कुसंगी संग ॥ २१ ॥

(१६) ग्व० मे इसके आगे यह दोहा है—

जै तन मांहै मन धरै, मन धरि निर्मल होइ ।

साहिब सौं सनमुख रहै, तौ फिर बालक होइ ॥ ५२ ॥

कबीर यह मन कत गया, जो मन होता कालिह ।
 डूंगरि बूठा मेह ज्यूं, गया निर्वाण चालि ॥ २२ ॥
 मृतक कूं धी जौं नहीं, मेरा मन बो है ।
 बाजै बाव बिकार की, भो मूवा जीवै ॥ २३ ॥
 काटी कूटी मछली, छींकै धरी चहोड़ि ।
 कोइ एक अघिर मन बस्या, दह में पड़ी बहोड़ि ॥ २४ ॥
 कबीर मन पंषी भया, बहुतक चढ़्या अकास ।
 उहां हों तै गिरि पड़्या, मन माया के पास ॥ २५ ॥
 भगति दुवारा संकड़ा, राई दसवै भाइ ।
 मन तौ मैंगल ह्वै रह्यो, क्यूं करि सकै समाइ ॥ २६ ॥
 करता था तौ क्यूं रह्या, अत्र करि क्यूं पछताइ ।
 बोवै पेड बंबूल का, अत्र कहां तैं खाइ ॥ २७ ॥
 काया देवल मन धजा, बिषै लहरि फहराइ ।
 मन चाल्यां देवल चलै, ताका सर्वस जाइ ॥ २८ ॥
 मनह मनोर्थ छाड़ि दे, तेरा किया न होइ ।
 पांशों में घोव नीकसै, तौ रूखा खाइ न कोइ ॥ २९ ॥
 काया कसूं कमाण ज्यूं, पंचतत्त करि बाण ।
 मारौं तौ मन मृग कौं, नहीं तौ मिथ्या जाण ॥ ३० ॥ २९२ ॥

(२४) इसके आगे ख० में ये दोहे हैं—

मूवा मन हम जीवत देख्या, जैसै मड़िहट भूत ।
 मूर्वा पीछे उठि उठि लागै, ऐसा मेरा पूत ॥ ४७ ॥
 मूर्वै कौंधी जौं नहीं, मन का कसा बिसास ।
 साधू तब लग डर करै, जब लग पंजर सास ॥ २८ ॥

(३०) इसके आगे ख० में यह दोहा है—

कबीर हरि दिवान कै क्यूंकर पावै दादि ।
 पहली बुरा कमाइ करि, पीछे करै फिलादि ॥ ३५ ॥

(१४) सूषिम मारग कौ अंग

कौण देस कहां आइया, कहु क्यूं जाणयां जाइ ।
 बहु मार्ग पावैं नहीं, भूलि पड़े इस मांहि ॥ १ ॥
 उत्तीर्थ कोइ न आवई, जाकूं बूझैं धाइ ।
 इतर्थ सवै पठाइये, भार लदाइ लदाइ ॥ २ ॥
 सबकूं बूझत मैं फिरौं, रहण कहै नहीं कोइ ।
 प्रोति न जोड़ी राम सूं, रहण कहां थै होइ ॥ ३ ॥
 चलौ चलौ सबको कहै, मोहि अँदेसा और ।
 साहिब सूं पर्चा नहीं, ए जांहिगे किस ठौर ॥ ४ ॥
 जाइवे कौं जागा नहीं, रहिबे कौं नहीं ठौर ।
 कहै कबीरा संत है, अविगति की गति और ॥ ५ ॥
 कबीर मारिग कठिन है, कोई न सकई जाइ ।
 गए ते बहुड़े नहीं, कुसल कहै को आइ ॥ ६ ॥
 जन कबीर का सिपर घर, वाट सलैली सैल ।
 पाव न टिकै पपीलका, लोगनि लादे बैल ॥ ७ ॥
 जहां न चींटी चढि सकै, राई ना ठहराइ ।
 मन पवन का गमि नहीं, तहां पहुँचे जाइ ॥ ८ ॥
 कबीर मारग अगम है, सब मुनिजन बैठे थाकि ।
 तहां कबीरा चलि गया, गहि सतगुर की साधि ॥ ९ ॥
 सुर नर थाके मुनि जनां, जहां न कोई जाइ ।
 मोटे भाग कबीर के, तहां रहे घर छाइ ॥ १० ॥ ३०२ ॥

(२) इसके आगे ख० में यह दोहा है—

कबीर संसा जीव मैं, कोइ न कहै समझाइ ।

नांना बांकी बोलता, सो कत गया बिलाइ ॥ ३ ॥

(१५) सूपिम जनम कौ अंग

कबीर सूपिम सुरति का, जीव न जांयै जाल ।
 कहै कबीरा दूरि करि, आतम अदिष्टि काल ॥ १ ॥
 प्राण पंड कौं तजि चलै, मूवा कहैं सब कोइ ।
 जीव छतां जांमैं मरै, सूपिम लखै न कोइ ॥ २ ॥ ३०४ ।

(१६) माया कौ अंग

जग हटवाड़ा स्वाद ठग, माया बेसां लाइ ।
 रामचरन नीकां गही, जिनि जाइ जनम ठगाइ ॥ १ ॥
 कबीर माया पापणीं, फंध ले बैठी हाटि ।
 सब जग तौ फंधै पड़्या, गया कबीरा काटि ॥ २ ॥
 कबीर माया पापणीं, लालै लाया लोग ।
 पूरी किनहूँ न भोगई, इनका इहै बिजोग ॥ ३ ॥
 कबीर माया पापणीं, हरि सूं करै हराम ।
 मुखि कड़ियाली कुमति की, कहण न देई राम ॥ ४ ॥

(१५-२) इसके आगे ये दोहे ख० में हैं—

कबीर अंतहकरन मन, करन मनोरथ मांहि ।
 उपजित उतपति जांयिण, बिनसै जब बिसरांहि ॥ ३ ॥
 कबीर संसा दूरि करि, जांमण मरन भरम ।
 पंच तत्त तत्तहि मिलै, सुनि समाना मन ॥ ४ ॥

(१६-१) ख० में इसके आगे यह दोहा है—

कबीर जिभ्या स्वाद ते क्युं पल में ले काम ।
 अंगि अविद्या ऊपजै, जाइ हिरदा में राम ॥ २ ॥

जांघों जे हरि कौ भजौ, मो मनि मोटी आस ।
 हरि बिचि घालै अंतरा, माया बड़ी बिसास ॥ ५ ॥
 कबीर माया मोहनी, मोहे जाण सुजाण ।
 भागां हीं छूटै नहीं, भरि भरि मारै बाण ॥ ६ ॥
 कबीर माया मोहनी, जैसी मीठी खाँड ।
 सतगुर की कृपा भई, नहीं तौ करती भाँड ॥ ७ ॥
 कबीर माया मोहनी, सब जग घाल्या घांणि ।
 कोइ एक जन ऊबरै, जिनि तोड़ी कुल की कांणि ॥ ८ ॥
 कबीर माया मोहनी, माँगी मिलै न हाथि ।
 मनह बतारी भूठ करि, तब लागी डोलै साथि ॥ ९ ॥
 माया दासी संत की, ऊँची देइ असीस ।
 बिलसी अरु लातैं छड़ी, सुमरि सुमरि जगदीस ॥ १० ॥
 माया मुई न मन मुवा, मरि मरि गया सरीर ।
 आसा त्रिष्णां नां मुई, यौं कहि गया कबीर ॥ ११ ॥
 आसा जीवै जग मरै, लोग मरे मरि जाइ ।
 सोइ मूवे धन संचते, सो उवरे जे खाइ ॥ १२ ॥
 कबीर सो धन संचिये, जो आगैं कूं होइ ।
 सीस चढायें पोटली, ले जात न देख्या कोइ ॥ १३ ॥
 त्रिया त्रिष्णां पापणीं, तासूं प्रीति न जोड़ि ।
 पैड़ी चढि पाछां पड़ै, लागै मोटी खोड़ि ॥ १४ ॥
 त्रिष्णां सींचो नां बुझै, दिन दिन बधती जाइ ।
 जवासा के रूप ज्युं, घण मेहां कुमिलाइ ॥ १५ ॥

(५) ख०—हरि क्यों मिलौं ।

(११) ख०—यूं कहै दास कबीर ।

(१२) ख०—सोई बूड़े जुधन संचते ।

कबीर जग की को कहै, भौ जलि बूडै दास ।
 पारब्रह्म पति छाड़ि करि, करै मानि की आस ॥ १६ ॥
 माया तजी तौ का भया, मानि तजी नहीं जाइ ।
 मानि बड़े मुनियर गिले, मानि सबनि कौं खाइ ॥ १७ ॥
 रामहि थोड़ा जांणि करि, दुनियां भागैं दीन ।
 जीवां कौं राजा कहै, माया के आधीन ॥ १८ ॥
 रज बीरज की कली, तापरि साज्या रूप ।
 राम नाम बिन बूडिहै, कनक कामणीं कूप ॥ १९ ॥
 माया तरवर त्रिविध का, साखा दुख संताप ।
 सीतलता सुपिनै नहीं, फल फोकौ तनि ताप ॥ २० ॥
 कबीर माया डाकणीं, सब किसही कौं खाइ ।
 दांत उपाड़ौं पापणीं, जे संतौं नेड़ो जाइ ॥ २१ ॥
 नलनी सायर घर किया, दौं लागी बहुतेणि ।
 जलही माहैं जलि मुई, पुरब जनम लिषेणि ॥ २२ ॥
 कबीर गग की बाहली ती तरवानीं लांछि ।

राम नाम बिन बूडिहै, कनक कामणीं कूप ॥ १९ ॥

माया तरवर त्रिविध का साखा दुख संताप ।

सब आसण आसा तथां, निवर्तिकै को नाहिं ।
 निवर्तिकै निबहै नहीं, परवर्तिकै परपंच माहिं ॥ २७ ॥
 कबीर इस संसार का, भूठा माया मोह ।
 जिहि घरि जिता बंधावणां, तिहिं घरि तिता अँदोह ॥ २८ ॥
 माया हमसौं यों कछा, तू मति दे रे पृथि ।
 और हमारा हम बलू, गया कबीरा रुठि ॥ २९ ॥
 बुगली नीर बिटालिया, सायर चढ़ा कलंक ।
 और पँखेरू पी गए, हंस न बोवै चंच ॥ ३० ॥
 कबीर माया जिनि मिलै, सौ बरियां दे बांह ।
 नारद से मुनियर गिले, किसौ भरौसौ लाह ॥ ३१ ॥
 माया की भल जग जल्यो, कनक कांमिणीं लागि ।
 कहुं धौं किहि बिधि राखिये, रुई पलेटी आगि ॥ ३२ ॥ ३४६॥

(१७) चाणक कौ अंग

जीव बिलंब्या जीव सौं, अलष न लषिया जाइ ।
 गोबिंद मिलै न भल बुझै, रही बुझाई बुझाई ॥ १ ॥
 इही उदर कै कारणौं, जग जाँच्यौ निस जाम ।
 स्वामीं-पणौ जु सिरि चढ्यो, सरयो न एको काम ॥ २ ॥
 स्वामीं हूँणां सोहरा, दोढा हूँणां दास ।
 गाढर आणीं ऊन कूँ, बांधी चरै कपास ॥ ३ ॥
 स्वामीं हूँवा सीत का, पैका कार पचास ।
 राम नाम काँठै रखा, करै सिपाँ की आस ॥ ४ ॥
 कबीर तष्टा टोकणीं, लीए फिरै सुभाइ ।
 राम नाम चीन्है नहीं, पीतलि ही कै चाइ ॥ ५ ॥

(२९) ख०—गया कबीरा छूटि ।

(३२) ख०—रुई लपेटी आगि ।

कलि का स्वांमी लोभिया, पीतलि धरी षटाइ ।
 राज दुवारां यीं फिरै, ज्युं हरिदाई गाइ ॥ ६ ॥
 कलि का स्वांमी लोभिया, मनसा धरी बधाइ ।
 दैहि पईसा ब्याज कौं, लेखां करतां जाइ ॥ ७ ॥
 कबीर कलि खोटी भई, मुनियर मिलै न कोइ ।
 लालच लोभी मसकरा, तिनकूं आदर होइ ॥ ८ ॥
 चारिउं बेद पढ़ाइ करि, हरि सूं न लाया हेत ।
 बालि कबीरा ले गया, पंडित दूढै खेत ॥ ९ ॥
 बांझण गुरु जगत का, साधू का गुरु नाहिं ।
 उरभि पुरभि करि मरि रह्या, चारिउं बेदां माहिं ॥ १० ॥
 साषित सण का जेवड़ा, भीगां सूं कठठाइ ।
 होइ अपिर गुरु बाहिरा, बांध्या जमपुरि जाइ ॥ ११ ॥

(८) ख०—कबीर कलिजुग आइया ।

(९) ख०—चारिवेद पंडित पढ्या, हरि सेां किया न हेत ।

(१०) ख०—बांझण गुरु जगत का भर्म कर्म का पाइ ।

उलभि पुलभि करि मरि गया, चार्यों बेदा माहि ॥

(१०) इसके आगे ख० में ये दोहे हैं—

कलि का बांझण मसकरा, ताहि न दीजै दान ।

स्यों कुटुं नरकहि चलै, साथ चल्या जजमान ॥ ११ ॥

बांझण बूड़ा बापुड़ा, जेनेऊ कै जोरि ।

लख चौरासी मां गेलई, पारब्रह्म सों तोड़ि ॥ १२ ॥

(११) इसके आगे ख० में ये दोहे हैं—

कबीर साषत की सभा, तूं जिनि बैसे जाइ ।

एक दिबाई क्यूं बड़ै, रीक गदेहड़ा गाइ ॥ १४ ॥

साषत ते सूकर भला, सूचा राखे गाँब ।

बूड़ा साषत बापुड़ा, बैसि सभरणी नाँव ॥ १५ ॥

साषत बांझण जिनि मिलै, बैसनौ मिलौ चँडाल ।

अंक माल दै भेंटिऐ, मानूं मिले गोपाल ॥ १६ ॥

पाड़ोसी सू रूसणां, तिल तिल सुख की हाणि ।
 पंडित भए सरावगी, पांणी पीवें छाणि ॥ १२ ॥
 पंडित सेती कहि रह्या, भीतरि भेद्या नाहिं ।
 औरूं कौं परमोधतां, गया मुहरकां माहि ॥ १३ ॥
 चतुराई सूवै पढ़ी, सोई पंजर माहि ।
 फिरि प्रमोदै आन कौं, आपण समझै नाहिं ॥ १४ ॥
 रासि पराई राषतां, खाया घर का खेत ।
 औरों कौं प्रमोधतां, मुख में पड़िया रेत ॥ १५ ॥
 तारा मंडल बैसि करि, चंद बड़ाई खाइ ।
 उदै भया जब सूर का, स्यूं तारां छिपि जाइ ॥ १६ ॥
 देषण के सबको भले, जिसे सीत के कोट ।
 रवि कै उदै न दीसहीं, बँधै न जल की पोट ॥ १७ ॥
 तीरथ करि करि जग मुवा, डूँघै पांणी न्हाइ ।
 रांमहि रांम जपंतड़ां, काल घसीट्यां जाइ ॥ १८ ॥
 कासी काठैं घर करैं, पीवैं निर्मल नीर ।
 मुकति नहीं हरि नांव बिन, यौं कहै दास कबीर ॥ १९ ॥
 कबीर इस संसार कौं, समझाऊँ कै बार ।
 पूछ ज पकड़ै भेद की, उतरया चाहै पार ॥ २० ॥

(१३) ख०—कबीर व्यास कथा कहै, भीतरि भेदै नाहिं ।

(१५) इसके आगे ख० में यह दोहा है—

कबीर कहै पीर कूं, तूं समझावै सब कोइ ।

संसा पड़गा आपकौ, तौ और कहैं का होइ ॥ २१ ॥

(१७) इसके आगे ख० में यह दोहा है—

सुणत सुणावत दिन गए, उलझि न सुलभ्या मान ।

कहै कबीर चेल्यौ नहीं, अजहुं पहलौ दिन ॥ २४ ॥

(२०) इसके आगे ख० में यह दोहा है—

पद गायां मन हरषियां, साषी कह्यां आनंद ।

‘ सो तत नांव न जाणियां, गल में पड़ि गया कंध ॥ २८ ॥

कबीर मन फूल्या फिरै, करता हूँ मैं ध्रम ।

कोटि क्रम सिरि ले चल्या, चेत न देखै ध्रम ॥ २१ ॥

मोर तोर की जेवड़ी, बलि बंध्या संसार ।

कां सिरुइं, बासुत कलित, दाभण बार बार ॥ २२ ॥ ३६८ ॥

(१८) करणीं बिना कथणीं कौ अंग

कथणीं कथी तौ क्या भया, जे करणीं नां ठहराइ ।

कालबूत के कोट ज्युं, देशतहीं ठहिं जाइ ॥ १ ॥

जैसी मुख तैं नीकसै, तैसी चालै चाल ।

पारब्रह्म नेड़ा रहै, पल मैं करै निहाल ॥ २ ॥

जैसी मुष तैं नीकसै, तैसी चालै नाहिं ।

मानिष नहीं ते स्वान गति, बांध्या जमपुर जांहि ॥ ३ ॥

पद गाँएँ मन हरषिया, साषी कहाँ अनंद ।

सो तत नांव न जाणियां, गल मैं पड़िया फंध ॥ ४ ॥

करता दीसै कीरतन, ऊंचा करि करि तूंड ।

जाणै बूझै कुछ नहीं, यौहीं आधां रुंड ॥ ५ ॥ ३७३ ॥

(१८) कथणीं बिना करणीं कौ अंग

मैं जान्युं पढ़िबौ भलौ, पढ़िबा थैं भलौ जोग ।

राम नाम सुं प्रीति करि, भल भल नौदौ लोग ॥ १ ॥

कबीर पढ़िबा दूरि करि, पुस्तक देइ बहाइ ।

बांवन अघिर सोधि करि, ररै ममैं चित लाइ ॥ २ ॥

कबीर पढ़िबा दूरि करि, आथि पढ़्या संसार ।

पीड़ न उपजी प्रीति सुं, तौ क्युंकरि करै पुकार ॥ ३ ॥

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुवा, पंडित भया न कोइ ।
ऐकै अघिर पीव का, पढ़ै सुपंडित होइ ॥ ४ ॥ ३७७ ॥

(२०) कामीं नर कौ अंग

कामिणि काली नागणीं, तीन्यूं लोक मँभारि ।
राम सनेही ऊबरे, बिषई खाये भारि ॥ १ ॥
कामिणि मीनों पाणि की, जे छेड़ौं तौ खाइ ।
जे हरि चरणां राचिया, तिनके निकटि न जाइ ॥ २ ॥
पर-नारी राता फिरै, चोरी बिढ़ता खाहिं ।
दिवस चारि सरसा रहै, अंति समूला जाहिं ॥ ३ ॥
पर-नारी पर-सुंदरी, विरला बंचै कोइ ।
खाता मीठी खाँड सी, अंति कालि बिष होइ ॥ ४ ॥
पर-नारी कै राचणै, औगुण है गुण नाहि ।
षार समंद में मँछला, कंता बहि बहि जाहिं ॥ ५ ॥
पर-नारी को राचणौ, जिसी लहसण की पाणि ।
पूणै बैसि रषाइए, परगट होइ दिवानि ॥ ६ ॥
नर नारी सब नरक है, जब लग देह सकाम ।
कहै कबीर ते राम के, जे सुमिरै निहकाम ॥ ७ ॥
नारी सेती नेह, बुधि बबेक सबहीं हरै ।
काइ गमावै देह, कारिज कोई नां सरै ॥ ८ ॥

(२०-४) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

जहाँ जलाई सुंदरी, तहाँ तूं जिनि जाइ कबार ।
भसमी है करि जासिसी, सो मैं सर्वां सरीर ॥ ५ ॥
नारी नाहीं माहरी, करै नैन की चोट ।
कोई एक हरिजन ऊबरै, पारब्रह्म की ओट ॥ ६ ॥

(६) क०—प्रगट होइ निदानि ।

नाना भोजन स्वाद सुख, नारी सेती रंग ।
 बेगि छाड़ि पछिताइगा, हूँ है मूरति भंग ॥ ९ ॥
 नारि नसावै तीनि सुख, जा नर पासै होइ ।
 भगति मुकति निज ग्यान में, पैसि न सकई कोइ ॥ १० ॥
 एक कनक अरु कांमनीं, बिष फल कीएउ पाइ ।
 देखै हीं थैं बिष चटै, खांये सुं मरि जाइ ॥ ११ ॥
 एक कनक अरु कांमनीं, दोऊ अगनि की भाल ।
 देखे हीं तन प्रजलै, परस्यां हूँ पैमाल ॥ १२ ॥
 कबीर भग की प्रीतड़ी, केते गए गडंत ।
 केते अजहूँ जाइसी, नरकि हसंत हसंत ॥ १३ ॥
 जोरु जूठणि जगत की, भले बुरे का बीच ।
 उत्तम ते अलगे रहैं, निकटि रहैं ते नीच ॥ १४ ॥
 नारी कुंड नरक का, बिरला थंभै बाग ।
 कोइ साधू जन ऊबरै, सब जग मूवा लाग ॥ १५ ॥
 सुंदरि थैं सूली भली, बिरला बंचै कोइ ।
 लोह निहाला अगनि में, जलि बलि कोइला होय ॥ १६ ॥
 अंधा नर चेतै नहीं, कटै न संसै सूल ।
 और गुनह हरि बकससी, कांमों डाल न मूल ॥ १७ ॥
 भगति बिगाड़ी कांमियां, इंद्रि करै स्वादि ।
 हीरा खोया हाथ थैं, जनम गँवाया बादि ॥ १८ ॥
 कार्मी अमीं न भावई, बिषई कौं ले सोधि ।
 कुबधि न जाई जीव की, भावै स्यंभ रहौ प्रमोधि ॥ १९ ॥
 बिषै बिलंबी आत्मां, ताका मजकण खाया सोधि ।
 ग्यांन अंकूर न ऊगई, भावै निज प्रमोधि ॥ २० ॥

विषै कर्म की कंचुली, पहरि हुआ नर नाग ।
 सिर फोड़ै सूझै नहीं, को आगिला अभाग ॥ २१ ॥
 कांमीं कदे न हरि भजै, जपै न केसौ जाप ।
 राम कह्यां थै जलि मरै, को पुरबला पाप ॥ २२ ॥
 कांमीं लज्या नां करै, मन मांहीं अहिलाद ।
 नींद न मांगै सांथरा, भूष न मांगै स्वाद ॥ २३ ॥
 नारि पराई आपणी, भुगत्या नरकहि जाइ ।
 आगि आगि सबरौ कहै, तामैं हाथ न बाहि ॥ २४ ॥
 कबोर कहता जात हौं, चेतै नहीं गँवार ।
 बैरागी गिरही कहा, कांमीं वार न पार ॥ २५ ॥
 ग्यांनों तौ नींढर भया, मांनै नाहीं संक ।
 इंद्री करे बसि पड़्या, भूँचै विषै निसंक ॥ २६ ॥
 ग्यांनों मूल गँवाइया, आपण भये करता ।
 तार्थें संसारी भला, मन में रहै डरता ॥ २७ ॥ ४०४ ॥

(२१) सहज कौ अंग

सहज सहज सबको कहै, सहज न चोन्है कोइ ।
 जिन्ह सहजै विषिया तजी, सहज कहीजै सोइ ॥ १ ॥

- (२२) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—
 राम कहता जे खिजै, कोढ़ी है गलि जाहि ।
 सूकर होइ करि औतरै, नांक बूँडतै खाहि ॥ २५ ॥
- (२३) इसके आगे ख० में यह दोहा है—
 कांमी थै कृतौ भलौ, खोलै एक जु काछ ।
 राम नाम जायै नहीं, बांबी जेही बाच ॥ २७ ॥
- (२७) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—
 कांम कांम सबको कहै, कांम न चीन्है कोइ ।
 जेती मन में कांमनां, कांम कहींजै सोइ ॥ ३२ ॥

सहज सहज सबको कहै, सहज न चीन्है कोइ ।
 पाँचू राखै परसतो, सहज कहींजै सोइ ॥ २ ॥
 सहजैँ सहजैँ सब गए, सुत बित कांमणि कांम ।
 एकमेक हूँ मिलि रखा, दासि कबीरा राम ॥ ३ ॥
 सहज सहज सबको कहै, सहज न चीन्है कोइ ।
 जिन्ह सहजैँ हरिजी मिलै, सहज कहींजै सोइ ॥ ४ ॥ ४०८ ॥

(२२) साच कौ ग्रंग

कबीर पूंजी साह की, तूँ जिनि खोवै ध्वार ।
 खरी बिगूचनि होइगी, लेखा देती बार ॥ १ ॥
 लेखा देणां सोहरा, जे दिल साँचा होइ ।
 उस चंगे दीवान मैं, पला न पकड़ै कोइ ॥ २ ॥
 कबीर चित चमकिया, किया पयाना दूरि ।
 काइथि कागद काढिया, तब दरिगह लेखा पुरि ॥ ३ ॥
 काइथि कागद काढिया, तब लेखै वार न पार ।
 जब लग सांस सरीर मैं, तब लग राम सँभार ॥ ४ ॥
 यहु सब भूठी बंदिगी, बरियां पंच निवाज ।
 साचै मारै भूठ पढि, काजी करै अकाज ॥ ५ ॥
 कबीर काजी स्वादि बसि, ब्रह्म हतै तब दोइ ।
 चढि मसीति एकै कहै, दरि क्यूँ साचा होइ ॥ ६ ॥
 काजी मुलां भ्रमियां, चल्या दुनों कै साथि ।
 दिल थै दीन बिसारिया, करद लई जब हाथि ॥ ७ ॥
 जोरी करि जिवहै करै, कहते हैं ज हलाल ।
 जब दफतर देखैगा दर्द, तब हूँगा कौण हवाल ॥ ८ ॥

जोरी कीयां जुलम है, मांगै न्याव खुदाइ ।
 खालिक हरि खूनी खड़ा, मार मुहे मुहिं खाइ ॥ ६ ॥
 साईं सेती चोरियां, चोरां सेती गुभ ।
 जाणैंगा रे जीवड़ा, मार पड़ैगी तुभ ॥ १० ॥
 सेष सबूरी बाहिरा, क्या हज काबै जाइ ।
 जिनकी दिल स्याबति नहीं, तिनकां कहां खुदाइ ॥ ११ ॥
 खूब खांड है खीचड़ी, माहि पड़ै टुक लूण ।
 पेड़ा रोटी खाइ करि, गला कटावै कौण ॥ १२ ॥
 पापो पूजा बैसि करि, भवै मांस मद दोइ ।
 तिनकी दृष्या मुक्ति नहीं, कोटि नरक फल होइ ॥ १३ ॥
 सकल वरण इकत्र है, सकति पूजि मिलि खाहि ।
 हरि दासनि की भ्रांति करि, केवल जमपुरि जाहि ॥ १४ ॥
 कबीर लज्या लोक की, सुमिरै नाहीं साच ।
 जानि बूझि कंचन तजै, काठा पकड़ै काच ॥ १५ ॥
 कबीर जिनि जिनि जाणियां, करता केवल सार ।
 सो प्राणों काहे चलै, भूठे जग की लार ॥ १६ ॥
 भूठे कौं भूठा मिलै, दृणां बधै सनेह ।
 भूठे कूं साचा मिलै, तब ही तूटै नेह ॥ १७ ॥ ४२५ ॥

(२३) भ्रम विधौंसण कौ अंग

पांहण केरा पूतला, करि पूजै करतार ।
 इही भरोसै जे रहे, ते बूडे काली धार ॥ १ ॥
 काजल केरी कोठरी, मसि के कर्म कपाट ।
 पांहनि बोई पृथमीं, पंडित पाड़ी बाट ॥ २ ॥

पांहन कूं का पूजिए, जे जनम न देई जाब ।
 आंधा नर आसामुषी, यौहीं खोवै आव ॥ ३ ॥
 हम भी पांहन पूजते, होते रन के रोम ।
 सतगुर की कृपा भई, डारया सिर थै' बोम ॥ ४ ॥
 जेती देषैं आत्मां, तेता सालिगरांम ।
 साधू प्रतषि देव हैं, नहीं पाथर सूं काम ॥ ५ ॥
 सेवैं सालिगरांम कूं, मन की भ्रांति न जाइ ।
 सीतलता सुपिनैं नहीं, दिन दिन अधकी लाइ ॥ ६ ॥
 सेवैं सालिगरांम कूं, माया सेती हेत ।
 बोढें काला कापड़ा, नांव धरावैं सेत ॥ ७ ॥
 जप तप दीसैं थोथरा, तीरथ व्रत बेसास ।
 सूवै सैं बल सेविया, यैं जग चल्या निरास ॥ ८ ॥
 तीरथ त सब बेलड़ी, सब जग मेल्या छाइ ।
 कबीर मूल निकंदिया, कौण हलाहल खाइ ॥ ९ ॥
 मन मथुरा दिल द्वारिका, काया कासी जांणि ।
 दसवां द्वारा देहुरा, तामैं जेति पिछांणि ॥ १० ॥
 कबीर दुनियां देहुरै, सीस नवांवण जाइ ।
 हिरदा भीतरि हरि बसै, तूं ताही सौं ल्यौ लाइ ॥ ११ ॥ ४३६ ॥

(३) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

पाथर ही का देहुरा, पाथर ही का देव ।

पूजणहारा अंधला, लागा खोटी सेव ॥ ४ ॥

कबीर गुड की गमि नहीं, पांहन दिया बनाइ ।

सिष सोधी बिन सेविया, पारि न पहुँच्या जाइ ॥ ५ ॥

४) ख०—होते जंगल के रोम ।

(२४) भेष कौ अंग

कर सेती माला जपै, हिरदै बहै डंडूल ।
 पग तौ पाला में गिल्या, भाजण लागी सुल ॥ १ ॥
 कर पकरै' अंगुरी गिनै, मन धावै चहुँ वोर ।
 जाहि फिरायां हरि मिलै, सो भया काठ की ठौर ॥ २ ॥
 माला पहरै मनमुषी, तायै कछू न होइ ।
 मन माला कौं फेरतां, जुग उजियारा सोइ ॥ ३ ॥
 माला पहरे मन मुषी, बहुतै' फिरै' अचेत ।
 गांगी रोलै बहि गया, हरि सूं नाहीं हेत ॥ ४ ॥
 कबीर माला काठ की, कहि समझावै तोहि ।
 मन न फिरावै आपणां, कहा फिरावै मोहि ॥ ५ ॥
 कबीर माला मन की, और सँसारी भेष ।
 माला पहरां हरि मिलै, तौ अरहट कै गलि देष ॥ ६ ॥
 माला पहरां कुछ नहीं, रुख मूवा इहि भारि ।
 बाहरि ढोल्या हांगलू, भीतरि भरी भँगारि ॥ ७ ॥
 माला पहरां कुछ नहीं, काती मन कै साथि ।
 जब लग हरि प्रगटै नहीं, तब लग पड़ता हाथि ॥ ८ ॥

(५) ख० प्रति में इसके आगे यह दोहा है—

कबीर माला काठ की मेवही मुगधि झुलाइ ।

सुमिरण की सोधी नहीं, जाणै डीगरि घाली जाइ ॥ ६ ॥

(६) इसके आगे ख० में यह दोहा है—

माला फेरत जुग भया, पाय न मन का फेर ।

कर का मनका छाड़ि दे, मन का मनका फेर ॥ ८ ॥

माला पहरयां कुछ नहीं, गांठि हिरदा की खोइ ।
 हरि चरनूं चित राखिये, तौ अमरापुर होइ ॥ ८ ॥
 माला पहरयां कुछ नहीं, भगति न आई हाथि ।
 माथौ मुंछ मुंडाई करि, चल्या जगत कै साथि ॥ १० ॥
 साईं सेंती साँच चलि, औरां सूं सुध भाइ ।
 भावै लंबे केस करि, भावै घुरड़ि मुंडाई ॥ ११ ॥
 केसों कहा बिगाड़िया, जे मूंडै सौ बार ।
 मन कौं काहे न मूंडिए, जामैं विषै विकार ॥ १२ ॥
 मन मैवासी मूंडि ले, केसों मूंडै कांइ ।
 जे कुछ किया सु मन किया, केसों कीया नांहि ॥ १३ ॥
 मूंड मुंडावत दिन गए, अजहूँ न मिलिया राम ।
 राम नाम कह्यु क्या करै, जे मन के औरै काम ॥ १४ ॥
 खांग पहरि सोरहा भया, खाया पीया धूँदि ।
 जिहि सेरी साधू नीकले, सो तौ मेलही मूँदि ॥ १५ ॥
 बैसनों भया तौ का भया, बूझा नहीं बबेक ।
 छापा तिलक बनाइ करि, दगध्या लोक अनेक ॥ १६ ॥
 तन कौं जोगी सब करै, मन कौं बिरला कोइ ।
 सब सिधि सहजै पाइए, जे मन जोगी होइ ॥ १७ ॥
 कबीर यहु तौ एक है, पड़दा दीया भेष ।
 भरम करम सब दूरि करि, सबहीं मांहिं अलेष ॥ १८ ॥

(६) ख० में इसके आगे यह दोहा है ।

माला पहरयां कुछ नहीं, बांहण भगत न जाण ।

ब्यांह सरांधां कारटां, उभू वैसे ताणि ॥ १२ ॥

(११) ख०—साधों सों सुध भाइ ।

(१५) ख०—जिहि सेरी साधू नीसरै, सो सेरी मेलही मूँदि ॥

भरम न भागा जीव का, अनंतहि धरिया भेष ।
 सतगुर परचै बाहिरा, अंतरि रह्या अलेष ॥ १८ ॥
 जगत जहंदम राचिया, भूठे कुल की लाज ।
 तन बिनसें कुल बिनसिहै, गद्यौ न रांम जिहाज ॥ २० ॥
 पष ले बूढी पृथमी, भूठी कुल की लार ।
 अलष बिसारयौ भेष मै, बूढ़े काली धार ॥ २१ ॥
 चतुराई हरि नां मिलै, ए बातां की बात ।
 एक निसप्रेही निरधार का, गाहक गोपीनाथ ॥ २२ ॥
 नवसत साजे कामनीं, तन मन रही सँजोइ ।
 पीव कै मनि भावै नहीं, पटम कीये कया होइ ॥ २३ ॥
 जब लग पीव परचा नहीं, कन्यां कँवारी जांशिं ।
 हथलेवा हैसै लिया, मुसकल पड़ी पिछांशिं ॥ २४ ॥
 कबोर हरि की भगति का, मन मै षरा उल्हास ।
 मैवासा भाजै नहीं, हूँण मतै निज दास ॥ २५ ॥
 मैवासा मोई किया, दुरिजन काढ़े दूरि ।
 राज पियारे रांम का, नगर बस्या भरिपुरि ॥ २६ ॥ ४६२ ॥

(२५) कुसंगति कौ अंग

निरमल बूंद अकास की, पड़ि गई भोमि बिकार ।
 मूल बिनंठा मानवी, बिन संगति भठछार ॥ १ ॥
 मूरिष संग न कीजिए, लोहा जलि न तिराइ ।
 कदली सीप भवंग मुषी, एक बूंद तिहुँ भाइ ॥ २ ॥
 हरिजन सेती रूसणां, संसारी सूं हेत ।
 ते नर कदे न नीपजै, ज्यूं कालर का खेत ॥ ३ ॥
 मारी मरुं कुसंग की, कला काँठै बेरि ।
 वो हालै वो चीरिये, साषित संग न बेरि ॥ ४ ॥

मेर नीसांणीं मीच की, कुसंगति ही काल ।
 कबीर कहै रे प्राणियां, बांणीं ब्रह्म सँभाल ॥ ५ ॥
 माषी गुड़ में गडि रही, पंष रही लपटाइ ।
 ताली पीटै सिरि धुनै, मोंठै बोई माइ ॥ ६ ॥ ✓
 ऊँचै कुल क्या जनमियां, जे करणीं ऊँच न होइ ।
 सोवन कलस सुरै भरया, साधूँ निद्या सोइ ॥ ७ ॥ ४६८ ॥

(२६) संगति कौ अंग

देखा देखी पाकड़ै, जाइ अपरचै छूटि ।
 बिरला कोई ठाहरै, सतगुर सांमों मूठि ॥ १ ॥
 देखा देखी भगति है, कदे न चढई रंग ।
 बिपति पड़यां यूँ छाड़सी, ज्युं कंचुली भवंग ॥ २ ॥
 करिए तौ करि जाणियं, सारीषा सूँ संग ।
 लोर लोर लोई थई, तऊ न छाड़ै रंग ॥ ३ ॥
 यहु मन दीजै तास कौँ, सुठि सेवग भल सोइ ।
 सिर ऊपरि आरास है, तऊ न दूजा होइ ॥ ४ ॥
 पांहण टांकि न तोलिए, हाडि न कीजै बेह ।
 माया राता मानवी, तिन सूँ किछा सनेह ॥ ५ ॥
 कबीर तासूं प्रीति करि, जो निरबाहै ओड़ि ।
 बनिता बिबधि न राचिये, देषत लागै षोड़ि ॥ ६ ॥
 कबीर तन पंषी भया, जहाँ मन तहाँ उड़ि जाइ ।
 जो जैसी संगति करै, सो तैसे फल खाइ ॥ ७ ॥

(१) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

कबीर केहनैँ क्या बणैँ, अणमिलता सौ संग ।

दीपक कै भावै नहीं, जलि जलि परै पतंग ॥ ६ ॥

(२६-४) ख०—तऊ न न्यारा होइ ।

काजल केरी कोठड़ी, तैसा यहु संसार ।

बलिहारी ता दास की, पै सिर निकसणहार ॥ ८० ॥ ४५७ ॥

(२७) असाध कौ अंग

कबीर भेष अतीत का, करतूति करै अपराध ।

बाहरि दोसै सऱध गति, माँहैं महा असाध ॥ १ ॥

उज्जल देखि न धोजिये, वग ज्युं माँहै ध्यान ।

धोरै बैठि चपेटसी, यूं ले बूढ़ै ग्यान ॥ २ ॥

जेता मोठा बोलणां, तेता साध न जाणि ।

पहली थाह दिखाइ करि, ऊँहै देसी आणि ॥ ३ ॥ ४८० ॥

(२८) साध कौ अंग

कबीर संगति साध की, कदे न निरफल होइ ।

चंदन होसी बावना, नीब न कहसी कोइ ॥ १ ॥

कबीर संगति साध की, बेगि करीजै जाइ ।

दुरमति दूरि गँवाइसी, देसी सुमति बताइ ॥ २ ॥

मथुरा जावै द्वारिका, भावै जावै जगनाथ ।

साध संगति हरि भगति बिन, कछू न आवै हाथ ॥ ३ ॥

मेरे संगी दोइ जणां, एक बैष्णों एक राम ।

वो है दाता मुक्ति का, वो सुमिरावै नाम ॥ ४ ॥

कबीर बन बन मैं फिरा, कारणि अपणै राम ।

राम सरीखे जन मिले, तिन सारे सब काम ॥ ५ ॥

(२७-३) ख०—तेता भगति न जाणि ।

(२८-४) ख०—सुमिरावै राम ।

कबीर सोई दिन भला, जा दिन संत मिलाहिं ।
 अंक भरे भरि भेंटिया, पाप सरीरौ जाहि ॥ ६ ॥ १
 कबीर चंदन का बिड़ा, बैठ्या आक पलास ।
 आप सरीखे करि लिए, जे होते उन पास ॥ ७ ॥
 कबीर खाई कोट की, पांणीं पिवै न कोइ ।
 जाइ मिलै जब गंग-में, तब सब गंगोदिक होइ ॥ ८ ॥
 जानि बूझि साचहिं तजै, करै भूठ सूं नेह ।
 ताकी संगति राम जी, सुपिनै हो जिनि देहु ॥ ९ ॥
 कबीर तास मिलाइ, जास हियाली तूं बसै ।
 नहीं तर बेगि उठाइ, नित का गंजन को सहै ॥ १० ॥
 केती लहरि समंद की, कत उपजै कत जाइ ।
 बलिहारी ता दास की, उलटी माहिं समाइ ॥ ११ ॥
 काजल केरी कोठड़ी, काजल ही का कोट ।
 बलिहारी ता दास की, जे रहै राम की ओट ॥ १२ ॥
 भगति हजारी कपड़ा, तामैं मल न समाइ ।
 साषित काली काँबली, भावै तहां बिछाइ ॥ १३ ॥ ४६३ ॥

(२८) साध साषीभूत कौ अंग

निरबैरी निह-कामता, साईं सेती नेह ।
 बिषिया सूं न्यारा रहै, संतनि का अंग एह ॥ १ ॥

(११) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

पंच बल धिया फिरि कड़ी, ऊझड़ ऊजड़ि जाइ ।
 बलिहारी ता दास की, बवकि अणावै ठांइ ॥ १२ ॥
 काजल केरी कोठड़ी, तैसा यहु संसार ।
 बलिहारी ता दास की, पैसि जु निकसणहार ॥ १३ ॥

संत न छाड़ै संतई, जे कोटिक मिलै असंत ।
 चँदन भुवंगा बेठिया, तड सीतलता न तजंत ॥ २ ॥
 कबीर हरि का भांवता, दूरै थैं दीसंत ।
 तन षोणां मन उनमनां, जग रूठड़ा फिरंत ॥ ३ ॥
 कबीर हरि का भांवता, भीणां पंजर तास ।
 रैणि न आवै नोंदड़ी, अंगि न चढ़ई मास ॥ ४ ॥
 अणरता सुख सोवणां, रातै नोंद न आइ ।
 ज्यूं जल दुटै मंछली, यूं बेलंत बिहाइ ॥ ५ ॥
 जिन्य कुछ जाण्यां नहीं, तिन्ह सुख नोंदड़ी बिहाइ ।
 मैर अबूभी वूझिया, पूरी पड़ी बलाइ ॥ ६ ॥
 जाण भगत का नित मरण, अण-जाणै का राज ।
 सर अपसर समझै नहीं, पेट भरण सूं काज ॥ ७ ॥
 जिहि घटि जाण बिनाण है, तिहिं घटि आवटणां घणां ।
 बिन षंडै संग्राम है, नित उठि मन सौं भूभणां ॥ ८ ॥
 राम बियोगी तन विकल, ताहि न चीन्है कोइ ।
 तंबोली के पान ज्यूं, दिन दिन पीला होइ ॥ ९ ॥
 पीलक दौड़ी सांइयां, लोग कहै पिड रोग ।
 छानै लंघण नित करै, राम पियारे जोग ॥ १० ॥
 काम मिलावै राम कूं, जे कोई जाणै राषि ।
 कबीर बिचारा क्या करै, जाकी सुखदेव बोलै साषि ॥ ११ ॥
 कामणि अंग विरकत भया, रत भया हरि नांइ ।
 साषी गोरखनाथ ज्यूं, अमर भये कलि मांहि ॥ १२ ॥

(४) ख०—अंगनि बाड़ै घास ।

(५) ख०—तलफत रैण बिहाइ ।

(१२) ख०—सिध भए कलि मांहि ।

जदि बिषै पियारी प्रीति सूं, तब अंतरि हरि नाहिं ।
 जब अंतर हरि जी बसै, तब विषिया सूं चित नाहिं ॥ १३ ॥
 जिहिं घट मैं संसौ बसै, तिहिं घटि रांम न जोइ ।
 रांम सनेही दास बिचि, तिणां न संचर होइ ॥ १४ ॥
 स्वारथ को सबको सगा, जग सगलाही जाणि ।
 बिन स्वारथ आदर करै, सो हरि की प्रीति पिछांणि ॥ १५ ॥
 जिहि हिरदै हरि आइया, सो क्यूं छांन होइ ।
 जतन जतन करि दाविये, तऊ उजाला सोइ ॥ १६ ॥
 फाटै दीदै मैं फिरौं, नजरि न आवै कोइ ।
 जिहि घटि मेरा साइंयां, सो क्यूं छांन होइ ॥ १७ ॥
 सब घटि मेरा साइंयां, सूनीं सेज न कोइ ।
 भाग तिन्हौं का हे सखी, जिहि घटि परगट होइ ॥ १८ ॥
 पावक रूपी रांम है, घटि घटि रह्या समाइ ।
 चित चकमक लागै नहीं, तार्थे धूवां ह्वै ह्वै जाइ ॥ १९ ॥
 कबीर खालिक जागिया, और न जागै कोइ ।
 कै जागै विषई विष भरया, कै दास बंदगी होइ ॥ २० ॥
 कबीर चाल्या जाइ था, आगैं मिल्या खुदाइ ।
 मीरां मुझ सौं यौं कह्या, किनि फुरमाई गाइ ॥ २१ ॥ ५१४ ॥

(३०) साध महिमां कौ अंग

चंदन की कुटकी भली, नां बंबूर की अबरंड ।
 बैशनौं की छपरो भली, नां साषत का बड गांड ॥ १ ॥
 पुरपाटण सूबस बसै, आनंद ठायें ठाई ।
 रांम सनेही बाहिरा, ऊजड़ मेरे भाइ ॥ २ ॥

जिहिं घरि साध न पूजिये, हरि की सेवा नाहि ।
 ते घर मड़हट सारथे, भूत बसै तिन माहिं ॥ ३ ॥
 है गै गँवर सघन घन, छत्र धजा फरराइ ।
 ता सुख थै भिष्या भली, हरि सुमिरत दिन जाइ ॥ ४ ॥
 है गै गँवर सघन घन, छत्रपती की नारि ।
 तास पटंतर नां तुलै, हरिजन की पनिहारि ॥ ५ ॥
 क्यूं नृप नारी नींदयं, क्यूं पनिहारी कौं मान ।
 वा मांग संवारै पीव कौं, वा नित उठि सुमिरै राम ॥ ६ ॥
 कबीर धनि ते सुंदरी, जिनि जाया बैसनौं पूत ।
 राम सुमरि निरभै हुवा, सब जग गया अऊत ॥ ७ ॥
 कबीर कुल तौ सो भला, जिहि कुल उपजै दास ।
 जिहि कुल दास न ऊपजै, सो कुल आक पलास ॥ ८ ॥
 साधत बांभण मति मिलै, बैसनौं मिलै चंडाल ।
 अंक माल दे भेटियं, मानौं मिले गोपाल ॥ ९ ॥
 राम जपत दालिद भला, टूटी घर की छांनि ।
 ऊँचे मंदिर जालि दे, जहां भगति न सारंगपांनि ॥ १० ॥
 कबीर भया है केतकी, भवर भये सब दास ।
 जहां जहां भगति कबार की, तहां तहां राम निवास ॥ ११ ॥ ५२५ ॥

(३१) मधि कौ अंग

कबीर मधि अंग जेको रहै, तौ तिरत न लागै बार ।
 दुहु दुहु अंग सूं लागि करि, डूबत है संसार ॥ १ ॥
 कबीर दुबिधा दूरि करि, एक अंग है लागि ।
 यहु सीतल बहु तपति है, दोऊ कहिये आगि ॥ २ ॥

(६) 'वा मांग' या 'वामांग' दोनों पाठ हो सकता है ।

अनल अकांसां घर किया, मधि निरंतर बास ।
 बसुधा व्यौम बिरकत रहै, बिनठा हर बिसवास ॥ ३ ॥
 बासुरि गमि न रैणि गमि, नां सुपनैं तरगंम ।
 कबीर तहां बिलंबिया, जहां छांहड़ी न घंम ॥ ४ ॥
 जिहि पैं डै पंडित गए, दुनियां परी बहोर ।
 औघट घाटी गुर कही, तिहिं चढ़ि रह्या कबीर ॥ ५ ॥
 अगनृकथै हूँ रह्या, सतगुर के प्रसादि ।
 चरन कवँल की मौज मै, रहिस्थूँ अंतरि आदि ॥ ६ ॥
 हिंदू मूये रांम कहि, मुसलमान खुदाइ ।
 कहै कबीर सो जीवता, दुह मै कदे न जाइ ॥ ७ ॥
 दुखिया मूवा दुख कौं, सुखिया सुख कौं भूरि ।
 सदा अनंदी रांम के, जिनि सुख दुख मेलहे दूरि ॥ ८ ॥
 कबीर हरदी पीयरी, चूना ऊजल भाइ ।
 रांम सनेही यूँ मिले, दून्यूँ बरन गँवाइ ॥ ९ ॥
 काबा फिर कासी भया, रांम भया रहीम ।
 मोट चून मैदा भया, बैठि कबीरा जीम ॥ १० ॥
 धरती अरु असमान बिचि, दोइ तूँवड़ा अबध ।
 षट दरसन संसै पढ़्या, अरु चौरासी सिध ॥ ११ ॥ ५३६ ॥

(३२) सारग्राही कौ अंग

पीर रूप हरि नांव है, नीर आन व्यौहार ।
 हंस रूप कोई साध है, तत का जानण-हार ॥ १ ॥

(५) ख०—दुनियां गई बहीर । औघट घाटी नियरा ।

(१) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

सार-संग्रह सूय ज्यूँ, त्यागै फटकि असार ।

कबीर डरि हरि नांव ले, पसरै नहीं बिकार ॥ २ ॥

कबीर साधत को नहीं, सबै बैशनों जांणि ।
 जा मुखि रांम न उचरै, ताही तन की हांणि ॥ २ ॥
 कबीर औगुंण नां गहै, गुंण हो कौं ले बीनि ।
 घट घट महु के मधुप ज्युं, पर-आत्म ले चीन्हि ॥ ३ ॥
 बसुधा बन बहु भांति है, फूल्यौ फल्यौ अगाध ।
 मिष्ट सुवास कबीर गहि, बिषम कहै किहि साध ॥ ४ ॥ ५४० ॥

(३३) बिचार कौ अंग

रांम नांम सब को कहै, कहिबे बहुत बिचार ।
 सोई रांम सती कहै, सोई कौतिग-हार ॥ १ ॥
 आगि कहां दाभै नहीं, जे नही चंपै पाइ ।
 जब लग भेद न जांणिये, रांम कहा तौ काइ ॥ २ ॥
 कबीर सोचि विचारिया, दूजा कोई नाहिं ।
 आपा पर जब चीन्हियां, तब उलटि समाना माहिं ॥ ३ ॥
 कबीर पांणी केरा पूतला, राख्या पवन सँवारि ।
 नानां बांणी बोलिया, जोति धरी करतारि ॥ ४ ॥
 नौ मण सूत अलूभिया, कबीर घर घर बारि ।
 तिति सुलभाया बापुड़े, जिनि जाणौं भगति मुरारि ॥ ५ ॥
 आधी साषी सिरि कटै, जोर बिचारी जाइ ।
 मनि परतीति न ऊपजै, तौ राति दिवस मिलि गाइ ॥ ६ ॥

(३२-४) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

कबीर सब घटि आत्मां, सिरजी सिरजनहार ।

रांम कहै सो रांम में, रमिता ब्रह्म बिचारि ॥ १ ॥

तत तिलक तिहुँ लोक में, रांम नाम निजि सार ।

जन कबीर मसतिकि देया, सोभा अधिक अपार ॥ ६ ॥

(६) ख०—भरि गाइ ।

सोई अघिर सोई बैयन, जन जू जू वाचवंत ।
 कोई एक मेलै लवणि, अमीं रसांइण हुंत ॥ ७ ॥
 हरि मोत्यां की माल है, पोई काचै तागि ।
 जतन करी भंटा घंणां, टूटैगी कहूँ लागि ॥ ८ ॥
 मन नहीं छाड़ै बिषै, बिषै न छाड़ै मन को ।
 इनकों इहै सुभाव, पूरि लागी जुग जन को ॥
 खंडित मूल बिनास, कहौ किंम विगतह कीजै ।
 ज्युं जल मैं प्रतिव्यंभ, त्यूं सकल रांमहिं जांणीजै ॥
 सो मन सो तन सो बिषै, सो त्रिभवन-पति कहूँ कस ।
 कहै कबीर ब्यंभ नरा, ज्युं जल पूरया सकल रस ॥ ९ ॥ ५४९ ॥

(३४) उपदेस कौ अंग

हरि जी यहै बिचारिया, साषो कहौ कबीर ।
 भौसागर मैं जीव हैं, जे कोई पकड़ै तीर ॥ १ ॥
 कली काल ततकाल है, बुरा करौ जिनि कोई ।
 अनबावैं लोहा दांहिणैं, बोवै सु लुणतां होइ ॥ २ ॥
 कबीर संसा जीव मैं, कोई न कहै समझाइ ।
 बिधि बिधि बांणी बोलता, सो कत गया बिलाइ ॥ ३ ॥

(७) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

कबीर भूला दंग मैं, लोग कहैं यहु भूल ।

कै रमइयौ बाट बताइसी, कै भूलत भूलै भूल ॥ ८ ॥

(२) ख०—बुरा न करियो कोई ।

इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

जीवन को समझै नहीं, मुवा न कहै सँदेस

जाको तन मन सौं परचा नहीं, ताको कौण धरम उपदेश ॥ ३ ॥

(३) ख०—माना बांणी बोलता ।

कबीर संसा दूरि करि, जांमण मरण भरंम ।
 पंचतत तत्तहि मिले, सुरति समाना मन ॥ ४ ॥
 मिही तौ च्यंता घणीं, बैरागी तौ भीष ।
 दुहु कात्यां बिचि जीव है, दौ हनै संतौ सीष ॥ ५ ॥
 बैरागी बिरकत भला, गिरहीं चित्त उदार ।
 दुहुं चूकां रीता पढ़ै, ताकूं वार न पार ॥ ६ ॥
 जैसी डपजै पेड सुं, तैसी निबहै ओरि ।
 पैका पैका जोड़तां, जुड़िसी लाष करोड़ि ॥ ७ ॥
 कबीर हरि के नांव सूं, प्रीति रहै इकतार ।
 तौ मुख तै मोती भड़ै, हीरे अंत न पार ॥ ८ ॥
 ऐसी बांणी बोलिये, मन का आपा खोइ ।
 अपना तन सीतल करै, औरन कौं सुख होइ ॥ ९ ॥
 कोइ एक राखै सावधान, चेतनि पहरै जागि ।
 बस्तन वासन सूं खिसै, चोर न सकई लागि ॥ १० ॥ ५५-६ ॥

(३५) बेसास कौ अंग

जिनि नर हरि जठरांह, उदिकंथै पंड प्रगट कियौ ।
 सिरजे श्रवण कर चरन, जीव जीभ मुख तास दीयौ ॥
 उरध पाव अरध सीस, बीस पषां इम रषियौ ।
 अंन पान जहां जरै, तहां तै अनल न चषियो ॥
 इहिं भांति भयानक उद्र मै, उद्र न कबहूं छंछरै ।
 कृसन कृपाल कबीर कहि, इम प्रतिपालन क्यों करै ॥ १ ॥
 भूखा भूखा क्या करै, कहा सुनावै लोग ।
 भांडा घड़ि जिनि मु दिया, सोई पूरण जोग ॥ २ ॥

रचनहार कूं चीन्हि लै, खैबे कूं कहा रोइ ।
 दिल मंदिर में पैसि करि, ताणि पछेवड़ा सोइ ॥ ३ ॥
 राम नाम करि बोहडा, बांही बीज अघाइ ।
 अंति कालि सूका पड़ै, तौ निरफल कदे न जाइ ॥ ४ ॥
 च्यंतामणि मन में बसै, सोई चित में आंणि ।
 बिन च्यंता च्यंता करै, इहै प्रभू की बांणि ॥ ५ ॥
 कबीर का तूं चिंतवै, का तेरा च्यंत्या होइ ।
 अण-च्यंत्या हरिजी करै, जो तोहि च्यंत न होइ ॥ ६ ॥
 करम करीमां लिखि रह्या, अब कछू लिख्या न जाइ ।
 मासा घटै न तिल बधै, जौ कोटिक करै उपाइ ॥ ७ ॥
 जाकौ जेता निरमया, ताकौं तेता होइ ।
 रंती घटै न तिल बधै, जौ सिर कूटै कोइ ॥ ८ ॥
 च्यंता न करि अच्यंत रहु, साईं है संग्रथ ।
 पसु पंषेरू जीव जंत, तिनकी गांठि किसा ग्रंथ ॥ ९ ॥
 संत न बांधै गांठड़ी, पेट समाता लेइ ।
 साईं सूं सनमुष रहै, जहां मांगै तहां देइ ॥ १० ॥
 राम नाम सूं दिल मिली, जन हम पड़ी विराइ ।
 मोहि भरोसा इष्ट का, बंदा नरकि न जाइ ॥ ११ ॥
 कबीर तूं काहे डरै, सिर परि हरि का हाथ ।
 हस्ती चढ़ि नहीं डोलिये, कूकर भुसैं जु लाष ॥ १२ ॥

(८) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

करीम कबीर जु विह लिख्या, नरसिर भाग अभाग ।

जेहूं च्यंता चिंतवै, तऊ स आगैं आग ॥ १० ॥

(१२) ख०—सिर परि सिरजणहार । हस्ती चढ़ि क्या डोलिष । भुसैं हजार ।

(१२) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

मोठा खाण मधूकरी, भांति भांति कौ नाज ।
 दावा किसही का नहीं, बिन विलाइति बड़ राज ॥ १३ ॥
 मानि महातम प्रेम रस, गरवा तण गुण नेह ।
 ऐ सबहीं अह लागया, जवहीं कह्या कुछ देह ॥ १४ ॥
 मांगण मरण समान है, बिरला बंचै कोइ ।
 कहै कबीर रघुनाथ सुं, मतिर मंगावै मोहि ॥ १५ ॥
 पांडल पंजर मन भवर, अरथ अनूपम बास ।
 राम नाम सींच्या अंमी, फल लागा बेसास ॥ १६ ॥
 मेर मिटी मुकता भया, पाया ब्रह्म विसास ।
 अब मेरे दूजा को नहीं, एक तुम्हारी आस ॥ १७ ॥
 जाकी दिल में हरि बसै, सो नर कलपै कांइ ।
 एकै लहरि समंद की, दुख दलिद्र सब जाइ ॥ १८ ॥
 पद गांये लैलीन हूँ, कटी न संसै पास ।
 सबै पिछोड़े थोथरं, एक बिनां बेसास ॥ १९ ॥
 गांवण हीं मैं रोज है, रोवण हीं मैं राग ।
 इक बैरागी ग्रिह मैं, इक गृहीं मैं बैराग ॥ २० ॥
 गाया तिनि पाया नहीं, अण-गायां थैं दूरि ।
 जिनि गाया विसवास सुं, तिन राम रह्या भरपूरि ॥ २१ ॥ ५८० ॥

हसतों चढ़िया ज्ञान कै, सहज दुलीचा डारि ।

स्वान-रूप संसार है, पड़्या मुसौ ऋषि मारि ॥ १२ ॥

(१२) ख०—जगनांथ सों ।

(१६) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

कबीर मरैं पै मांगौ नहीं, अपणै तन कै काज ।

परमारथ कै कारणै, मोहि मांगत न आवै लाज ॥ २० ॥

भगत भरोसै एक कै, निधरक नीची दीठि ।

तिनकूं करम न लागसी, राम ठकोरी पीठि ॥ २१ ॥

(३६) पीव पिछांणन कौ अंग

संपटि मांहिं समाइया, सो साहिब नहों होइ ।
 सकल मांड मैं रमि रह्या, साहिब कहिए सोइ ॥ १ ॥
 रहै निराला मांड थैं, सकल मांड ता मांहिं ।
 कबीर सेवै तास कूं, दूजा कोई नांहिं ॥ २ ॥
 भोलै भूली खसम कै, बहुत किया बिभचार ।
 सतगुर गुरु बताइया, पूरिबला भरतार ॥ ३ ॥
 जाकै मुह माथा नहीं, नहीं रूपक रूप ।
 पुहुप बास थैं पतला, ऐसा तत अनूप ॥ ४ ॥ ५८४ ॥

(३७) विर्कताई कौ अंग

मेरै मन मैं पड़ि गई, ऐसी एक दरार ।
 फाटा फटक पषांण ज्यूं, मिल्या न दूजी बार ॥ १ ॥
 मन फाटा बाइक बुरै, मिटी सगाई साक ।
 जौ परि दूध तिवास का, ऊकटि हूवा आक ॥ २ ॥
 चंदन भागां गुण करै, जैसै चोली पन ।
 दोइ जन भागा नां मिलै, मुकताहल अरु मन ॥ ३ ॥
 पासि बिनंठा कपड़ा, कदे सुरांग न होइ ।
 कबीर त्याग्या ग्यांन करि, कनक कामनी दोइ ॥ ४ ॥

(३६-४) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

चत्र भुजा कै ध्यान मैं, त्रिजवासी सब संत ।

कबीर मगन ता रूप मैं, जाकै भुजा अनंत ॥ ५ ॥

(३७-३) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

मोती भागां बीधतां, मन मैं बस्या कबोल ।

बहुत सयानां पचि गया, पड़ि गइ गांठि गडोल ॥ ४ ॥

मोती पोवत बीगस्या, सानों पाथर आइ राइ ।

साजन मेरी नीकल्या, जांमि बटाऊं जाइ ॥ ५ ॥

चित चेतनि मैं गरक हूँ, चेत्य न देखै मंत ।
 कत कत की सालि पाड़िये, गल बल सहर अनंत ॥ ५ ॥
 जाता है सो जाण दे, तेरी दसा न जाइ ।
 खेवटिया की नाव ज्यूं, घणै मिलैंग आइ ॥ ६ ॥
 नीर पिलावत क्या फिरै, सायर घर घर बारि ।
 जो त्रिषावंत होइगा, सो पीवेगा भूष मारि ॥ ७ ॥
 सत गंठी कोपीन है, साध न मानै संक ।
 राम अमलि माता रहै, गिणै इंद्र कौ रंक ॥ ८ ॥
 दावै दाभूण होत है, निरदावै निसंक ।
 जे नर निरदावै रहै, ते गिणै इंद्र कौ रंक ॥ ९ ॥
 कबीर सब जग हंठिया, मंदिल कंधि चढ़ाइ ।
 हरि बिन अपनां को नहीं, देखे ठोकि बजाइ ॥ १० ॥ ५८४ ॥

(३८) सम्रथाई कौ अंग

नां कुछ किया न करि सक्या, नां करणै जोग सरीर ।
 जे कुछ किया सु हरि किया, ताथै भया कबीर कबीर ॥ १ ॥
 कबीर किया कछू न होत है, अनकीया सब होइ ।
 जे किया कुछ होत है, तौ करता औरै कोइ ॥ २ ॥
 जिसहि न कोई तिसहि तूं, जिस तूं तिस सब कोइ ।
 दरिगह तेरी साईयां, नांम हरू मन होइ ॥ ३ ॥

(५) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

बाजण दैह बजंतणी, कुल जंतड़ी न बेड़ि ।

तुझै पराई क्या पड़ी, तूं आपनी निबेड़ि ॥ ८ ॥

(१) ख० प्रति में इस अंग का पहला दोहा यह है—

साईं सों सब होइगा, बंदे थैं कुछ नाहिं ।

राई थैं परबत करै, परबत राई माहिं ॥ १ ॥

एक खड़े ही लहै, और खड़ा बिललाइ ।
 साईं मेरा सुलषनां, सूतां देइ जगाइ ॥ ४ ॥
 सात समंद की मसि करौं, लेखनि सब बनराइ ।
 धरती सब कागद करौं, तऊ हरि गुंण लिख्या न जाइ ॥ ५ ॥
 अवरन कौं का बरनिये, मोपैं लख्या न जाइ ।
 अपना बाना बाहिया, कहि कहि थाके माइ ॥ ६ ॥
 भल बावैं भल दाहिनैं, भल हि माहि व्यौहार ।
 आगैं पीछैं भलमई, राखै सिरजनहार ॥ ७ ॥
 साईं मेरा बांणियां, सहजि करै व्यौपार ।
 बिन डांडी बिन पालडै, तोलै सब संसार ॥ ८ ॥
 कबीर वारना नांव परि, कीया राई लूंग ।
 जिसहि चलावै पंथ तूं, तिसहि भुलावै कौण ॥ ९ ॥
 कबीर करणी क्या करै, जे राम न करै सहाइ ।
 जिहिं जिहिं डाली पग धरै, सोई नवि नवि जाइ ॥ १० ॥
 जदि का माइ जनमियां, कहूँ न पाया सुख ।
 डाली डाली मैं फिरौं, पातौं पातौं दुख ॥ ११ ॥
 साईं सुं सब होत है, बंदे थैं कुछ नाहिं ।
 राई थैं परबत करै, परबत राई माहिं ॥ १२ ॥ ६०६ ॥

(३८) कुसबद की अंग

अणो सुहेली संल की, पड़तां लेइ उसास ।
 चोट सहारै सबद की, तास गुरु मैं दास ॥ १ ॥

(८) ख०—व्यौहार ।

(१२) बारहवें दोहे के स्थान पर ख० प्रति में यह दोहा है—

रैणां दूरां बिछोहियां, रहु रे संयम भूरि ।

देवल देवलि धाहिड़ी, देसी अंगे सूर ॥ १३ ॥

खुंदन तौ धरती सहै, बाढ सहै बनराइ ।
 कुसबद तौ हरिजन सहै, दूजै सखा न जाइ ॥ २ ॥
 सीतलता तब जाणिये, समिता रहै समाइ ।
 पष छाड़ै निरपष रहै, सबद न दूष्या जाइ ॥ ३ ॥
 कबोर सीतलता भई, पाया ब्रह्म गियान ।
 जिहि बैसंदर जग जल्यो, सो मेरे उदिक समान ॥ ४ ॥ ६१० ॥

(४०) सबद कौ अंग

कबीर सबद सरीर मैं, विनि गुण वाजै तंति ।
 बाहरि भीतरि भरि रह्या, ताथै छूटि भरंति ॥ १ ॥
 सती संतोषी सावधान, सबद भेद सुबिचार ।
 सतगुर के प्रसाद थैं, सहज सील मत सार ॥ २ ॥
 सतगुर ऐसा चाहिए, जैसा सिकलीगर होइ ।
 सबद मसकला फेरि करि, देह द्रपन करै सोइ ॥ ३ ॥
 सतगुर साचा सूरिवाँ, सबद जु बाह्या एक ।
 लागत ही भैं मिलि गया, पढ़्या कलेजै छेक ॥ ४ ॥
 हरि-रस जे जन बेधिया, सतगुण सीं गणि नाहिं ।
 लागी चोट सरीर मैं, करक कलेजे माहिं ॥ ५ ॥
 ज्युं ज्युं हरि गुण साँभलूं, त्यूं त्यूं लागै तीर ।
 साँठी साँठी भड़ि पड़ी, भलका रह्या सरीर ॥ ६ ॥

(३६-२) ख०—काट सहै । साधू सहै ।

(३६-४) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

सहज तराजू आंखि करि, सब रस देख्या तोलि ।

सब रस माँहँ जीभ रस, जे कोइ जाँणै बोलि ॥ २ ॥

(४) यह दोहा ख० प्रति में नहीं है ।

ज्यूं ज्यूं हरि गुण साँभलौं, त्यूं त्यूं लागै तीर ।
 लागै थैं भागा नहीं, साहणहार कबीर ॥ ७ ॥
 सारा बहुत पुकारिया, पीड़ पुकारै और ।
 लागी चोट सबद की, रह्या कबीरा ठौर ॥ ८ ॥ ६१८ ॥

(४१) जीवन मृतक कौ अंग

जीवत मृतक हूँ रहै, तजै जगत की आस ।
 तब हरि सेवा आपण करै, मति दुख पावै दास ॥ १ ॥
 कबीर मन मृतक भया, दुरबल भया सरीर ।
 तब पैडे लागा हरि फिरै, कहत कबीर कबीर ॥ २ ॥
 कबीर मरि मड़हट रह्या, तब कोई न बूझै सार ।
 हरि आदर आगै लिया, ज्यूं गड बछ की लार ॥ ३ ॥
 घर जालौं घर उबरै, घर राखौं घर जाइ ।
 एक अचंभा देखिया, मड़ा काल कौं खाइ ॥ ४ ॥
 मरतां मरतां जग मुवा, औसर मुवा न कोई ।
 कबीर ऐसैं मरि मुवा, ज्यूं बहुरि न मरनां होइ ॥ ५ ॥
 बैद मुवा रोगी मुवा, मुधा सकल संसार ।
 एक कबीरा ना मुवा, जिनि के राम अधार ॥ ६ ॥
 मन मारया ममिता मुई, अहं गई सब छूटि ।
 जोगी था सो रमि गया, आसणि रही बिभूति ॥ ७ ॥
 जीवन थैं मरिबौ भलौ, जौ मरि जानै कोई ।
 मरनै पहली जे मरें, तौ कलि अजरावर होइ ॥ ८ ॥
 खरी कसौटी राम की, खोटा टिकै न कोई ।
 राम कसौटी सो टिकै, जौ जीवत मृतक होइ ॥ ९ ॥

(१) ख० प्रति में इस अंग में पहला दोहा यह है—

जिन पांऊं सैं कतरी, हाँठत देस बदेस ।

तिन पांऊं तिथि पाकड़ी, आगण भया बदेस ॥ १ ॥

आपा मेथ्यां हरि मिलै, हरि मेथ्यां सब जाइ ।
 अकथ कहाणीं प्रेम की, कहां न को पत्ययाइ ॥ १० ॥
 निगु सांवां बहि जाइगा, जाकै थाघो नहीं कोइ ।
 दीन गरीबी बंदिगी, करतां होइ सु होइ ॥ ११ ॥
 दीन गरीबी दीन कौं, दूंदर कौं अभिमान ।
 दुंदर दिल बिष सूं भरी, दीन गरीबी राम ॥ १२ ॥
 कबीर चेरा संत का, दासनि का परदास ।
 कबीर ऐसैं हूँ रह्या, ज्यूं पाऊँ तलि घास ॥ १३ ॥
 रोड़ा हूँ रहै बाट का, तजि पाषंड अभिमान ।
 ऐसा जे जन हूँ रहै, ताहि मिलै भगवान ॥ १४ ॥ ६३२ ॥

(१२) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

कबीर नवै स आपकों, पर कौं नवै न कोइ ।
 घालि तराजू तोलिये, नवै स भारी होइ ॥ १४ ॥
 बुरा बुरा सब को कहै, बुरा न दीसै कोइ
 जे दिल खोजौ आपणीं, तौ मुक्त सा बुरा न कोइ ॥ १५ ॥

(१४) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

रोड़ा भया तो क्या भया, पंथी को दुख देइ ।
 हरिजन ऐसा चाहिए, जिसी जिंमी की खेह ॥ १८ ॥
 खेह भई तो क्या भया, उड़ि उड़ि लागै अंग ।
 हरिजन ऐसा चाहिए, पांथीं जैसा रंग ॥ १९ ॥
 पांथीं भया तो क्या भया, ताता सीता होइ ।
 हरिजन ऐसा चाहिए, जैसा हरि ही होइ ॥ २० ॥
 हरि भया तो क्या भया, जासौं सब कुछ होइ ।
 हरिजन ऐसा चाहिए, हरि भजि निरमल होइ ॥ २१ ॥

(४२) चित कपटी कौ अंग

कबीर तहाँ न जाइए, जहाँ कपट का हेत ।

जालूँ कली कनीर की, वन रातौ मन सेत ॥ १ ॥

संसारी साषत भला, कंवारी कै भाइ ।

दुराचारी बैश्रौ बुरा, हरिजन तहाँ न जाइ ॥ २ ॥

निरमल हरि का नांव सेां, कै निरमल सुध भाइ ।

कै लै दूणा कालिमां, भावै सौ मण साबण लाइ ॥ ३ ॥ ६३५ ॥

(४३) गुरसिष हेरा कौ अंग

ऐसा कोई नां मिलै, हम कौं दे उपदेस ।

भौसागर में डूबतां, कर गहि काढ़ै केस ॥ १ ॥

ऐसा कोई नां मिलै, हम कौं लेइ पिछानि ।

अपना करि किरपा करै, ले उतारै मैदानि ॥ २ ॥

ऐसा कोई नां मिलै, रांम भगति का गीत ।

तन मन सौंपै मृग ज्यूं, सुनै बधिक का गीत ॥ ३ ॥

ऐसा कोई नां मिलै, अपना घर देख जराइ ।

पंचूं लरिका पटिक करि, रहै रांम ल्यौ लाइ ॥ ४ ॥

ऐसा कोई नां मिलै, जासौं रहिये लागि ।

सब जग जलतां देखिये, अपणीं अपणीं आगि ॥ ५ ॥

ऐसा कोई नां मिलै, जासूँ कहूँ निसंक ।

जासूँ हिरदै की कहूँ, सो फिरि माँडै कंक ॥ ६ ॥

(४२-१) ख० प्रति में इस अंग का पहला दोहा यह है—

नवणि नयौ तौ का भयौ, चित्त न सूधौ ज्यौंह ।

पारधियां दूणां नवै, त्रिघाटक ताह ॥ १ ॥

(५) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

ऐसा कोई नां मिलै, बूझै सैन सुजान ।

ढोल बजंता ना सुणै, सुरवि बिहूणा कान ॥ ६ ॥

ऐसा कोई ना मिलै, सब विधि देइ बताइ ।
 सुनि मंडल मैं पुरिष एक, ताहि रहै ल्यौ लाइ ॥ ७ ॥
 हम देखत जग जात है, जग देखत हम जाह ।
 ऐसा कोई ना मिलै, पकड़ि छुड़ावै बाह ॥ ८ ॥
 तीनि सनेही बहु मिलै, चौथै मिलै न कोइ ।
 सबै पियारे रांम के, बैठे परबसि होइ ॥ ९ ॥
 माया मिलै महोबंती, कूड़े आखै बैन ।
 कोई घाइल बेध्या ना मिलै, साईं हंदा सैण ॥ १० ॥
 सारा सूरुा बहु मिलै, घाइल मिलै न कोइ ।
 घाइल ही घाइल मिलै, तब रांम भगति दिढ होइ ॥ ११ ॥
 प्रेमीं दूंदत मैं फिरौं, प्रेमीं मिलै न कोइ ।
 प्रेमीं कौं प्रेमीं मिलै, तब सब विष अमृत होइ ॥ १२ ॥
 हम घर जाल्या आपणां, लिया मुराड़ा हाथि ।
 अब घर जालौं ताम का, जे चलै हमारे साथि ॥ १३ ॥ ६४८ ॥

(४४) हेत प्रीति सनेह कौ अंग

कमोदनीं जलहरि बसै, चंदा बसे अकासि ।
 जो जाही का भावता, सो ताही कै पास ॥ १ ॥

- (११) ख०—जब घाइल ही घाइल मिलै ।
 (१२) ख०—जब प्रेमी ही प्रेमी मिलै ।
 (१३) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—
 जाणै ईंछुं क्या नहीं, बूझि न कीया गौन ।
 भूलौ भूल्या मिल्या, पंथ बतावै कौन ॥ १५ ॥
 कबीर जानींदा बूझिया, मारग दिया बताइ ।
 चलता चलता तहां गया, जहां निरंजन राइ ॥ १६ ॥
 (१) ख०—जो जाही कै मन बसै ।

कबीर गुर बसै बनारसी, सिष समंदां तीर ।
 बिसारया नहीं बीसरै, जे गुंण होइ सरीर ॥ २ ॥
 जो है जाका भावता, जदि तदि मिलसी आइ ।
 जाकौं तन मन सौंपिया, सो कबहूँ छाड़ि न जाइ ॥ ३ ॥
 स्वामी सेवक एक मत, मन ही मैं मिलि जाइ ।
 चतुराई रीझै नहीं, रीझै मन कै भाइ ॥ ४ ॥ ६५२ ॥

(४५) सूर तन कौ अंग

काइर हुवां न छूटिये, कछु सूर तन साहि ।
 भरम भलका दूरि करि, सुमिरण सेल संवाहि ॥ १ ॥
 पूंछै पड़या न छूटियो, सुणि रे जीव अबूझ ।
 कबीर मरि मैदान मैं, करि इंद्रां सूं भूझ ॥ २ ॥
 कबीर सोई सूरिवां, मन सूं मांडै भूझ ।
 पंच पयादा पाड़ि ले, दूरि करै सब दूज ॥ ३ ॥
 सूर भूझै गिरद सूं, इक दिसि सूर न होइ ।
 कबीर यौं धिन सूरिवां, भला न कहिसी कोइ ॥ ४ ॥
 कबीर आरणि पैसि करि, पोछै रहै सु सूर ।
 साईं सूं साचा भया, रहसी सदा हजूर ॥ ५ ॥
 गगन दमांमां बाजिया, पड़या निसां घाव ।
 खेत बुहारया सूरिवैं, मुझ मरणे का चाव ॥ ६ ॥
 कबीर मेरै संसा को नहीं, हरि रं लागा हेत ।
 काम क्रोध सूं भूझणां, चौड़े मांडया खेत ॥ ७ ॥
 सूरै सार सँबाहिया, पहरया सहज सँजोग ।
 अब कै ग्यान गयंद चढ़ि, खेत पड़न का जोग ॥ ८ ॥

सूरा तबही परषिये, लड़ै धर्णी कै हेत ।
 पुरिजा पुरिजा हूँ पड़ै, तऊ न छाड़ै खेत ॥ ९ ॥
 खेत न छाड़ै सूरिवां, भूभै द्वै दल माहिं ।
 आसा जीवन मरण की, मन मैं आशैं नाहिं ॥ १० ॥
 अब तौ भूभयां हीं बणैं, मुड़ि चाल्यां घर दूरि ।
 सिर साहिब कौ सौपतां, सोच न कीजै सुर ॥ ११ ॥
 अब तौ ऐसी हूँ पड़ी, मनकारु चित कीन्ह ।
 मरनै कहा डराइये, हाथि स्यंधौरा लीन्ह ॥ १२ ॥
 जिस मरनै थैं जग डरै, सो मेरे आनंद ।
 कब मरिहूँ कब देखिहूँ, पूरन परमानंद ॥ १३ ॥
 कायर बहुत पमावहीं, बहकि न बोलै सुर ।
 काम पड़्यां हीं जाणिये, किसके मुख परि नूर ॥ १४ ॥
 जाइ पृछौ उस घाइलैं, दिवस पीड़ निस जाग ।
 बाहण-हारा जाणिहै, कै जाणैं जिस लाग ॥ १५ ॥
 घाइल घूमैं गहि भरया, राख्या रहै न ओट ।
 जतन कियां जीवै नहीं, बणीं मरम की चोट ॥ १६ ॥
 ऊंचा बिरष अकासि फल, पंथी मूए भूरि ।
 बहुत सयानैं पचि रहे, फल निरमल परि दूरि ॥ १७ ॥
 दूरि भया तौ का भया, सिर दे नेड़ा होइ ।
 जब लग सिर सौपै नहीं, कारिज सिधि न होइ ॥ १८ ॥
 कबीर यहु घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं ।
 सीस उतारै हाथि करि, सो पैसै घर माहिं ॥ १९ ॥
 कबीर निज घर प्रेम का, मारग अगम अगाध ।
 सीस उतारि पग तलि धरै, तब निकटि प्रेम का स्वाद ॥ २० ॥

(१४) ख०—जाके मुख षटि नूर ।

(१७) ख०—पंथी मूए भूरि ।

प्रेम न खेतौ नीपजै, प्रेम न हाटि बिकाइ ।
 राजा परजा जिस रुचै, सिर दे सो ले जाइ ॥ २१ ॥
 सीस काटि पासंग दिया, जीव सरभरि लीन्ह ।
 जाहि भावे सो आइ ल्यौ, प्रेम आट हंम कीन्ह ॥ २२ ॥
 सूरै सीस उतारिया, छाड़ी तन की आस ।
 आगैं थैं हरि मुल किया, आवत देख्या दास ॥ २३ ॥
 भगति दुहेली रांम की, नहिं कायर का काम ।
 सीस उतारै हाथि करि, सो लेसी हरि नाम ॥ २४ ॥
 भगति दुहेली रांम की, जैसि खाँडे की धार ।
 जे डोलै तौ कटि पड़ै, नहों तौ उतरै पार ॥ २५ ॥
 भगति दुहेली रांम की, जैसि अगनि की भाल ।
 डाकि पड़े ते ऊबरें, दाधे कौतिगहार ॥ २६ ॥
 कबीर घोड़ा प्रेम का, चेतनि चढ़ि असवार ।
 ग्यान षड़ग गहि काल सिरि, भली मचाई मार ॥ २७ ॥
 कबीर हीरावण जिया, महँग मोल अपार ।
 हाड़ गला माटी गली, सिर साटै ब्याहार ॥ २८ ॥
 जेते तारे रैणि के, तेतै बैरी मुझ ।
 धड़ सूली सिर कंगुरै, तऊ न बिसारौं तुझ ॥ २९ ॥
 जे हारया तौ हरि सबाँ, जे जीत्या तो डाव ।
 पारब्रह्म कूं सेवतां, जे सिर जाइ त जाव ॥ ३० ॥
 सिर साटै हरि सेविये, छाड़ि जीव की बांणि ।
 जे सिर दोयां हरि मिलै, तब लग हांणि न जांणि ॥ ३१ ॥
 टूटी बरत अकास थैं, कोइ न सकै भड़ भेल ।
 साध सती अरु सूर का, अंगीं ऊपिला खेल ॥ ३२ ॥

(३१) ख०— सिर साटै हरि पाइए ।

(३२) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

सती पुकारै सलि चढ़ी, सुनि रे मीत मसान ।
 लोग बटाऊ चलि गये, हम तुझ रहे निदान ॥ ३३ ॥
 सती बिचारी सत किया, काठों सेज बिछाई ।
 ले सूती पिव आपणां, चहुं दिसि अगनि लगाई ॥ ३४ ॥
 सती सूर तन साहि करि, तन मन कीया घाण ।
 दिया महैला पीव कूं, तब मड़हट करै बषाण ॥ ३५ ॥
 सती जलन कूं नीकली, पीव का सुमरि सनेह ।
 सबद सुनत जीव नीकल्या, भूलि गई सब देह ॥ ३६ ॥
 सती जलन कूं नीकली, चित धरि एकबमेख ।
 तन मन सौंप्या पीव कूं, तब अंतरि रही न रेख ॥ ३७ ॥
 हैं तोहि पृछौं हे सखो, जीवत क्यूं न मराइ ।
 मुंवा पीछैं सत करै, जीवत क्यूं न कराइ ॥ ३८ ॥
 कबीर प्रगट राम कहि, छानै राम न गाइ ।
 फूस क जौड़ा दूरि करि, ज्यूं बहुरि न लागै लाइ ॥ ३९ ॥
 कबीर हरि सबकुं भजै, हरि कूं भजै न कोइ ।
 जब लग आस सरीर की, तब लग दास न होइ ॥ ४० ॥
 आप सवारथ मेदनीं, भगत सवारथ दास ।
 कबीरा राम सवारथी, जिनि छाड़ी तन की आस ॥ ४१ ॥ ६६३ ॥

(४६) काल कौ अंग

भूठे सुख कौं सुख कहै, मानत है मन मोद ।
 खलक चबीयां काल का, कुछ मुख मैं कुछ गोद ॥ १ ॥

ढोल दमांमा बाजिया, सबद सुणां सब कोइ ।

जैसल देखि सती भजै, तौ दुहु कुल हासी होइ ॥ ३२ ॥

(३७) ख०—जलन को नीसरी ।

आजक कालिहक निस हमैं, मारगि मालहंतां ॥
 काल सिचाणां नर चिड़ा, औभड़ औच्यंतां ॥ २ ॥
 काल सिहाँणै यौं खड़ा, जागि पियारे म्यंत ।
 राम सनेही बाहिरा, तूं क्यूं सोवै नच्यंत ॥ ३ ॥
 सब जग सूता नोंद भरि, संत न आवै नोंद ।
 काल खड़ा सिर ऊपरै, ज्यूं तोरणि आया बींद ॥ ४ ॥
 आज कहै हरि कालिह भजौंगा, कालिह कहै फिरि कालिह ।
 आज ही कालिह करंतड़ां, औसर जासी चालि ॥ ५ ॥
 कबीर पल की सुधि नहीं, करै कालिह का साज ।
 काल अच्यंता भड़पसी, ज्यूं तीतर कां बाज ॥ ६ ॥
 कबीर टग टग चोघतां, पल पल गई बिहाइ ।
 जीव जँजाल न छाड़ै, जम दिया दमांमां आइ ॥ ७ ॥
 मैं अकेला ए दोइ जणां, छेती नाहीं कांइ ।
 जे जम आगैं ऊबरौं, तो जुरा पहंती आइ ॥ ८ ॥
 बारी बारी आपणीं, चले पियारे म्यंत ।
 तेरी बारी रे जिया, नेड़ी आवै नित ॥ ९ ॥

(४) ख०—निसह भरि ।

(७) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

जुरा कृती जोवन ससा, काल अहेड़ी बार ।

पलक बिनामैं पाकड़ै, गरब्यो कहा गँवार ॥ ८ ॥

(९) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

मालन आवत देखि करि, कलियाँ करी पुकार ।

फूले फूले चुणि लिए, कालिह हमारी बार ॥ ११ ॥

बाढ़ी आवत देखि करि, तरवार डोलन लाग ।

हंम कटे की कुछ नहीं, पंखेरू घर भाग ॥ १२ ॥

फांगुण आवत देखि करि, बन रूना मन मांहि ।

ऊँची डाली पात है, दिन दिन पीले थांहि ॥ १३ ॥

दौं की दाधी लकड़ी, ठाढ़ी करे पुकार ।
 मति बसि पढ़ौं लुहार कै, जालै दूजी बार ॥ १० ॥
 जो ऊग्या सो आँथवै, फूल्या सो कुमिलाइ ।
 जो चिणियां सो ढहि पड़ै, जो आया सो जाइ ॥ ११ ॥
 जो पहरया सो फाटिसी, नाँव धरया सो जाइ ।
 कबीर सोई तत्त गहि, जो गुरि दिया बताइ ॥ १२ ॥
 निधड़क बैठा राम बिन, चेतनि करै पुकार ।
 यहु तन जल का बुदबुदा, बिनसत नार्हीं बार ॥ १३ ॥
 पांणी केरा बुदबुदा, इसी हमारी जाति ।
 एक दिनां छिप जांहिंगे, तारे ज्युं परभाति ॥ १४ ॥
 कबीर यहु जग कुछ नहीं, षिन पारा षिन मीठ ।
 काल्हि जु बैठा माड़ियां, आज मसांणी दीठ ॥ १५ ॥
 कबीर मंदिर आपणै, नित उठि करती आलि ।
 मड़हट देण्यां डरपती, चौड़ै दोन्ही जालि ॥ १६ ॥
 मंदिर मांहि भबूकती, दीवा केसी जोति ।
 हंस बटाऊ चलि गया, काढौ घर की छोति ॥ १७ ॥

पात पड़ंता यों कहै, सुनि तरवर बणराइ ।

अब के बिछुड़े नां मिलै, कहिं दूर पड़ैंगे जाइ ॥ १४ ॥

(१०) इस के आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

मेरा वीर लुहारिया, तू जिनि जालै मोहि ।

इक दिन ऐसा होइगा, हूँ जालौंगी तोहि ॥ १६ ॥

(१४) ख०—एक दिनां नटि जांहिंगे, ज्युं तारा परभाति

इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

कबीर पंच पखेरुवा, राखे पोष लगाइ ।

एक जु आया पारधी, ले गयो सबै उड़ाइ ॥ २१ ॥

(१५) ख०—काल्हि जु दीठा मैड़िया ।

(१६) ख०—बैठो करतौ आलि ।

ऊँचा मंदर धौलहर, माँटी चित्री पैलि ।
 एक राम के नांव बिन, जंम पाड़ैगा रौलि ॥ १८ ॥
 कबीर कहा गरबियौ, काल गहै कर केस ।
 नां जाणै कहां मारिसी, कै घर कै परदेस ॥ १९ ॥
 कबीर जंत्र न बाजई, टूटि गए सब तार ।
 जंत्र बिचारा क्या करै, चले बजावणहार ॥ २० ॥

(१८) ख० प्रति में इसके आगे ये दोहे हैं—

काएं चिणावै मालिया, चुनै माटी लाइ ।
 मीच सुणैगी पायणीं, उधोरा लैली आइ ॥ २६ ॥
 काएं चिणावै मालिया, लांबी भीति उसारि ।
 घर तौ साढ़ी तीनि हाथ, घणों तौ पौंणा चारि ॥ २७ ॥
 ऊँचा महल चिणाइया, सोवन कलसु चढ़ाइ ।
 ते मंदर खाली पड़्या, रहे मसाणै जाइ ॥ २८ ॥

(१९) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

इहर अभागी मांछली, छापरि मांडी आलि ।
 डाबरड़ा छूटै नहीं, सकै त समंद सभालि ॥ ३० ॥
 मंछी हुआ न छूटिए, भीवर मेरा काल ।
 जिहिं जिहिं डाबर हूं फिरौ, तिहिं तिहिं मांडै जाल ॥ ३१ ॥
 पांणीं मांहि ला मांछली, सकै तौ पाकड़ि तीरि ।
 कड़ी कटू की काल की, आइ पहुंता कीर ॥ ३२ ॥
 मंछ बिकंता देखिया, भीवर के दरबारि ।
 ऊँखड़ियां रत बालियां, तुम क्यूं बंधे जालि ॥ ३३ ॥
 पाणीं मांहीं घर किया, चेजा किया पतालि ।
 पासा पड़्या करम का, यूं हम बींधे जालि ॥ ३४ ॥
 सूकण लागा केवड़ा, तूटीं अरहर-माल ।
 पांणीं की कल जाणतां, गया ज सीचणहार ॥ ३५ ॥

(२०) ख०—कबीर जंत्र न बाजई ।

धवणि धवन्ती रहि गई, बुझि गए अंगार ।
 अहरणि रह्या ठमूकड़ा, जब उठि चले लुहार ॥ २१ ॥
 पंखी ऊभा पंथ सिरि, बुगचा बांध्या पूठि ।
 मरणां मुह आगै खड़ा, जीवण का सब भूठ ॥ २२ ॥
 यहु जिव आया दूर थै, अजौ भी जासी दूरि ।
 बिच कै बासै रमि रह्या, काल रह्या सर पूरि ॥ २३ ॥
 राम कहा तिनि कहि लिया, जुरा पहुँती आइ ।
 मंदिर लागै द्वार थै, तब कुछ काढणां न जाइ ॥ २४ ॥
 बरियां बीती बल गया, बरन पलट्या और ।
 बिगड़ी बात न बाहुडै, कर छिटक्यां कत ठौर ॥ २५ ॥
 बरियां बीती बल गया, अरु बुरा कमाया ।
 हरि जिन छाड़ै हाथ थै, दिन नेड़ा आया ॥ २६ ॥
 कबीर हरि सूं हेत करि, कूड़ै चित्त न लाव ।
 बांध्या बार षटीक कै, तापसु किती एक आव ॥ २७ ॥

(२१) ख०—ठमेकड़ा । उठि गए । इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

कबीर हरणी दूबली, इस हरियालै तालि ।
 लख अहेड़ी एक जीव, कित एक टालों भालि ॥ ३८ ॥

(२२) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

जिसहि न रहणां इत जगि, सो क्यूं लौडै मीत ।
 जैसे पर घर पाहुणां, रहैं उठाए चीत ॥ ४० ॥

(२५) ख०—कर छूटां कत ठौर ।

(२६) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

कबीर गाफिल क्या फिरै, सोवै कहा न चीत ।
 एवड़ माहि तै ले चल्या, भज्या एकड़ि षरीस ॥ ४५ ॥
 साईं सू मिसि मछीला के, जा सुभिरै लाहूत ।
 कबहीं ऊमकै कटिसी, हुंण ज्यौं वगमंकाहु ॥ ४६ ॥

(२७) ख०—कड़वे तन लाव ।

विष के वन मैं घर किया, सरप रहे लपटाइ ।
 ताथै जियरै डर गह्या, जागत रैखि बिहाइ ॥ २८ ॥
 कबीर सब सुख राम है, और दुखा की रासि ।
 सुर नर मुनियर असुर सब, पड़े काल की पासि ॥ २९ ॥
 काची काया मन अथिर, थिर थिर काम करंत ।
 ज्यूं ज्यूं नर निधड़क फिरै, त्यूं त्यूं काल हसंत ॥ ३० ॥
 रोवणहारे भी मुए, मुए जलावणहार ।
 हा हा करते ते मुए, कासनि करै पुकार ॥ ३१ ॥
 जिनि हम जाए ते मुए, हम भी चालणहार ।
 जे हम को आगैं मिले, तिन भी बंध्या भार ॥ ३२ ॥ ७२५ ॥

(४७) सजीवनि की अंग

जहां जुरा मरण व्यापै नहीं, मुवा न सुणिये कोइ ।
 चलि कबीर तिहि देसड़ै, जहां बैद बिधाता होइ ॥ १ ॥
 कबीर जोगी बनि बस्या, षण्ण खाये कंद मूल ।
 नां जाणौं किस जड़ी थै, अमर भये असथूल ॥ २ ॥
 कबीर हरि चरणौं चल्या, माया मोह थै दूटि ।
 गगन मँडल आसण किया, काल गया सिर कूटि ॥ ३ ॥
 यहु मन पटकि पछाड़ि लै, सब आपा मिटि जाइ ।
 पंगुल हूँ पिव पिव करै, पीछें काल न खाइ ॥ ४ ॥
 कबीर मन तीषा किया, बिरह लाइ परसाँण ।
 चित चणूँ मैं चुभि रह्या, तहाँ नहीं काल का पाँण ॥ ५ ॥

(३०) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

बेटा जाया तौ का भया, कहा बजावै थाल ।

आवण जाणां हूँ रहा, ज्यौं कीड़ी का नाल ॥ २१ ॥

(१) ख०—जुरा मीच

(५) ख०—मन तीषा भया ।

तरवर तास बिलंबिए, बारह मास फलंत ।
 सीतल छाया गहर फल, पंषी केलि करंत ॥ ६ ॥
 दाता तरवर दया फल, उपगारी जीवंत ।
 पंषी चले दिसावरां, बिरषा सुफल फलंत ॥ ७ ॥ ७३२ ॥

(४८) अपारिष कौ अंग

पाइ पदारथ पेलि करि, कंकर लीया हाथि ।
 जोड़ी बिछुटी हंस की, पड़्या बगां कै साथि ॥ १ ॥
 एक अचंभा देखिया, हीरा हाटि बिकाइ ।
 परिषणहार बाहिरा, कौड़ो बदलै जाइ ॥ २ ॥
 कबीर गुदड़ी बोषरी, सौदा गया बिकाइ ।
 खाटा बांध्या गांठड़ी, इब कुछ लिया न जाइ ॥ ३ ॥
 पैँडै मोती बीखरया, अंधा निकस्या आइ ।
 जोति बिनां जगदीश की, जगत उलंघ्यां जाइ ॥ ४ ॥

(१) इसके पहिले ख० प्रति में ये दोहे हैं—

चंदन रुख बदेस गयौ, जण जण कहै पलास ।
 ज्यों ज्यों चूल्है भोकिए, त्यों त्यों अधिकी बास ॥ १ ॥
 हंसडौ तौ महारांण कौ, उड़ि पड़्यौ थलियांह ।
 बगुलौ करि करि मारियौ, सम न जायै त्यां ॥ २ ॥
 हंस बगां कै पाहुगां, कहीं दसा कै फेरि ।
 बगुला कांई गरबियां, बैठा पांख पषेरि ॥ ३ ॥
 बगुला हंस मनाइ लै, नेड़ा थकां बहोड़ि ।
 त्यांह बैठा तूं उजला, त्यों हंस्यौ प्रीत न तोड़ि ॥ ४ ॥
 ख०—चल्यो बगां कै साथि ।

कबीर यहु जग अंधला, जैसी अंधी गाइ ।

बक्का था सो मरि गया, ऊभी चांम चटाइ ॥ ५ ॥ ७३७ ॥

(४८) पारिष कौ अंग

जब गुण कूं गाहक मिलै, तब गुण लाख बिकाइ ।

जब गुण कौं गाहक नहीं, तब कौड़ी बदलै जाइ ॥ १ ॥

कबीर लहरि समंद की, मोती बिखरे आइ ।

बगुला मंभ न जाणई, हंस चुणे चुणि खाइ ॥ २ ॥

हरि हीराजन जौहरी, ले ले मांडिय हाटि ।

जबर मिलैगा पारिषू, तब हीरां की साटि ॥ ३ ॥ ७४० ॥

(५०) उपजणि कौ अंग

नांव न जाणौं गांव का, मारगि लागा जांडे ।

काल्हि जु काटां भाजिसी, पहिली क्यूं न खड़ांडे ॥ १ ॥

सीष भई संसार थै, चले जु साईं पास ।

अबिनासी मोहि ले चल्या, पुरई मेरी आस ॥ २ ॥

(४९-२) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

कबीर मनमाना तोलिण, सबदां मोल न तोल ।

गौहर परषण जाणहीं, आपा खोवै बोल ॥ ७ ॥

(४९-३) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

कबीर सजनहीं साजन मिले, नइ नइ करै जुहार ।

बोल्यां पीछे जाणिये, जो जाकौ व्यौहार ॥ ४ ॥

मेरी बोली पूरबी, ताह न चीन्है कोइ ।

मेरी बोली सो लखै, जो पूरब का होइ ॥ ५ ॥

इंद्रलोक अचिरज भया, ब्रह्मा पड़या विचार ।
 कबीरा चाल्या राम पै, कौतिगहार अपार ॥ ३ ॥
 ऊंचा चढ़ि असमान कूं, मेर ऊलंघे ऊड़ि ।
 पसू पँधेरू जीव त, सब रहे मेर मैं बूड़ि ॥ ४ ॥
 सद पांणी पाताल का, काढ़ि कबीरा पीव ।
 बासी पावस पड़ि मुए, बिषै बिलंबे जीव ॥ ५ ॥
 कबीर सुपिनै हरि मिल्या, सूता लिया जगाइ ।
 आंषि न मींचौ डरपता, मति सुपिनां ह्वै जाइ ॥ ६ ॥
 गोब्यंद के गुण बहुत हैं, लिखे जु हिरदै मांहि ।
 डरता पांणी नां पीऊं, मति वै धोये जांहि ॥ ७ ॥
 कबीर अब तौ ऐसा भया, निरमोलिक निज नाउं ।
 पहली काच कथीर था, फिरता ठावैं ठाउं ॥ ८ ॥
 भौ समंद बिष जल भरया, मन नहीं बाँधै धीर ।
 सबल सनेहीं हरि मिले, तब उतर पारि कबीर ॥ ९ ॥
 भला सुहेला ऊतरया, पूरा मेरा भाग ।
 राम नांव नौका गह्या, तब पांणी पंक न लाग ॥ १० ॥
 कबीर कंसै की दया, संसा घाल्या खाइ ।
 जे दिन गये भगति बिन, ते दिन सालैं मोहि ॥ ११ ॥
 कबीर जाचण जाइथा, आगैं मिल्या अच ।
 ले चाल्या घर आपणैं, भारी पाया संच ॥ १२ ॥ ७५२ ॥

(३) ख०—ब्रह्मा भया विचार ।

(४) ख०—ऊंचा चाल ।

(६) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

कबीर हरि का डरपता, ऊन्हां धान न खाउं ।

हिरदा भीतरि हरि बसै, ताथै खरा उराउं ॥ ७ ॥

(११) ख०—संसा मेलहा

(५१) दया निरबैरता कौ अंग

कबीर दरिया प्रजल्या, दामैँ जल थल भोल ।
 बस नाहीं गोपाल सौँ, बिनसै रतन अमोल ॥ १ ॥
 ऊँमि विआई बादली, बर्सण लगे अँगार ।
 उठि कबीरा धाह दे, दाभत है संसार ॥ २ ॥
 दाध बली ता सब दुखी, सुखी न देखौ कोइ ।
 जहां कबीरा पग धरै, तहां टुक धीरज होइ ॥ ३ ॥ ७५५ ॥

(५२) सुंदरि कौ अंग

कबीर सुंदरि यों कहै, सुणि हो कंत सुजाण ।
 बेगि मिलौ तुम आइ करि, नहीं तर तजौ पराण ॥ १ ॥
 कबीर जे का सुंदरी, जाणि करै विभचार ।
 ताहि न कबहूँ आदरै, प्रेम पुरिष भरतार ॥ २ ॥
 जे सुंदरि साईं भजै, तजै आन की आस ।
 ताहि न कबहूँ परहरै, पलक न छाड़ै पास ॥ ३ ॥

(५२-२) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

दाध बली ता सब दुखी, सुखी न दीसै कोइ ।
 को पुत्रा को बंधवां, को धणहीना होइ ॥ ३ ॥

(५२-३) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

हूँ रोज ससार का, मुझे न रोवै कोइ ।
 मुझको सोई रोइसी, जे रामसनेही होइ ॥ ५ ॥
 मूरों का रोइए, जो अपणै घर जाइ ।
 रोइए बंदीवान को, जो हाटै हाट बिकाइ ॥ ६ ॥
 बाग बिछिटे त्रिग लौ, तिहिं जिनें मारै कोइ ।
 आपैं हीं मरि जाइसी, डावां डोला होइ ॥ ७ ॥

इस मन कौं मैदा करौं, नान्हां करि करि पीसि ।
तब सुख पावै सुंदरी, ब्रह्म भलकै सीस ॥ ४ ॥
दरिया पारि हिंडोलनां, मेल्या कंत मचाइ ।
सेई नारि सुलषणां, नित प्रति भूलण जाइ ॥ ५ ॥ ७६० ॥

(५३) कस्तूरियां मृग कौ अंग

कस्तूरी कुंडलि बसै, मृग दूढै बन मांहि ।
ऐसैं घटि घटि रांम है, दुनियां देखै नांहि ॥ १ ॥
कोइ एक देखै संत जन, जांकै पांचूं हाथि ।
जाकै पांचूं बस नहीं, ता हरि संग न साथि ॥ २ ॥
सो साईं तन में बसै, भ्रम्यौ न जायें तास ।
कस्तूरी के मृग ज्यूं, फिरि फिरि सूंघै घास ॥ ३ ॥
कबीर खोजी रांम का, गया जु सिंघल दीप ।
रांम तौ घट भीतरि रंमि रह्या, जौ आवै परतीत ॥ ४ ॥
घटि बधि कहीं न देखिये, ब्रह्म रह्या भरपूरि ।
जिनि जान्यां तिनि निकटि है, दूरि कहैं ते दूरि ॥ ५ ॥
मैं जाण्यो हरि दूरि है, हरि रह्या सकल भरपूरि ।
आप पिछाणै बाहिरा, नेड़ा ही थैं दूरि ॥ ६ ॥
तिणकै ओल्है रांम है, परबत मेरै भाइ ।
सतगुर मिलि परचा भया, तब हरि पाया घट मांहि ॥ ७ ॥

(६) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

कबीर बहुत दिवस भटकत रह्या, मन से विचै बिसाम ।
दूढत-दूढत जग फिर्या, तिण कै ओल्है रांम ॥ ८ ॥

राम नाम तिहूँ लोक मैं, सकल रखा भरपूरि ।
 यहु चतुराई जाहु जलि, खोजत डौलै दूरि ॥ ८ ॥
 ज्यु नैनूं मैं पतली, त्यूं खालिक घट मांहि ।
 मूरिख लोग न जाणहीं, बाहरि ढूँढण जांहि ॥ ९ ॥ ७६८ ॥

(५४) निंद्या कौ अंग

लोग विचारा नोई, जिनह न पाया ग्यान ।
 राम नांव राता रहै, तिनहुं न भावै आन ॥ १ ॥ ✓
 दोख पराये देखि करि, चल्या हसंत हसंत ।
 अपनै च्यंति न आवई, जिनकी आदि न अंत ॥ २ ॥ ✓
 निंदक नेड़ा राखिये, आंगणि कुटी बंधाइ ।
 बिन साबण पांणी बिना, निरमल करै सुभाइ ॥ ३ ॥ ✓
 न्यंदक दूरि न कीजिये, दीजै आदर मान ।
 निरमल तन मन सब करै, बकि बकि आनहि आन ॥ ४ ॥
 जे को नोई साध कूं, संकटि आवै सोइ ।
 नरक मांहि जांमैं मरै, मुक्ति न कबहुं होइ ॥ ५ ॥
 कबीर घास न नोदिये, जो पाऊं तलि होइ ।
 छड़ि पड़ै जब आखि मैं, खरा दुहेला होइ ॥ ६ ॥ ✓

(५३-८) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

हरि दरियां सूभर भरिया, दरिया वार न पार ।
 खालिक बिन खाली नहीं, जेवा सूई संचार ॥ १० ॥

(१) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

निंदक तौ नांकी बिना, सोहै न कव्यां मांहि ।
 साधू सिरजनहार के, तिनमें सोहै नाहि ॥ २ ॥

(६) ख०—दूसरी पंक्ति—

नरक मांहि जांमैं मरै, मुक्ति न कबहुं होइ ।

आपन यौं न सराहिए, और न कहिये रंक ।
 नां जाणौं किस त्रिष तलि, कूड़ा होइ करंक ॥ ७ ॥
 कबोर आप ठगाइये, और न ठगिये कोइ ।
 आप ठग्यां सुख ऊपजै, और ठग्यां दुख होइ ॥ ८ ॥
 अब कै जे साईं मिलै, तौ सब दुख आपौं रोइ ।
 चरनूं ऊपरि सीस धरि, कहूँ ज कहणां होइ ॥ ९ ॥ ७७ ॥

(५५) निगुणां कौ अंग

हरिया जाणै रूषड़ा, उस पाणों का नेह ।
 सूका काठ न जाणई, कबहूँ बूठा मेह ॥ १ ॥
 भिरिमिरि भिरिमिरि बरषिया, पांहुण ऊपरि मेह ।
 माटी गलि सँजल भई, पांहुण वोही तेह ॥ २ ॥
 पार ब्रह्म बूठा मोतियां, घड़ बांधी सिषरांह ।
 सगुरां सगुरां चुणि लिया, चूक पड़ी निगुरांह ॥ ३ ॥
 कबीर हरि रस बरषिया, गिर डूंगर सिषरांह ।
 नीर मिवाणां ठाहरै, नाँऊँ छा परड़ांह ॥ ४ ॥
 कबीर मूँडठ करमियां, नष सिष पाषर ज्यांह ।
 बांहणहारा क्या करै, बाण न लागै त्यांह ॥ ५ ॥
 कहत सुनत सब दिन गए, उरभि न सुरभया मन ।
 कहि कबीर चेत्या नहीं, अजहूँ सुपहला दिन ॥ ६ ॥

-
- (७) आपण यौं न सराहिए, पर निंदिए न कोइ ।
 अजहूँ लांवा चौहड़ा, ना जाणौं क्या होइ ॥ ८ ॥
 (९) यह दोहा ख० प्रति में नहीं है ।
 (६) यह दोहा ख० प्रति में नहीं है ।

कहै कबीर कठोर कै, सबद न लागै सार ।
 सुध बुध कै हिरदै भिदै, उपजि बिबेक बिचार ॥ ७ ॥
 मा सीतलता कै कारणै, माग बिलंबे आइ ।
 रोम रोम बिष भरि रह्या, अमृत कहां समाइ ॥ ८ ॥
 सरपहि दूध पिलाइये, दूधै बिष हूँ जाइ ।
 ऐसा कोई नां मिलै, स्यू सरपै बिष खाइ ॥ ९ ॥
 जालौं इहै बडपणां, सरलै पेड़ि खजूरि ।
 पंखी छांह न बसवै, फल लागै ते दूरि ॥ १० ॥
 ऊंचा कुल कै कारणै, बंस बध्या अधिकार ।
 चंदन बास भेदै नहीं, जाल्या सब परिवार ॥ ११ ॥
 कबीर चंदन कै निडै, नींव भि चंदन होइ ।
 बूडा बंस बडाइतां, यौं जिनि बूडै कोइ ॥ १२ ॥ ७६० ॥

(५६) बीनती कौ अंग

कबीर साईं तौ मिलहिंगे, पूछहिंगे कुसलात ।
 आदि अंति की कहूंगा, उर अंतर की बात ॥ १ ॥ ✓
 कबीर भूलि बिगाड़ियां, तूं नां करि मैला चित ।
 साहिब गरबा लोड़िये, नफर बिगाड़ै नित ॥ २ ॥ ✓

(७) इसके आगे ख० प्रति में ये दोहे हैं—

बेकांसी को सर जिनि बाहै, साठी खेवै मूल गंवावै ।
 दास कबीर ताहि को बाहै, गलि सनाह सनमुख सरसाहै ॥ ८ ॥
 पसुवा सौं पांनों पड़ा, रहि रहि याम खीजि ।
 ऊसर वाह्यौ न उगसी, भावै दूणां बीज ॥ ९ ॥

(१) यह दोहा ख० प्रति में नहीं है ।

करता करे बहुत गुंण, औगुंण कोई नाहिं ।
 जे दिल खोजीं आपणीं, तौ सब औगुण मुझ माहिं ॥ ३ ॥
 औसर बीता अलपतन, पीव रखा परदेस ।
 कलंक उतारौ केसवा, भानौं भरंम अंदेस ॥ ४ ॥
 कबीर करत है बीनती, भौसागर कै ताईं ।
 बंद ऊपरि जोर होत है, जंम कूं बरजि गुसाईं ॥ ५ ॥
 हज काबै है है गया, केती बार कबीर ।
 मीरां मुझ में क्या खता, मुखाने बोलै पीरा ॥ ६ ॥
 ज्यू मन मेरा तुझ सौं, यौं जे तेरा होइ ।
 ताता लोहा यौं मिलै, संधि न लखई कोइ ॥ ७ ॥ ७६७ ॥

(५७) साषीभूत कौ अंग

कबीर पूछै रांम कूं, सकल भवनपति-राइ ।
 सबहो करि अलगा रहै, सो विधि हमहिं बताइ ॥ १ ॥
 जिहि बरियां साईं मिलै, तास न जाणै और ।
 सबकूं सुख दे सबद करि, अपणीं अपणीं ठौर ॥ २ ॥
 कबीर मन का बाहुला, ऊंडा बहै असोस ।
 देखत हों दह में पड़ै, दई किसा कौं दोस ॥ ३ ॥ ८०८ ॥

(५८-३) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

बरियां बीती बल गया, अरु बुरा कमाया ।

हरि जिनि छाड़ै हाथ थैं, दिन नेड़ा आया ॥ ३ ॥

(५८-५) ख०—कबीर बिचारा करै बिनती ।

(५८) बेली कौ अंग

अब तौ ऐसी हूँ पड़ी, नां तूं बड़ी न बेलि ।
 जालण आंणीं लाकड़ी, ऊठी कूपल मेलिह ॥ १ ॥
 आगें आगें दैं जलै, पीछें हरिया होइ ।
 बलिहारी ता बिरष की, जड़ काट्यां फल होइ ॥ २ ॥
 जे काटौ तौ डहडही, सींचैं तौ कुमिलाइ ।
 इस गुणवंती बेलि का, कुछ गुण कया न जाइ ॥ ३ ॥
 आंगणि बेलि अकासि फल, अण व्यावर का दूध ।
 ससा सींग की धूनहड़ी, रमैं बांभ का पूत ॥ ४ ॥ ✓
 कबीर कड़ई बेलड़ो, कड़वा ही फल होइ ।
 सांध नांव तब पाइये, जे बेलि बिछोहा होइ ॥ ५ ॥ ✓
 सींध भई तब का भया, चहुँ दिसि फूटी बास ।
 अजहूँ बीज अंकूर है, भीऊगण की आस ॥ ६ ॥ ८०६ ॥

(५८) अबिहड़ कौ अंग

कबीर साथी सो किया, जाकै सुख दुख नहीं कोइ ।
 हिलि मिलि हूँ करि खेलिस्युं, कदे बिछोह न होइ ॥ १ ॥
 कबीर सिरजनहार बिन, मेरा हितू न कोइ ।
 गुण औगुण बिहड़ै नहीं, स्वारथ बंधी लोइ ॥ २ ॥
 आदि मधि अरु अंत लौं, अबिहड़ सदा अभंग ।
 कबीर उस करता की, सेवग तजै न संग ॥ ३ ॥ ८०६ ॥

(५८-२) ख०—दैं बलै ।

(६) इसके आगे ख० प्रति में यह दोहा है—

सिंधि जु सहजै फुकि गई, आगि लगी बन मांहि ।

बीज बास दून्युं जले, ऊगण कौं कुछ नाहिं ॥ ७ ॥

(२) पद

राग गौड़ी]

दुलहनीं गावहु मंगलचार,

हम घरि आये हो राजा राम भरतार ॥ टेक ॥

तन रत करि मैं मन रत करिहूँ, पंचतत बराती ।

रामदेव मोरै पाहुनै आये, मैं जोबन मैमाती ॥

सरीर सरोवर बेदी करिहूँ, ब्रह्मा बेद उचार ।

रामदेव संगि भावरि लैहूँ, धनि धनि भाग हमार ॥

सुर तेतीसुं कौतिग आये, मुनियर सहस अह्यासी ।

कहै कबोर हम ब्याहि चले हैं, पुरिष एक अविनासी ॥१॥

बहुत दिनन थैं मैं प्रीतम पाये,

भाग बड़े घरि बैठैं आये ॥ टेक ॥

मंगलचार माहिं मन राखौं, राम रसांइण रसनां चार्षौं ॥

मंदिर माहिं भया उजियारा, ले सूती अपनां पोव पियारा ॥

मैं रनि रासी जे निधि पाई, हमहि कहा यहु तुमहि बड़ाई ।

कहै कबीर मैं कछू न कीन्हां, सखी सुहाग राम मोहि दीन्हां ॥२॥

अब तोहि जान न दैहूँ राम पियारे,

ज्युं भावै त्यूं होह हमारे ॥ टेक ॥

बहुत दिनन के बिछुरे हरि पाये, भाग बड़े घरि बैठैं आये ॥

चरननि लागि करौं बरियाई, प्रेम प्रीति राखौं उरभाई ॥

इत मन मंदिर रहौ नित चोषै, कहै कबोर परहु मति धोषै ॥३॥

मन के मोहन बीठुला, यहु मन लागौ तोहि रे ।
 चरन कंवल मन मानियां, और न भावै मोहि रे ॥ टेक ॥
 षट दल कवल निवासिया, चहु कौं फेरि मिलाइ रे ।
 दहुं कै बीच समाधियां, तहां काल न पासै आइ रे ॥
 अष्ट कंवल दल भीतरा, तहां श्रीरंग केलि कराइ रे ।
 सतगुर मिलै तौ पाइये, नहीं तौ जन्म अक्यारथ जाइ रे ॥
 कदली कुसम दल भीतरा, तहां दस आंगुल का बीच रे ।
 तहां दुवादस खोजि ले, जनम होत नहीं मींच रे ॥
 बंक नालि के अंतरै, पछिम दिसा की बाट ।
 नीभर भरै रस पीजिये, तहां भंवर गुफा के घाट रे ॥
 त्रिवेणी मनाह न्हवाइए, सुरति मिलै जौ हाथि रे ।
 तहां न फिरि मघ जोइये, सनकादिक मिलि हैं साथि रे ॥
 गगन गरजि मघ जोइये, तहां दीसै तार अनंत रे ।
 बिजुरी चमकि घन बरषिहै, तहां भीजत हैं सब संत रे ॥
 षोडस कंवल जब चेतिया, तब मिलि गए श्री बनवारि रे ।
 जुरामरण भ्रम भाजिया, पुनरपि जनम निवारि रे ॥
 गुर गमि तैं पाईये, भूषि मरं जिनि कोइ रे ।
 तहीं कबोरा रमि रह्या, सहज समाधी सोइ रे ॥ ४ ॥

गोकल नाइक बीठुला, मेरौ मन लागौ तोहि रे ।
 बहुतक दिन बिछुरें भये, तेरी औसेरि आवै मोहि रे ॥ टेक ॥
 करम कोटि कौ प्रेह रच्यौ रे, नेह गये को आस रे ।
 आपहि आप बँधाइया, द्वै लोचन मरहि पियास रे ॥
 आपा पर संमि चीन्हिये, दीसै सरब समान ।
 इहि पद नरहरि भेटिये, तूं छाड़ि कपट अभिमान रे ॥

नां कतहुं चलि जाइये, नां सिर लीजै भार ।
 रसनां रसहि बिचारिये, सारंग ओरंग धार रे ॥
 साधै सिधि ऐसी पाइये, किंवा होइ महेइ ।
 जे दिठ ग्यान न ऊपजै, तौ अहटि रहै जिनि कोइ रे ॥
 एक जुगति एकै मिलै, किंवा जोग कि भोग ।
 इन दृन्युं फल पाइये, राम नाम सिधि जोग रे ॥
 प्रेम भगति ऐसी कीजिये, मुखि अमृत बरिषै चंद ।
 आपही आप बिचारिये, तब केता होइ अनंद रे ॥
 तुम्ह जिनि जानौं गीत है, यहु निज ब्रह्म बिचार ।
 केवल कहि समझाइया, आतम साधन सार रे ॥
 चरन कवल चित लाइये, राम नाम गुन गाइ ।
 कहै कबीर संमा नहीं, भगति मुक्ति गति पाइ रे ॥ ५ ॥

अब मैं पाइबौ रे पाइबौ ब्रह्म गियान,
 सहज समाधे सुख मैं रहिबौ, कोटि कलप विश्राम ॥ टेक ॥
 गुर कृपाल कृपा जब कीन्हीं, हिरदै कंवल बिगासा ।
 भागा भ्रम दसौं दिस सूझ्या, परम जोति प्रकासा ॥
 मृतक उठ्या धनक कर लीयै, काल अहेड़ो भागा ।
 उदया सूर निस किया पयानां, सोवत थै जब जागा ॥

(५) इसके आगे ख० प्रति में यह पद है—

अब मैं राम सकल सिधि पाई
 आन कहूं तौ राम दुहाई ॥ टेक ॥
 इह बिधि बासि सबै रस दीठा, राम नाम सा और न मीठा ।
 और रस है कफ गाता, हरिरस अधिक अधिक सुखराता ॥
 बूजा बणज नहीं कलु बाघर, राम नाम दोऊ तत आघर ।
 कहै कबीर जे हरिरस भोगी, ताकौं मिल्या निरंजन जोगी ॥ ६ ॥

अविगत अकल अनूपम देख्या, कहतां कह्या न जाई ।
 सैन करै मनहीं मन रहसै, गूंगै जानि मिठाई ॥
 पहुप बिनां एक तरवर फलिया, बिन कर तूर बजाया ।
 नारी बिनां नीर घट भरिया, सहज रूप सो पाया ॥
 देखत कांच भया तन कंचन, बिन बानी मन मानां ।
 बड़्या बिहंगम खोज न पाया, ज्यूं जल जलहि समानां ॥
 पूज्या देव बहुरि नहीं पूजां, न्हाये बहुरि न नांउ ।
 भागा भ्रम ये कही कहतां, आये बहुरि न आऊं ॥
 आपै मैं तब आपा निरण्या, अपन पै आपा सूझ्या ।
 आपै कहत सुनत पुनि अपनां, अपन पै आपा बूझ्या ॥
 अपनै परचै लागी तारी, अपन पै आप समानां ।
 कहै कबीर जे आप बिचारै, मिटि गया आवन जानां ॥ ६॥

नरहरि सहजैं हीं जिनि जानां ।

गत फल फूल तत तर पलव, अंकूर बीज नसानां ॥ टेक ॥
 प्रगट प्रकास ग्यान गुरगमि थै, ब्रह्म अगनि प्रजारी ।
 ससि हर सूर दूर दूरंतर, लागी जोग जुग तारी ॥
 उलटे पवन चक्र षट बेधा, मेर-ढंड सरपूरा ।
 गगन गरजि मन सुनि समानां, बाजे अनहद तूरा ॥
 सुमति सरीर कबीर बिचारी, त्रिकुटी संगम स्वामी ।
 पद आनंद काल थैं छूटै, सुख मैं सुरति समानां ॥ ७ ॥

मन रे मन हीं उलटि समानां ।

गुर प्रसादि अकलि भई तोकाँ, नहीं तर था बेगानां ॥ टेक ॥
 नेड़ै थैं दूरि दूर थैं नियरा, जिनि जैसा करि जानां ।
 औ लौ ठीका चढ्या बलींढै, जिनि पीया तिनि मानां ॥

उलटे पवन चक्र षट बेधा, सुनि सुरति लै लागी ।
 अमर न मरै मरै नहीं जीवै, ताहि खोजि बैरागी ॥
 अनमै कथा कवन सौं कहिये, है कोई चतुर बबेकी ।
 कहै कबीर गुर दिया पलीता, सो भूल बिरलै देखी ॥ ८ ॥

इहि तत राम जपहु रे प्रांनों, बूझौ अकथ कहाँणी ।
 हरि कर भाव होइ जा ऊपरि, जाग्रत रँनि बिहानीं ॥ टेक ॥
 डाँइन डारै सुन हां डोरै, स्थंध रहै बन घेरै ।
 पंच कुटंब मिलि भूभन लागे, बाजत सबद संघेरै ॥
 रोहै मृग ससा बन घेरै, पारधी बाण न मेलै ।
 सायर जलै सकल बन दाभै, मंछ अहेरा खेलै ॥
 सोई पंडित सो तत ग्याता, जो इहि पदहि बिचारै ।
 कहै कबीर सोइ गुर मेरा, आप तिरै मोहि तारै ॥ ९ ॥

अवधू ग्यांन लहरि धुनि मांडी रे ।
 सबद अतीत अनाहद राता, इहि बिधि त्रिष्णां षांडी ॥ टेक ॥
 बन कै ससै समंद घर कीया, मछा बसै पहाड़ी ।
 सुइ पीवै बांम्हण मतवाला, फल लागा विन बाड़ी ॥
 षाड बुणै कोली में बैठी, में खंटा में गाड़ी ।
 ताँणै बाँणै पड़ी अनंवासी, सूत कहै बुणि गाढी ॥
 कहै कबीर सुनहु रे संतौ, अगम ग्यांन पद माँहीं ।
 गुर प्रसाद सूई कै नाँकै, हस्ती आवैं जाँहीं ॥ १० ॥

एक अचंभा देखा रे भाई, ठाढ़ा सिंघ चरावै गाई ॥ टेक ॥
 पहलै पृत पीछे भई माइ, चेला कै गुर लागै पाइ ॥
 जल की मछली तरवर व्याई, पकड़ि बिलाई मुरगै खाई ।

बैलहि डारि गूनि घरि आई, कुत्ता कूं लै गई बिलाई ॥
 तलि करि साषा ऊपरि करि मूल, बहुत भाँति जड़ लागे फूल ॥
 कहै कबीर या पद कौं बूझै, ताकूं तीन्युं त्रिभुवन सूझै ॥ ११ ॥

हरि के धारे बड़े पकायं, जिनि जारे तिनि षाये ।
 ग्यांन अचेत फिरै नर लोई, तार्थ जनमि जनमि डहकाये ॥ टेक ॥
 धौल मंदलिया बैलर बाबी, कऊवा ताल बजावै ।
 पहरि चोल नांगा दह नाचै, भैंसा निरति करावै ॥
 स्यंघ बैठा पान कतरै, घूस गिलौरा लावै ।
 उंदरी बपुरी मंगल गावै, कछू एक अंगनंद सुनावै ॥
 कहै कबीर सुनहुं रे संतौ गडरी परबत खावा ।
 चकवा बैसि अंगारे निगलै, समंद अकासां धावा ॥ १२ ॥

चरषा जिनि जरै ।

कातौंगी हजरी का सूत, नणद के भईया की सौं ॥ टेक ॥
 जलि जाई थलि ऊपजी, आई नगर में आप ।
 एक अचंभा देखिया, बिटिया जायौ बाप ॥
 बाबल मेरा ब्याह करि, बर उत्तम ले चाहि ।
 जब लग बर पावै नहीं, तब लग तूं हों ब्याहि ॥
 सुबधी कै घरि लुबधी आयो, आन बहू कै भाइ ।
 चूलहै अगनि बताइ करि, फल सौ दीयौ ठठाइ ॥
 सब जगही मरि जाइयौ, एक बढइया जिनि मरै ।
 सब रांडनि कौ साथ चरषा को घरै ॥
 कहै कबीर सो पंडित ग्याता, जो या पदहि बिचारै ।
 पहलै परचै गुर मिलै, तौ पीछें सतगुर तारै ॥ १३ ॥

अब मोहि ले चलि नणद के बीर, अपनै देसा ।

इन पंचनि मिलि लूटो हूँ, कुसंग आहि बदेसा ॥ टेक ॥

गंग तीर मोरी खेती बारी, जमुन तीर खरिहाना ।

सातौं बिरही मेरे नीपजै, पंचू मोर किसानां ॥

कहै कबीर यहु अकथ कथा है, कहतां कही न जाई ।

सहज भाइ जिहि ऊपजै, ते रमि रहे समाई ॥ १४ ॥

अब हम सकल कुमल करि मानां,

खाति भई तब गोब्यंद जानां ॥ टेक ॥

तन मैं होती कोटि उपाधि, उलटि भई सुख सहज समाधि ॥

जम थैं उलटि भया है राम, दुख बिसरया सुख कीया विश्राम ॥

बैरी उलटि भये हैं मीता, साषत उलटि सजन भये चीता ॥

आपा जानि उलटि ले आप, तौ नहीं ब्यापै तीन्यूं ताप ॥

अब मन उलटि सनातन हूवा, तब हम जानां जीवत मूवा ॥

कहै कबीर सुख सहज समाऊं, आप न डरौं न और डराऊं ॥ १५ ॥

संतो भाई आई ग्यान की आंधी रे ।

भ्रम की टाटी सबै उडांणीं, माया रहै न बांधी ॥ टेक ॥

हिति चत की द्वै थूनीं गिरानीं, मोह बलींडा तूटा ।

त्रिस्ना छांनि परी धर ऊपरि, कुबधि का भांडा फूटा ॥

जोग जुगति करि संतों बांधी, निरचू चुवै न पांणीं ।

कूड़ कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जांणीं ॥

आंधी पीछै जो जल बूठा, प्रेम हरी जन भीनां ।

कहै कबीर भान के प्रगटे, उदित भया तम भीनां ॥ १६ ॥

अब घटि प्रगट भये रांम राई,
 सोधि सरीर कनक की नाई ॥ टेक ॥
 कनक कसौटी जैसैं कसि लेइ सुनारा,
 सोधि सरीर भयो तन सारा ॥
 उपजत उपजत बहुत उपाई,
 मन थिर भयौ तबै थिति पाई ॥
 बाहरि षोजत जनम गंवाया,
 उनमनों ध्यान घट भीतरि पाया ॥
 बिन परचै तन काँच कथीरा,
 परचै कंचन भया कबीरा ॥ १७ ॥

हिंडोलनां तहां भूलै आतम रांम ।
 प्रेम भगति हिंडोलनां, सब संतनि कौ विश्राम ॥ टेक ॥
 चंद सूर दोइ खंभवा, बंक नालि की डोरि ।
 भूलै पंच पियारियां, तहां भूलै जीय मोर ॥
 द्वादस गम के अंतरा, तहां अमृत कौ प्रास ।
 जिनि यहु अमृत चाषिया, सो ठाकुर हंम दास ॥
 सहज सुनि कौ नेहरौ, गगन मंडल सिरिमौर ।
 दोऊ कुल हम आगरी, जौ हंम भूलै हिंडोल ॥
 अरध उरध की गंगा जमुनां, मूल कवल कौ घाट ।
 षट चक्र की गागरी, त्रिवेणी संगम बाट ॥
 माद व्यंङ्ग की नावरी, रांम नाम कनिहार ।
 कहै कबीर गुंण गाइ ले, गुर गंमि उतरौ पार ॥ १८ ॥

को बीनै प्रेम लागौ री, माई को बीनै ।

रांम रसांइण माते री, माई को बीनै ॥ टेक ॥

पाई पाई तूं पुतिहाई,

पाई की तुरियां बेचि खाई री, माई को बीनै ॥

ऐसै पाई पर त्रिथुराई,

त्यूं रस आनि बनायै री, माई को बीनै ॥

नाचै तांनां नाचै बांनां,

नाचै कूंच पुरांनां री, माई को बीनै ॥

करगहि बैठि कबीरा नाचै,

चूहै काट्या तांनां री, माई को बीनै ॥ १६ ॥

मैं बुनि करि सिरांनां हो रांम, नालि करम नहीं ऊबरे ॥ टेक ॥

दखिन कूंट जब सुनहां भूँका, तब हम सुगन विचारा ।

लरकं परके सब जागत हैं, हम घरि चोर पसारा हो रांम ॥

तांनां लींन्हां बांनां लींन्हां, लींन्हे गोड के पऊवा ।

इत उत चितवत कठवन लींन्हां, मांड चलवनां डऊवा हो रांम ॥

एक पग दोइ पग त्रेपग, संधे संधि मिलाई ।

करि परपंच मोट बँधि आयो, किलि किलि सबै मिटाई हो रांम ॥

तांनां तनि करि बांनां बुनि करि, छाक परी मोहि ध्यान ।

कहै कबीर मैं बुनि सिरांनां, जानत है भगवानां हो रांम ॥ २० ॥

तननां बुननां तज्या कबीर, रांम नांम लिख लिया सरीर ॥ टेक ॥

जब लग भरौं नली का बेह, तब लग दूटै रांम सनेह ॥

ठाढी रोवै कबीर की माइ, ए लरिका क्यूं जीवै खुदाइ ।

कहै कबीर सुनहुं री माई, पूरणहारा त्रिभुवन राई ॥ २१ ॥

जुगिया न्याइ मरै मरि जाइ ।

घर जाजरौ बलीडौ टेढौ, औलौतो डर राइ ॥ टेक ॥

मगरी तजौ प्रीति पाषे' सूं, डांडीं देहु लगाइ ।

छींकौ छोडि उपरहि डौ बांधौ, ज्यूं जुगि जुगि रहौ समाइ ॥

बैसि परहडी द्वार मुंदावौ, ल्यावौ पूत घर घेरी ।

जेठी धीय सासरै पठवौ, ज्यूं बहुरि न आवै फेरी ॥

लहुरी धीइ सबै कुल खोयौ, तब ढिग बैठन पाई ।

कहै कबीर भाग बपरी कौ, किलि किलि सबै चुकाई ॥ २२ ॥

मन रे जागत रहिये भाई ।

गाफिल होइ वसत मति खोवै, चोर मुसै घर जाई ॥ टेक ॥

षट चक्र की कनक कोठड़ी, बस्त भाव है सोई ।

ताला कूंची कुलफ के लागे, उघड़त बार न होई ॥

पंच पहरवा सोइ गये हैं, बसतैं जागण लागी ।

जुरा मरण व्यापै कुछ नाहीं, गगन मंडल लै लागी ॥

करत विचार मनहीं मन उपजी, नां कहीं गया न आया ।

कहै कबीर संसा सब छूटा, राम रतन धन पाया ॥ २३ ॥

चलन चलन सबको कहत है, नां जानौ बैकुंठ कहाँ है ॥ टेक ॥

जोजन एक प्रमिति नहीं जानैं, बातनि हीं बैकुंठ बषानैं ॥

जब लग है बैकुंठ की आसा, तब लग नहीं हरि चरन निवासा ॥

कहें सुनें कैसैं पतिअइये, जब लग तहां आप नहीं जइये ॥

कहै कबीर यहु कहिये काहि, साध संगति बैकुंठहि आहि ॥ २४ ॥

अपनें विचारि असवारी कीजै, सहज कै पाइडूँ पाव जब दीजै ॥ टेक ॥

दे मुहरा लगांम पहिराऊं, सिकली जीन गगन दौराऊं ॥

चलि बैकुंठ तोहि लै तारौं, थकहित प्रेम ताजनें मारूं ॥

जन कबीर ऐसा असवारा, बेद कतेव दहूँ थै' न्यारा ॥ २५ ॥

अपनै मैं रँगि आपनपौ जानूं,

जिहि रँगि जानि ताही कूं मानूं ॥ टेक ॥

अभि-अंतरि मन रंग समानां, लोग कहैं कबीर बौरानां ॥

रंग न चीन्हैं मूरिख लोई, जिहि रँगि रंग रखा सब कोई ॥

जे रंग कवहूं न आवै न जाई, कहै कबीर तिहि रखा समाई ॥ २६ ॥

भगुरा एक नबेरौ राम, जे तुम्ह अपनैं जन सूं काम ॥ टेक ॥

ब्रह्मा बड़ा कि जिनि रू उपाया बेद बड़ा कि जहां थैं आया ॥

यहु मन बड़ा कि जहां मन मानैं, राम बड़ा कि रामहि जानै ॥

कहै कबीर हूं खरा वदास, तीरथ बड़े कि हरि के दास ॥ २७ ॥

दास रामहि जानिहैं रे, और न जानैं कोई ॥ टेक ॥

काजल देइ सबै कोई, चषि चाहन मांहि बिनांन ।

जिनि लोइनि मन मोहिया, ते लोइन परवान ॥

बहुत भगति भौसागरा, नानां बिधि नानां भाव ।

जिहि हिरदै श्रीहरि भेटिया, सो भेद कहूं कहूं ठाउं ॥

दरसन संमि का कीजिये, जौ गुन नहीं होत समान ।

सीधव नीर कबीर मिल्यौ है, फटक न मिलै पखान ॥ २८ ॥

कैसें होइगा मिलावा हरि सनां,

रे तू बिषै बिकारन तजि मनां ॥ टेक ॥

रेतैं जोग जुगति जान्यां नहीं, तैं गुर का सबद मान्यां नहीं ॥

गंदी देही देखि न फूलिये, संसार देखि न भूलिये ॥

कहै कबीर मन बहु गुनी, हरि भगति बिनां दुख फुन फुनी ॥ २९ ॥

कासूं कहिये सुनि रामां, तेरा मरम न जानैं कोई जी ।

दास बबेकी सब भले, परि भेद न छानां होई जी ॥ टेक ॥

ए सकल ब्रह्मंड तैं पुरिया, अरु दूजा महि थान जी ।
 मैं सब घट अंतरि पेधिया, जब देख्या नैन समान जी ॥
 राम रसाइन रसिक हैं, अदभुत गति बिस्तार जी ।
 भ्रम निसा जो गत करै, ताहि सूझै संसार जी ॥
 सिव सनकादिक नारदा, ब्रह्म लिया निज बास जी ।
 कहै कबीर पद पंथ्यजा, अब नेड़ा चरण निवास जी ॥ ३० ॥

मैं डोरै डोरै जाऊंगा, तौ मैं बहुरि न भौजलि आऊंगा ॥टेक॥
 सूत बहुत कछु थोरा, ताथै लाइ लै कथा डोरा ।
 कथा डोरा लागा, तब जुरा मरण भौ भागा ॥
 जहां सूत कपास न पूर्नी, तहां बसै इक मूर्नी ।
 उस मूर्नी सूं चित लाऊंगा, तौ मैं बहुरि न भौजलि आऊंगा ॥
 मेर डंड इक छाजा, तहां बसै इक राजा ।
 तिस राजा सूं चित लाऊंगा, तौ मैं बहुरि न भौजलि आऊंगा ॥
 जहां बहु हीरा घन मोती, तहां तत लाइ लै जोती ।
 तिस जोतिहिं जोति मिलाऊंगा, तौ मैं बहुरि न भौजलि आऊंगा ॥
 जहां ऊगै सूर न चंदा, तहां देख्या एक अनंदा ।
 उस आनंद सूं चित लाऊंगा, तौ मैं बहुरि न भौजलि आऊंगा ॥
 मूल बंध इक पावा, तहां सिध गणेश्वर रावा ।
 तिस मूलहि मूल मिलाऊंगा, तौ मैं बहुरि न भौजलि आऊंगा ॥
 कबीरा तालिब तोरा, तहां गोपत हरी गुर मोरा ।
 तहां हेत हरी चित लाऊंगा, तौ मैं बहुरि न भौजलि आऊंगा ॥ ३१ ॥

संतौ धागा टूटा गगन बिनसि गया, सबद जु कहां समाई ।
 ए संसा मोहि निस दिन व्यापै, कोइ न कहै समझाई ॥टेक॥
 नहीं ब्रह्मंड प्यंड पुनि नाहीं, पंचतत भी नाहीं ।
 इला प्यंगुला सुधमन नाहीं, ए गुंण कहां समाहीं ॥

नहीं प्रिह द्वार कछू नहीं तहियाँ, रचनहार पुनि नाहीं ।
 जोवनहार अतीत सदा संगि, ये गुंण तहां समाहीं ॥
 तूटै बँधै बँधै पुनि तूटै, जब तब होइ बिनासा ।
 तब को ठाकुर अब को सेवग, को काकै विसवासा ॥
 कहै कबीर यहु गगन न बिनसै, जौ धागा उनमांन ।
 सीखे सुनं पढ़े का होई, जौ नहीं पदहि समांन ॥३२॥

ता मन कौं खोजहु रे भाई, तन छूटे मन कहां समाई ॥टेक॥
 सनक सनंदन जै देवनांमां, भगति करी मन उनहुं न जानां ॥
 सिव विरंचि नारद मुनि ग्यानीं, मन की गति उनहुं नहीं जानीं ॥
 धू प्रहिलाद बभीषन सेवा, तन भोतरि मन उनहुं न देषा ॥
 ता मन का कोई जानै भेव, रंचक लीन भया सुषदेव ॥
 गोरष भरथरी गोपीचंदा, ता मन सौं मिलि करै अनंदा ॥
 अकल निरंजन सकल सरीरा, ता मन सौं मिलि रह्या कबोरा ॥३३॥

भाई रे बिरले दोसत कबोर के, यहु तत बार बार कासों कहिये ।
 भांनण घड़ण संवारण संम्रथ, ज्यूं राषै त्यूं रहिये ॥ टेक ॥
 आलम दुनीं सबै फिरि खोजी, हरि बिन सकल अयानां ।
 छह दरसन छयांनवै पाषंड, आकुल किनहुं न जानां ॥
 जप तप संजम पूजा अरचा, जोतिग जग बैरानां ।
 कागद लिखि लिखि जगत भुलानां, मनहीं मन न समाना ॥
 कहै कबोर जोगी अरु जंगम, ए सब भूठी आसा ।
 गुर प्रसादि रटौ चात्रिग ज्यूं, निहचै भगति निवासा ॥ ३४ ॥

कितेक सिव संकर गए ऊठि,

रांम संमाधि अजहुं नहीं छूटि ॥ टेक ॥

प्रलै काल कहूं कितेक भाष, गये इंद्र से अगिणत लाष ॥
 ब्रह्मा खोजि परगौ गहि नाल, कहै कबोर वै रांम निराल ॥३५॥

अच्यंत च्यंत ए माधौ, सो सब मांहिं समानां ।

ताहि छाड़ि जे आन भजत हैं, ते सब भ्रमि भुलानां ॥टेक॥

ईस कहै मैं ध्यान न जानूं, दुरलभ निज पद मोहीं ।

रंचक करुणां कारणि केसौ, नांव धरण कौं तोहीं ॥

कहौ घौं सबद कहां थैं आवै, अरु फिरि कहां समाई ।

सबद अतीत का मरम न जानै, भ्रमि भूली दुनियाई ॥

प्यंड मुक्ति कहां ले कीजै, जौ पद मुक्ति न होई ।

पंडै मुक्ति कहत हैं मुनि जन, सबद अतीत था सोई ॥

प्रगट गुपत गुपत पुनि प्रगट, सो कत रहै लुकाई ।

कबीर परमानंद मनाये, अकथ कथ्यौ नहीं जाई ॥ ३६ ॥

सो कछू विचारहु ँडित लोई,

जाकै रूप न रेष बरण .नहीं कोई ॥ टेक ॥

उपलै प्यंड प्रांन कहां थैं आवै, मृवा जीव जाइ कहां समावै ॥

द्वी कहां करहि विश्रामां, सो कत गया जो कहता रामा ॥

पंचतत तहां सबद न स्वादं, अलष निरंजन विद्या न बादं ॥

कहै कबीर मन मनहि समानां, तब आगम निगम भूठ करि जानां ३७

जौ पै बीज रूप भगवाना,

तौ ँडित का कथिसि गियाना ॥टेक॥

नहीं तन नहीं मन नहीं अहंकारा, नहीं सत रज तम तीनि प्रकारा ॥

विष अमृत फल फले अनेक, बेद रु बोधक हैं तरु एक ॥

कहै कबीर इहै मन माना, कहिधूँ छूट कवन उरभाना ॥ ३८ ॥

पांडे कौन कुमति तोहि लागी,

तूं राम न जपहि अभागी ॥ टेक ॥

बेद पुरांन पढत अस पांडे, खर चंदन जैसें भारा ।

राम नाम तत समभूत नाहीं, अंति पड़ै मुखि छारा ॥

बेद पढ्याँ का यह फल पांडे, सब घटि देखै रांमां ।
जन्म मरन थै तौ तूँ छूटै, सुफल हूँहि सब कांमां ॥
जीव बधत अरू धरम कहत हौ, अधरम कहाँ है भाई ।
आपन तौ मुनिजन हूँ बैठे, का सनि कहाँ कसाई ॥
नारद कहै व्यास यौं भाषै, सुखदेव पूछौ जाई ।
कहै कबीर कुमति तब छूटै, जे रहौ रांम ल्यौ लाई ॥ ३८ ॥

पडित बाद बंदते भूठा ।

रांम 'कह्यां दुनियां गति पावै, पांड कह्यां मुख मीठा ॥ टेक ॥
पावक कह्यां पाव जे दाभै, जल कहि त्रिषा बुभाई ।
भोजन कह्यां भूष जे भाजै, तौ सब कोई तिरि जाई ॥
नर कै साथि सूवा हरि बोलै, हरि परताप न जानै ।
जो कबहुँ उड़ि जाइ जंगल में, बहुरि न सुरतें आनै ॥
साची प्रीति विषै माया सूँ, हरि भगतनि सूँ हासी ।
कहै कबीर प्रेम नहीं उपज्यौ, बांध्यौ जमपुरि जासी ॥ ४० ॥

जौ पै करता बरख विचारै,

तौ जनमत तीनि डाँडि किन सारै ॥ टेक ॥

उतपति व्यंद कहाँ थै आया,

जोति धरी अरू लागी माया ॥

(४०) इसके आगे ख० प्रति में यह पद है—

काहे कौं कीजै पांडे छोति बिचारा ।
छोतिहीं तै उपना सब संसारा ॥ टेक ॥
हंमारै कैसें लोहू तुम्हारै कैसें दूध ।
तुम्ह कैसें बांम्हण पांडे हंम कैसें सूद ॥
छोति छोति करता तुम्हहीं जाए ।
तौ प्रभवास कहें कौं आए ॥
जनमत छोट मरत ही छोति ।
कहै कबीर हरि की निमल जोति ॥ ४० ॥

नहीं को ऊंचा नहीं को नीचा,
 जाका प्यंड ताही का सींचा ॥
 जे तूं बांभन बभनों जाया,
 तौ आन बाट हूँ काहे न आया ॥
 जे तूं तुरक तुरकनों जाया,
 तौ भीतरि खतनां क्युं न कराया ॥
 कहै कबीर मधिम नहीं कोई,
 सो मधिम जा मुखि राम न होई ॥ ४१ ॥

कथता बकता सुरता सोई, आप बिचारै सो ग्यानी होई ॥टेक॥
 जैसै अगिन पवन का मेला, चंचल चपल बुधि का खेला ।
 नव दरवाजे दसूं दुवार, बूझि रे ग्यानी ग्यान बिचार ॥
 देही माटी बोलै पवनां, बूझि रे ग्यानीं मूवा स कौनां ।
 मुई सुरति बाद अहंकार, वह न मूवा जो बोलणहार ॥
 जिस कारनि तटि तीरथि जांहीं, रतन पदारथ घट हीं मांहीं ।
 पढ़ि पढ़ि पंडित बेद बषाणै, भीतरि हूती बसत न जांणै ॥
 हूं न मूवा मेरी मुई बलाइ, सो न मुवा जो रह्या समाइ ।
 कहै कबीर गुरु ब्रह्म दिखाया, मरता जाता नजरि न आया ॥४२॥

हम न मरै मरिहै संसारा, हंम कूं मिल्या जियावनहारा ॥टेक॥
 अब न मरौं मरनै मन मांनां, तेई मूए जिनि राम न जानां ॥
 साकत मरै संत जन जीवै, भरि भरि राम रसाइन पीवै ॥
 हरि मरिहै तौ हमहूँ मरिहै, हरि न मरै हंम काहे कूं मरिहै ॥
 कहै कबीर मन मनहि मिलावा, अमर भये सुख सागर पावा ॥४३॥

कौन मरै कौन जनमै आई, सरग नरक कौनै गति पाई ॥टेक॥
 पंचतत अबिगत थैं उतपनां, एकै किया निवासा ।
 बिछुरे तत फिरि सहजि समांनां, रेख रही नहीं आसा ॥

जल में कुंभ कुंभ मैं जल है, बाहरि भीतरि पानीं ।
 फूटा कुंभ जल जलहि समांना, यहु तत कथौ गियानीं ॥
 आर्द्धे गगनां अंतै गगनां, मधे गगनां भाई ।
 कहै कबीर करम किस लागै, भूठी संक उपाई ॥ ४४ ॥

कौन मरै कहु पंडित जनां, सो समझाइ कहौ हम सनां ॥ टेक ॥
 माटी माटी रही समाइ, पवनै पवन लिया सँगि लाइ ॥
 कहै कबीर सुनि पंडित गुनी, रूप मूवा सब देखै दुनीं ॥ ४५ ॥

जे को मरै मरन है मीठा,
 गुर प्रसादि जिनहीं मरि दीठा ॥ टेक ॥
 मूवा करता मुई ज करनीं, मुई नारि सुरति बहु धरनीं ॥
 मूवा आपा मूवा मान, परपंच लेइ मूवा अभिमान ॥
 राम रमें रमि जे जन मूवा, कहै कबीर अविनासी हूवा ॥ ४६ ॥

जस तूं तस तोहि कोई न जान,
 लोग कहैं सब आनहि आन ॥ टेक ॥
 चारि बेद चहुँ मत का बिचार, इहि भ्रमि भूलि परयौ संसार ॥
 सुरति सुमृति दोइ कौ बिसवास, बाझि परयौ सब आसा पास ॥
 ब्रह्मादिक सनकादिक सुर नर, मैं वपुरौ धूं का मैं का कर ॥
 जिहि तुम्ह तारौ सोई पै तिरई, कहै कबीर नांतर बांध्यौ मरई ॥ ४७ ॥

लोका तुम्ह ज कहत हौ नंद कौ नंदन, नंद कहौ धूं काकौ रे ।
 धरनि अकास दोऊ नहीं होते, तब यहु नंद कहाँ थौ रे ॥ टेक ॥
 जामैं मरै न संकृति आवै, नांव निरंजन जाकौ रे ।
 अविनासी उपजै नहिं बिनसै, संत सुजस कहैं ताकौ रे ॥

लष चौरासी जीव जंत मैं भ्रमत भ्रमत नंद थाकौ रे ॥
 दास कबीर कौ ठाकुर ऐसो, भगति करै हरि ताकौ रे ॥ ४८ ॥

निरगुण राम निरगुण राम जपहु रे भाई,
 अबिगति की गति लखी न जाई ॥ टेक ॥
 चारि बेद जाकै सुमृत पुरांनां, नौ व्याकरनां मरम न जानां ॥
 सेस नाग जाकै गरड़ समानां, चरन कवल कवला नहीं जानां ॥
 कहै कबीर जाकै भेदै नाहीं, निज जन बैठे हरि की छाँहीं ॥ ४९ ॥

मैं सबनि मैं औरनि मैं हूं सब ।
 मेरी बिलगि बिलगि बिलगाई हो,
 कोई कहौ कबीर कोई कहौ राम राई हो ॥ टेक ॥
 नां हम बार बूढ़ नांहीं हम, नां हमरै चिलकाई हो ।
 पठए न जाँऊं अरवा नहीं आँऊं, सहजिरहुं हरिआई हो ॥
 वोढन हमरै एक पछेवरा, लोक बोलै इकताई हो ।
 जुलहै तनि बुनि पांन न पावल, फारि बुनी दस ठाईं हो ॥
 त्रिगुण रहित फल रमि हम राखल, तब हमारौ नाउं राम राई हो ।
 जग मैं देखौं जग न देखै मोहि, इहि कबीर कछु पाई हो ॥ ५० ॥

लोका जानि न भूलौ भाई ।
 खालिक खलक खलक मैं खालिक, सब घट रह्यौ समाई ॥ टेक ॥
 अला एकै नूर उपनाया, ताकी कैसी निंदा ।
 ता नूर थैं सब जग कीया, कौन भला कौन मंदा ॥
 ता अला की गति नहीं जानौं, गुरि गुड़ दीया मीठा ।
 कहै कबीर मैं पूरा पाया, सब घटि साहिब दोठा ॥ ५१ ॥

रांम मोहि तारि कहाँ लै जैहो ।

सो बैकुंठ कहौ धूँ कैसा, करि पसाव मोहि दैहो ॥ टेक ॥

जे मेरे जीव दोइ जानत हौ, तौ मोहि मुक्ति बताओ ।

एकमेक रमि रह्या सबनि में, तौ काहे भरमावौ ॥

तारण तिरण जबै लग कहिये, तब लग तत न जानां ।

एक रांम देख्या सबहिन में, कहै कबीर मन मानां ॥ ५२ ॥

सोहं हंसा एक समान, काया के गुंण आनहि आन ॥ टेक ॥

माटी एक सकल संसारा, बहु बिधि भांडे घड़ै कुंभारा ॥

पंच बरन दस दुहिये गाइ, एक दूध देखौ पतियाइ ॥

कहै कबीर संसा करि दूरि, त्रिभवननाथ रह्या भरपूर ॥ ५३ ॥

प्यारे रांम मनहीं मनां ।

कासूँ कहूं कहन कौं नाहीं, दूसर और जनां ॥ टेक ॥

ज्यूँ दरपन प्रतिव्यं ब देखिए, आप दवासूँ सोई ।

संसौ मिथ्यौ एक कौ एकै, महा प्रलै जब होई ॥

जौ रिभ्रं तौ महा कठिन है, बिन रिभ्रयै थै सब खाटी ।

कहै कबीर तरक दोइ साथै, ताकी मति है मोटी ॥ ५४ ॥

हंम तौ एक एक करि जानां ।

दोइ कहैं तिनहीं कौं दोजग, जिन नाहिन पहिचानां ॥ टेक ॥

एकै पवन एक ही पानीं, एक जोति संसारा ।

एक ही खाक घड़े सब भांडे, एकही सिरजनहारा ॥

जैसैं बाढो काष्ट ही काटै, अगिनि न काटै कोई ।

सब घटि अंतरि तूँहीं व्यापक, धरै सरूपैं सोई ॥

माया मोहे अर्थ देखि करि, काहे कूं गरबानां ।

निरभै भया कछू नहीं व्यापै, कहै कबीर दिवानां ॥ ५५ ॥

अरे भाई देइ कहां सो मोहि बतावौ,
बिचिही भरम का भेद लगावौ ॥ टेक ॥

जोनि उपाइ रची द्वै धरनीं, दीन एक बीच भई करनीं ॥
रांम रहीम जपत सुधि गई, उनि माला उनि तसबी लई ॥
कहै कबीर चेतहु रे भौंदू, बोलनहारा तुरक न हिंदू ॥ ५६ ॥

ऐसा भेद बिगूचन भारी ॥

बेद कतेब दीन अरु दुनियां, कौन पुरिष कौन नारी ॥ टेक ॥

एक बूंद एकै मल मूतर, एक चांम एक गूदा ।
एक जोति थै सब उतपनां, कौन बांम्हन कौन सूदा ॥
माटो का प्यंङ सहजि उतपनां, नाद रु व्यंङ समानां ।
बिनसि गयां थै का नांव धरिहौ, पढ़ि गुनि भ्रंम जानां ॥
रज गुन ब्रह्मा तम गुन संकर, सत गुन हरि है सोई ।
कहै कबीर एक रांम जपहु रे, हिंदू तुरक न कोई ॥ ५७ ॥

हंमारै रांम रहीम करीमा केसो, अलह रांम सति सोई ।
बिसमिल मेटि बिसंभर एकै, और न दूजा कोई ॥ टेक ॥

इनकै काजी मुलां पीर पैकंबर, रोजा पछिम निवाजा ।
इनकै पूरब दिसा देव दिज पूजा, ग्यारसि गंग दिवाजा ॥
तुरक मसीति देहु रै हिंदू, दहूँठां रांम खुदाई ।
जहाँ मसीति देहुरा नाहीं, तहाँ काकी ठकुराई ॥
हिंदू तुरक दोऊ रह तूटी, फूटी अरु कनराई ।
अरध उरध दसहूँ दिस जित तित, पूरि रह्या रांम राई ॥
कहै कबीरा दास फकीरा, अपनी रहि चलि भाई ।
हिंदू तुरक का करता एकै, ता गति लखी न जाई ॥ ५८ ॥

काजी कौन कतेब बषानै ।

पढ़त पढ़त केते दिन बोते, गति एकै नहां जानै ॥ टेक ॥
सकति से नेह पकरि करि सुनति, यहु नबदूँ रे भाई ।
जौर खुदाइ तुरक मोहि करता, तौ आपै कटि किन जाई ॥
हैं तौ तुरक किया करि सुनति, औरति सौँ का कहिये ।
अरध सरीरी नारि न छूटै, आधा हिंदू रहिये ॥
छाड़ि कतेब रांम कहि काजी, खून करत हौ भारी ।
पकरी टेक कबार भगति की, काजी रहे भूष मारी ॥ ५८ ॥

मुलां कहां पुकारै दूरि, रांम रहीम रह्या भरपूरि ॥ टेक ॥
यहु तौ अलह गुंगा नाहीं, देखै खलक दुर्नी दिल माहीं ॥
हरिगुंन गाइ बंग मैं दोन्हां, काम क्रोध दोऊ बिसमल कीन्हां ॥
कहै कबीर यहु मुलनां भूठा, रांम रहोंम सबनि मैं दोठा ॥ ६० ॥

पढि ले काजी बंग निवाजा,
एक मसीति दसौँ दरवाजा ॥ टेक ॥
मन करि मका कविला करि देही, बोलनहार जगत गुर येही ॥
उहां न दोजग भिस्त मुकांमां, इहां हीं रांम इहां रहिमांमां ॥
बिसमल तांमस भरंम कं दूरी, पंचूँ भषि ज्युं होइ सबूरी ॥
कहै कबीर मैं भया दिवांमां, मनवां मुसि मुसि सहजि समांमां ॥ ६१ ॥

मुलां करि ल्यौ न्याव खुदाई,
इहि बिधि जीव का भरम न जाई ॥ टेक ॥
सरजी आनैँ देह बिनासै, माटो बिसमल कीता ।
जोति सरूपी हाथि न आया, कहौ हलाल क्या कीता ॥
बेद कतेब कहौ कयूं भूठा, भूठा जो नि बिचारै ।

सब घटि एक एक करि जानै, भौं दूजा करि मारै ॥
 कुकड़ी मारै बकरी मारै, हक हक करि बोलै ।
 सबै जीव साईं के प्यारे, उबरहुगे किस बोलै ॥
 दिल नहीं पाक पाक नहीं चीन्हां, उसदा षोज न जानां ।
 कहै कबीर भिसति छिटकाई, दोजग ही मन मानां ॥ ६२ ॥

या करीम बलि हिकमति तेरी,
 खाक एक सूरति बहु तेरी ॥ टेक ॥
 अर्ध गगन मैं नीर जमाया, बहुत भांति करि नूरनि पाया ॥
 अवलि आदम पीर मुलानां, तेरी सिफति करि भये दिवानां ॥
 कहै कबीर यहु हेत विचारा, या रब या रब यार हमारा ॥ ६३ ॥

काहे री नलनीं तूं कुमिलानीं,
 तेरे ही नालि सरोवर पानीं ॥ टेक ॥
 जल मैं उतपति जल मैं बास, जल मैं नलनीं तोर निवास ॥
 ना तलि तपति न ऊपरि आगि, तोर हेत कहु कासनि लागि ॥
 कहै कबीर जे उदिक समान, ते नहीं मूए हंमारे जान ॥ ६४ ॥

इब तू हसि प्रभू मैं कुछ नाहीं,
 पंडित पढि अभिमान नसाहीं ॥ टेक ॥
 मैं मैं मैं जब लग मैं कीन्हां, तब लग मैं करता नहीं चीन्हां ॥
 कहै कबीर सुनहु नरनाहा, नां हम जीवत न मूवाले माहां ॥ ६५ ॥

अब का डरौं डर डरहि समांनां,
 जब थै मोर तोर पहिचांनां ॥ टेक ॥
 जब लग मोर तोर करि लीन्हां, भै भै जनमि जनमि दुख दोन्हां ।
 आगम निगम एक करि जानां, ते मनवां मन मांहि समांनां ॥

जब लग ऊंच नींच करि जानां, ते पसुवा भूले भ्रम नांनां ॥
कहि कबीर मैं मेरी खोई, तबहि राम अवर नहीं कोई ॥ ६६ ॥

बोलनां का कहिये रे भाई, बोलत बोलत तत नसाई ॥ टेक ॥

बोलत बोलत बटै बिकारा, बिन बोल्यां क्यूं होइ विचारा ॥
संत मिलै कछु कहिये कहिये, मिलै असंत मुष्टि करि रहिये ॥
ग्यानीं सूं बोल्यां हितकारी, मूरिख सूं बोल्यां भ्रम मारी ॥
कहै कबीर आधा घट डोलै, भरया होइ तौ मुषां न बोलै ॥ ६७ ॥

बागड़ देस लूवन का घर है,

तहां जिनि जाइ दाभन का डर है ॥ टेक ॥

सब जग देखौं कोई न धीरा, परत धूरि सिरि कहत अबीरा ॥
न तहां सरवर न तहां पांणीं, न तहां सतगुर साधू बाणां ॥
न तहां कोकिल न तहां सूवा, ऊंचै चढ़ि चढ़ि हंसा मूवा ॥
देस मालवा गहर गंभीर, डग डग रोटी पग पग नीर ॥
कहै कबीर घरहीं मन मानां, गूंगे का गुड़ गूंगै जानां ॥ ६८ ॥

अवधू जोगी जग थै न्यारा ।

मुद्रा निरति सुरति करि सींगी, नाद न षंढै धारा ॥ टेक ॥

बसै गगन मैं दुनीं न देखै, चेतनि चौकी बैठा ।
चढ़ि अकास आसण नहीं छाड़ै, पीवै महा रस मीठा ॥
परगट कंथां मांहीं जोगी, दिल मैं दरपन जोवै ।
सहंस इकीस छ सै धागा, निहचल नाकै पोवै ॥
ब्रह्म अगनि मैं काया जारै, त्रिकुटी संगम जागै ।
कहै कबीर सोई जोगेस्वर, सहज सुनि ल्यौ लागै ॥ ६९ ॥

अवधू गगन मंडल घर कीजै ।

अमृत भरै सदा सुख उपजै, बंक्र नालि रस पीवै ॥ टेक ॥

मूल बांधि सर गगन समानां, सुषमन यों तन लागी ।

कांम क्रोध दोऊ भया पलीता, तहां जोगणीं जागी ॥

मनवां जाइ दरीवै बैठा, मगन भया रसि लागा ।

कहै कबीर जिय संसा नाहीं, सबद अनाहद बागा ॥७०॥

कोई पीवै रे रस राम नाम का, जो पीवै सो जोगी रे ।

संतै सेवा करौ राम की, और न दूजा भोगी रे ॥ टेक ॥

यहु रस तौ सब फीका भया, ब्रह्म अगनि परजारी रे ।

ईश्वर गौरी पीवन लागे, राम तनीं मतिवारी रे ॥

चंद सूर दोइ भाठी कीन्हों, सुषमनि चिगवा लागी रे ।

अमृत कूं पी सांचा पुरया, मेरी त्रिणां भागी रे ॥

यहु रस पीवै गूंगा गहिला, ताकी कोई न बूझै सार रे ।

कहै कबीर महा रस महंगा, कोई पीवैगा पीवणहार रे ॥ ७१ ॥

अवधू मेरा मन मतिवारा ।

उन्मनि चह्या मगन रस पीवै, त्रिभवन भया उजियारा ॥ टेक ॥

गुड़ करि ग्यांन ध्यांन कर महुवा, भव भाठी करि भारा ।

सुषमन नारी सहजि समानों, पीवै पीवनहारा ॥

दोइ पुड़ जोड़ि चिगाई भाठी, चुया महा रस भारी ।

कांम क्रोध दोइ किया बलीता, छूटि गई संमारी ॥

सुनि मंडल मैं मंदला बाजै, तहां मेरा मन नाचै ।

गुर प्रसादि अमृत फल पाया, सहजि सुषमनां काछै ॥

(७१) ख०—चंद सूर दोइ किया पयाना ।

(७२) ख०—उन्मति चह्या महारस पीवै,

पूरा मिल्या तवै सुष उपनां ।

पूरा मिल्या तबैं सुष उपज्यौ, तन की तपति बुझानी ।
कहै कबीर भवबंधन छूटै, जोतिहि जोति समाना ॥ ७२ ॥

छाकि परयो आतम मतिवारा,

पीवत रांम रस करत बिचारा ॥ टेक ॥

बहुत मोलि महँगै गुड़ पावा, लै कसाब रस रांम चुवावा ॥
तन पाटन मैं कीन्ह पसारा, मांगि मांगि रस पीवै बिचारा ॥
कहै कबीर फावो मतिवारी, पीवत रांम रस लगी खुमारी ॥ ७३ ॥

बोलौ भाई रांम की दुहाई ।

इहि रसि सिव सनकादिक माते, पीवत अजहूँ न अघाई ॥ टेक ॥

इला प्यंगुला भाठी कीन्हीं, ब्रह्म अगनि परजारी ।
ससि हर सूर द्वार दस मूंदे, लागी जोग जुग तारी ॥
मन मतिवाला पीवै रांम रस, दूजा कछू न सुहाई ।
बलटी गंग नीर वहि आया, अमृत धार चुवाई ॥
पंच जने सो सँग करि लीन्हें, चलत खुमारी लागी ।
प्रेम पियालै पीवन लागे, सोवत नागिनी जागी ॥
सहज सुनि मैं जिनि रस चाख्या, सतगुर थै सुधि पाई ।
दास कबीर इहि रसि माता, कबहूँ उछकि न जाई ॥ ७४ ॥

रांम रस पाईया रे, तथै बिचरि गये रस और ॥ टेक ॥

रे मन तेरा को नहीं, खैचि लेइ जिनि भार ।
बिरषि बसेरा पंषि का, ऐसा माया जाल ॥
और मरत का रोइए, जो आया थिर न रहाइ ।
जो उपज्या सो बिनसिहै, तथै दुख करि मरै बलाइ ॥
जहां उपज्या तहां फिरि रक्या रे, पीवत मरदन लाग ।
कहै कबीर चित चेतिया, तथै रांम सुमरि बैराग ॥ ७५ ॥

रांम चरन मनि भाए रे ।

अस ढरि जाहु रांय के करहा, प्रेम प्रीति ल्यौ लाये रे ॥टेक॥

आंन चढ़ी अंबली रे अंबली, बबूर चढ़ी नग बेली रे ।

द्वै थर चढ़ि गयौ रांड कौ करहा, मनह पाट की सैली रे ॥

कंकर कूई पतालि पनियां, सूनै बूंद बिकाई रे ।

बजर परौ इहि मथुरा नगरी, कान्ह पियासा जाई रे ॥

एक दहिड़िया दही जमायौ, दुसरी परि गई साई रे ।

न्यूति जिमांऊं अपनौं करहा, छार मुनिस की डारी रे ॥

इहि बंनि बाजै मदन भेरि रे, उहि बंनि बाजै तूरा रे !

इहि बंनि खेलै राही रुकमनि, उहि बंनि कान्ह अहीरा रे ॥

आसि पासि तुरसी कौ बिरवा, माहि द्वारिका गांऊं रे ।

तहां मेरौ ठाकुर रांम राइ है, भगत कबीरा नांऊं रे ॥ ७६ ॥

थिर न रहै चित थिर न रहै, ज्यंतामणि तुम्ह कारणि हो ।

मन मैले मैं फिरि फिरि आहैं, तुम सुनहुँ न दुख बिसरावन हो ॥टेक॥

प्रेम खटोलवा कसि कसि बांध्यौ, बिरह बांन तिहि लागू हो ।

तिहि चढ़ि इंइऊँ करत गवंसियां, अंतरि जमवा जागू हो ॥

महरू मछा मारि न जानै, गहरै पैठा धाई हो ।

दिन इक मगरमछ लै खैहै, तब को रखिहै बंधन भाई हो ॥

महरू नाम हरइये जानै, सबद न बूझै बैरा हो ।

चारै लाइ सकल जग खायौ, तऊ न भेटि निसहुरा हो ॥

जौ महाराज चाहै महरइये, तौ नाथौ ए मन बैरा हो ।

तारी लाइकै सिष्टि बिचारौ, तब गहि भेटि निसहुरा हो ॥

टिकुटी भई कान्ह कै कारणि, भ्रंमि भ्रंमि तीरथ कीन्हां हो ।

सो पद देहु मोहि मदन मनोहर, जिहि पदि हरि मैं चीन्हां हो ॥

दास कबीर कीन्ह अस गहरा, बूझै कोई महरा हो ।
यहु संसार जात मैं देखौं, ठाढा रहै कि निहुरा हो ॥ ७७ ॥

बीनती एक रांम सुनि थोरी, अब न बचाइ राखि पति मोरी॥टेक॥
जैसैं मंदला तुमहि बजावा, तैसैं नाचत मैं दुख पावा ॥
जे मसि लागी सबै छुड़ावौ, अब मोहि जिनि बहु रूपक छावौ ॥
कहै कबीर मेरी नाच उठावौ, तुम्हारे चरन कवल दिखलावौ ॥७८॥

मन थिर रहै न घर ह्वै मेरा, इन मन घर जारे बहुतेरा ॥टेक॥
घर तजि बन बाहरि कियो बास, घर बन देखौं दोऊ निरास ॥
जहां जाऊं तहां सोग संताप, जुरा मरण कौ अधिक बियाप ॥
कहै कबीर चरन तोहि बंदा, घर मैं घर दे परमानंदा ॥ ७९ ॥

कैसे नगरि करौं कुटवारी, चंचल पुरिष विचषन नारी॥टेक॥
बैल बियाइ गाइ भई बांझ, बछरा दूहै तीन्यूं सांझ ॥
मकड़ो घरि माषी छछि हारी, मास पसारि चील्ह रखवारी ॥
मूसा खेवट नाव बिलइया, मींडक सोवै साप पहरइया ॥
नित उठि स्याल स्यंघ सूं भूझै, कहै कबीर कोई बिरला बूझै॥८०॥

भाई रे चूंन बिलूंटा खाई ,
बाघनि संगि भई सबहिन कै, खसम न भेद लहाई ॥ टेक ॥
सब घर फोरि बिलूंटा खायौ, कोई न जानैं भेव ।
खसम निपूतौ आंगणि सूतौ, रांड न देई लेव ॥
पाड़ोसनि पनि भई बिरांनों, माहि हुई घर घालै ।
पंच सखी मिलि मंगल गावैं, यहु दुख याकौं सालै ॥
द्वै द्वै दीपक घरि घरि जोया, मंदिर सदा अंधारा ।
घर घेहर सब आप सवारथ, बाहरि किया पसारा ॥

होत उजाड़ सबै कोई जानै, सब काहू मनि भावै ।
कहै कबीर मिलै जे सतगुर, तौ यहू चून छुड़ावै ॥ ८१ ॥

बिषिया अजहूं सुरति सुख आसा,
हूंण न देइ हरि के चरन निवासा ॥ टेक ॥
सुख मांगै दुख पहली आवै, ताथै सुख मांग्या नहीं भावै ॥
जा सुख थै सिव बिरंचि डरानां, सो सुख हमहु साच करि जाना ॥
सुखि छयाड्या तब सब दुख भागा, गुर के सबद मेरा मन लागा ॥
निस बासुरि बिषैतनां उपगार, बिषई नरकि न जातां बार ॥
कहै कबीर चंचल मति त्यागी, तब केवल राम नाम ल्यौ लागी ॥ ८२ ॥

तुम्ह गारड़ू मैं विष का माता,
काहे न जिवावै मेरे अमृतदाता ॥ टेक ॥
संसार भवंगम डसिते काया,
अरु दुख दारन व्यापै तेरी माया ॥
सापनि एक पिटारै जागै,
अह निसि रोवै ताकूँ फिरि फिरि लागै ॥
कहै कबीर को को नहीं राखे,
राम रसाइन जिनि जिनि चाखे ॥ ८३ ॥

माया तजूं तजी नहीं जाइ,
फिर फिर माया मोहि लपटाइ ॥ टेक ॥
माया आदर माया मान, माया नहीं तहां ब्रह्म गिर्यान ॥
माया रस माया कर जान, माया कारनि तजै परान ॥
माया जप तप माया जोग, माया बांधे सबही लोग ॥

(८१) ख०—सखम न भेद लषाई ॥

(८२) ख०—हैन न देई हरि के चरन निवासा ।

माया जल थलि माया आकासि, माया व्यापि रही चहुँ पासि ॥
 माया माता माया पिता, अति माया अस्तरी सुता ॥
 माया मारि करै व्यौहार, कहै कबीर मेरे राम आधार ॥ ८४ ॥

ग्रिह जिनि जानौं रुड़ौ रे ।

कंचन कलस उठाइ लै मंदिर, राम कहे बिन धूरौ रे ॥ टेक ॥
 इन ग्रिह मन डहके सबहिन के, काहु कौ परगौ न पूरौ रे ।
 राजा राणां राव छत्रपति, जरि भये भसम कौ कूरौ रे ॥
 सबथै नोंकी संत मँडलिया, हरि भगतनि कौ भेरौ रे ।
 गोबिंद के गुन बैठे गैहैं, खैहैं दूकौ टेरौ रे ॥
 ऐसै जानि जपौ जग-जीवन, जम सूं तिनका तोरौ रे ॥
 कहै कबीर राम भजवे कौं, एक आध कोई सूरौ रे ॥ ८५ ॥

रंजसि मीन देखि बहु पांनों,

काल जाल की खबरि न जानौं ॥ टेक ॥

गारै गरव्यौ औघट घाट,

सो जल छाड़ि बिकानौं हाट ॥

बंध्यौ न जानै जल उदमादि,

कहै कबीर सब मोहै स्वादि ॥ ८६ ॥

काहे रे मन दह दिसि धावै,

बिषिया संगि संतोष न पावै ॥ टेक ॥

जहां जहां कलपै तहां तहां बंधनां,

रतन कौ थाल कियौ तै रंधनां ॥

जौ पै सुख पर्ययत इन माहीं,

तौ राज छाड़ि कत बन कौं जाहीं ॥

आनंद सहत तजौ बिष नारी,
 अब क्या भीषै पतित भिषारी ॥
 कहै कबीर यहु सुख दिन चारि,
 तजि विषिया भजि चरन मुरारि ॥ ८७ ॥

जियरा जाहि गौ मैं जानां ।
 जो देख्या सो बहुरि न पेय्या, माटी सूं लपटानां ॥ टेक ॥
 बाकुल बसतर किता पहरिबा, का तप बनखंडि बासा ।
 कहा मुगधरे पांहन पूजै, काजल डारै गाता ॥
 कहै कबीर सुर मुनि उपदेसा, लोका पंथि लगाई ।
 सुनों संतौ सुमिरौ भगत जन, हरि बिन जनम गवाई ॥ ८८ ॥

हरि ठग जग कौं ठगौरी लाई,
 हरि कै बियोग कैसें जीऊं मेरी माई ॥ टेक ॥
 कौन पुरिष को काकी नारी,
 अभि-अंतरि तुम्ह लेहु विचारी ॥
 कौन पूत को काकौ बाप,
 कौन मरै कौन करै संताप ॥
 कहै कबीर ठग सौं मनमानां,
 गई ठगौरी ठग पहिचानां ॥ ८९ ॥

साईं मेरे साजि दई एक डोली,
 हस्त लोक अरु मैं तै बोली ॥ टेक ॥
 इक भंभर सम सूत खटोला,
 त्रिस्नां बाव चहुँ दिसि डोला ॥
 पांच कहार का मरम न जानां,
 एकै कछा एक नहीं मानां ॥

भूभर घाम उहार न छावा,
नैहरि जात बहुत दुख पावा ॥
कहै कबीर बर बहु दुख सहिये,
राम प्रीति करि संगही रहिये ॥ ६० ॥

बिनसि जाइ कागद की गुड़िया,
जब लग पवन तबै लगै उड़िया ॥ टेक ॥
गुड़िया कौ सबद अनाहद बोलै, खसम लियै कर डोरो डोलै ॥
पवन थक्यौ गुड़िया ठहरांनीं, सीस धुनै धूनि रोवै प्रांनीं ॥
कहै कबीर भजि सारंग पानीं, नहीं तरहैहै खैवा तांनीं ॥ ६१ ॥

मन रे तन कागद का पुतला ।
लागै बूंद बिनसि जाइ छिन मैं, गरब करै क्या इतना ॥ टेक ॥
माटी खोदहिं भीत उसारै, अंध कहै घर मेरा ।
आवै तलब बाधि लै चालै, बहुरि न करिहै फेरा ॥
खोट कपट करि यहु धन जोरगौ, लै धरती मैं गाड़गौ ।
रोक्यौ घटि सास नहीं निकसै, ठौर ठौर सब छाड़गौ ॥
कहै कबीर नट नाटिक थाके, मदला कौन बजावै ।
गये पषनियां उभरी बाजी, को काहू कै आवै ॥ ६२ ॥

भूठे तन कौ कहा रवइये,
मरिये तौ पल भरि रहण न पइये ॥ टेक ॥
पीर षाड़ घृत प्यंड संवारा,
प्राण गये लो बाहरि जारा ॥
चोवा चंदन चरचत अंगा,
सो तन जरै काठ के संग ॥

दास कबीर यहु कीन्ह बिचारा,
इक दिन हूँ है हाल हमारा ॥ ८३ ॥

देखहु यहु तन जरता है,
घड़ी पहर बिलंबौ रे भाई जरता है ॥ टेक ॥
काहे कौं एता किया पसारा,
यहु तन जरि बरि हूँ है छारा ॥
नव तन द्वादस लागी आगी,
मुगध न चेतै नख सिख जागी ॥
कांम क्रोध घट भरे बिकारा ,
आपहि आप जरै संसारा ॥
कहै कबीर हम मृतक समांनां ,
रांम नांम छूटे अभिमांनां ॥ ८४ ॥

तन राखनहारा को नाहीं,
तुम्ह सोचि बिचारि देखौ मन मांहीं ॥ टेक ॥
जौर कुटंब अपनौं करि पारयौ,
मूँड ठोकि ले बाहरि जारयौ ॥
दगाबाज लूटै अरु रोवै,
जारि गाडि पुर षोजहिं षोवै ॥
कहत कबीर सुनहुं रे लोई,
हरि बिन राखनहार न कोई ॥ ८५ ॥

अब क्या सोचै आइ बनीं,
सिर परि साहिब रांम धनीं ॥ टेक ॥
दिन दिन पाप बहुत में कीन्हां,
नहीं गोब्यंद की संक मनीं ।

लेख्यो भोमि बहुत पछितानौ,
लालचि लागौ करत घनीं ॥

छूटी फौज आनि गढ घेर्यौ,
उड़ि गयौ गूडर छाड़ि तनीं ।

पकर्यौ हंस जम ले चाल्यौ,
मंदिर रोवै नारि घनीं ॥

कहै कबीर राम किन सुमिरत,
चोन्हत नांहिन एक चिनीं ।

जब जाइ आइ पड़ोसी घेर्यौ,
छाड़ि चलयौ तजि पुरिष पनीं ॥ ८६ ॥

सुवटा डरपत रहु मेरे भाई, तोहि डराई देत बिलाई ॥
तीनि बार लूँधै इक दिन मैं, कबहूँ क खता खवाई ॥ टेक ॥

या मंजारी मुगध न मानै, सब दुनियां डहकाई ।
राणां राव रंक कौं व्यापै, करि करि प्रीति सवाई ॥
कहत कबीर सुनहु रे सुवटा, उबरै हरि सरनाई ।
लार्थो मांहिं तै लेत अचानक, काहू न देत दिखाई ॥ ८७ ॥

का मांगूं कुछ थिर न रहाई,
देखत नैन चल्या जग जाई ॥ टेक ॥

इक लष पूत सवा लष नाती, ता रावन घरि दीवा न बाती ॥
लंका सा कोट समंद सी खाई, ता रावन की खबरि न पाई ॥
आवत संग न जात संगती, कहा भयौ दरि बांधे हाथी ॥
कहै कबीर अंत की बारी, हाथ भाड़ि जैसै चले जुवारी ॥ ८८ ॥

राम थोरे दिन कौं का धन करनां,
धंधा बहुत निहाइति मरनां ॥ टेक ॥

कोटो धज साह हस्ती बंध राजा, क्रिपन को धन कौनै काजा ॥

धन कै गरबि रांम नहीं जानां, नागा ह्वै जंम पै गुदरांनां ॥
कहै कबीर चेतहु रे भाई, हंस गया कछु संगि न जाई ॥६६॥

काहे कूँ माया दुख करि जोरी,
हाथि चूँन गज पांच पछेवरी ॥ टेक ॥
नां को बंध न भाई साथी, बांधे रहे तुरंगम हाथी ॥
मैड़ी महल बावडो छाजा, छाड़ि गये सब भूपति राजा ॥
कहै कबीर रांम ल्यौ लाई, धरी रही माया काहू खाई ॥१००॥

माया का रस पाण न पावा,
तब लग जम बिलवा ह्वै धावा ॥ टेक ॥
अनेक जतन करि गाड़ि दुराई, काहू सांची काहू खाई ॥
तिल तिल करि यहु माया जोरी, चलती बेर तिणां ज्यूँ तोरी ॥
कहै कबीर हूँ ताका दास, माया माहीं रहै उदास ॥ १०१ ॥

मेरी मेरी दुनियां करते, मोह मछर तन धरते ।
आगै पीर मुकदम होते, वै भी गये यौं करते ॥ टेक ॥
किसकी ममां चचा पुंनि किसका, किसका पंगुड़ा जोई ।
यहु संसार बजार मंड्या है, जानैगा जन कोई ॥
मैं परदेसी काहि पुकारौं, इहां नहीं को मेरा ।
यहु संसार हूँदि सब देख्या, एक भरोसा तेरा ॥
खाहि हलाल हरांम निवारै, भिस्त तिनहु कौं होई ।
पंच तत का मरम न जानै, दोजगि पड़िहै सोई ॥
कुटंब कारणि पाप कमावै, तूँ जायै घर मेरा ।
ए सब मिले आप सवारथ, इहां नहीं को तेरा ॥

सायर उतरौ पंथ सँवारौ, बुरा न किसी का करणा ।
कहै कबीर सुनहु रे संतौ, ज्वाब खसम कूँ भरणा ॥ १०२ ॥

रे यामैं क्या मेरा क्या तेरा,

लाज न मरहि कहत घर मेरा ॥ टेक ॥

चारि पहर निस भोरा, जैसै तरवर पंषि बसेरा ।
जैसै बनिये हाट पसारा, सब जग का सो सिरजनहारा ॥
ये ले जारे वै लें गाड़े, इनि दुखिइनि दोऊ घर छाड़े ॥
कहत कबीर सुनहु रे लोई, हम तुम्ह बिनसि रहैगा सोई ॥ १०३ ॥

नर जाणै अमर मेरी काया, घर घर बात दुपहरी छाया ॥ टेक ॥
मारग छाड़ि कुमारग जौवै, आपण मरै और कूं रोवै ॥
कछू एक किया कछू एक करणा, मुगध न चेतै निहचै मरणा ॥
ज्युँ जल बूंद तैसा संसारा, उपजत बिनसत लगै न बारा ॥
पंच पंपुरिया एक ससीरा, कृष्ण कवल दल भवर कबोरा ॥ १०४ ॥

मन रे अहरषि बाद न कीजै, अपनां सुकृत भरि भरि लीजै ॥ टेक ॥
कुँभरा एक कमाई माटी, बहु बिधि जुगति बणाई ।
एकनि मैं मुकताहल मोती, एकनि व्याधि लगाई ॥
एकनि दीनां पाट पटंबर, एकनि सेज निवारा ।
एकनि दीनों गरै गूदरी, एकनि सेज पयारा ॥
सांची रही सूँम की संपति, मुगध कहै यहु मेरी ।
अंत काल जब आइ पहुँता, छिन मैं कीन्ह न बेरी ॥
कहत कबीर सुनौं रे संतौ, मेरी मेरी सब भूठी ।
चड़ा चींथड़ा चूहड़ा ले गया, तणीं तणगती दूटी ॥ १०५ ॥

(१०२) ख०—मेरी मेरी सब जग करता ।

(१०४) ख०—मुगध न देखे ।

हड़ हड़ हड़ हड़ हसती है, दिवांनपनां क्या करती है ।
 आडी तिरछी फिरती है, क्या च्यों च्यों म्यों म्यों करती है ॥ टेक ॥
 क्या तूं रंगी क्या तूं चंगी, क्या सुख लोड़ै कीन्हं ।
 मीर मुकदम सेर दिवांनों, जंगल केर षजीनां ॥
 भूले भरमि कहा तुम्ह राते, क्या मदुमाते माया ।
 राम रंगि सदा मतिवाले, काया होइ निकाया ॥
 कहत कबीर सुहाग सुंदरी, हरि भजि है निस्तारा ।
 सारा षलक खराब किया है, मानस कहा बिचारा ॥ १०६ ॥

हरि कै नाइ गहर जिनि करऊं, राम नाम चितमुखां न धरऊं । टेक
 जैसे सती तजै स्यंगार, ऐसै जीयरा करम निवार ॥
 राग दोष दहूं मैं एक न भाषि, कदाचि उपजै तौ चिता न राषि ॥
 भूलै बिसरय गहर जौ होई, कहै कबीर क्या करिहौ मोही ॥ १०७ ॥

मन रे कागद कीर पराया ।
 कहा भयौ व्यौपार तुम्हारै, कल तर बढ़ै सवाया ॥ टेक ॥
 बडै बौहरै सांठो दीन्हौ, कल तर काढ्यौ खोटै ।
 चार लाष अरु असी ठीक दे, जनम लिण्यौ सब चोटै ॥
 अब की बेर न कागद कीरयौ, तौ धर्म राइ सूं तूटै ।
 पूंजी बितड़ि बंदि लै दैहै, तब कहै कौन कै छूटै ॥
 गुरदेव ग्यांनों भयौ लगनियां, सुमिरन दीन्हौ हीरा ।
 बड़ी निसरनी नांव राम कौ, चढ़ि गयौ कीर कबीरा ॥ १०८ ॥

धागा ज्यूं टूटै त्यूं जेरि ।
 तूटै तूटनि होयगी, नां ऊं मिलै बहोरि ॥ टेक ॥
 डरभयो सूत पान नहीं लागै, कूच फिरै सब लाई ।

छिटकै पवन तार जब छूटै, तब मेरौ कहा बसाई ॥
 सुरभरौ सूत गुढ़ी सब भागी, पवन राखि मन धीरा ।
 पंचू भइया भये सनमुखा, तब यहु पान करीला ॥
 नान्हौं मैदा पीसि लई है, छांणि लई द्वै बारा ।
 कहै कबीर तेल जब मेल्या, बुनत न लागी बारा ॥ १०६ ॥

ऐसा औसर बहुरि न आवै, रांम मिलै पूरा जन पावै ॥ टेक ॥
 जनम अनेक गया अरु आया, की बेगारि न भाड़ा पाया ॥
 भेष अनेक एकधूं कैसा, नाना रूप धरै नट जैसा ॥
 दान एक मांगौं कवलाकंत, कबीर के दुख हरन अनंत ॥ ११० ॥

हरि जननीं मैं बालिक तेरा,

काहे न औगुंण बकसहु मेरा ॥ टेक ॥

सुत अपराध करै दिन केते, जननीं कै चित रहै न तेते ॥
 कर गहि केस करै जौ घाता, तऊ न हेत उतारै माता ॥
 कहै कबीर एक बुधि बिचारी, बालक दुखी दुखी महतारी ॥ १११ ॥

गोन्यं दे तुम्ह थैं डरपौं भारी ।

सरणार्थि आयौ क्युं गहिये, यहु कौन बात तुम्हारी ॥ टेक ॥

धूप दाभतैं छांह तकाई, मति तरवर सचपाऊं ।
 तरवर मांहैं ज्वाला निकसै, तौ क्या लेइ बुझाऊं ॥
 जे बन जलै त जल कूं धावै, मति जल सीतल होई ।
 जलही मांहि अगनि जे निकसै, और न दूजा कोई ॥
 तारण तिरण तिरण तूं तारण, और न दूजा जानौं ।
 कहै कबीर सरनार्थि आयौ, आन देव नहीं मानौं ॥ ११२ ॥

मैं गुलाम मोहि बेचि गुसाईं,

तन मन धन मेरा रामजी कै ताईं ॥ टेक ॥

आनि कबीरा हाटि उतारा,

सोई गाहक सोई बेचनहारा ॥

बेचै राम तौ राखै कौन,

राखै राम तौ बेचै कौन ॥

कहै कबीर मैं तन मन जारया,

साहिब अपनां छिन न बिसारया ॥ ११३ ॥

अब मोहि राम भरोसा तेरा,

और कौन का करौं निहोरा ॥ टेक ॥

जाकै राम सरीखा साहिब भाई,

सो क्यूं अनंत पुकारन जाई ॥

जा सिरि तीनि लोक कौ भारा,

सो क्यूं न करै जन की प्रतिपारा ॥

कहै कबीर सेवौ बनवारी,

सौँचौ पेड़ पीवै सब डारी ॥ ११४ ॥

जियरा मेरा फिरै रे उदास ।

राम बिन निकसि न जाई सास, अजहूँ कौन आस ॥ टेक ॥

जहाँ जहाँ जाऊँ राम मिलावै न कोई,

कहौ संतौ कैसै जीवन होई ॥

जरै सरीर यहु तन कोई न बुझावै,

अनल दहै निस नौंद न आवै ॥

चंदन घसि घसि अंग लगाऊँ,

राम बिनां दारन दुख पाऊँ ॥

सत संगति मति मन करि धीरा,
सहज जानि रांमहि भजै कबीरा ॥ ११५ ॥

रांम कहौ न अजहूँ केते दिनां,
जब हूँ है प्रांन प्रभू तुम्ह लीनां ॥ टेक ॥
भौ भ्रमत अनेक जन्म गया, तुम्ह दरसन गोव्यं द छिन न भया ॥
भ्रम्य भूलि परगौ भव सागर, कछू न बसाइ बसोधरा ॥
कहै कबीर दुखभंजना, करौ दया दुरत निकंदना ॥ ११६ ॥

हरि मेरा पीव माई, हरि मेरा पीव,
हरि बिन रहि न सकै मेरा जीव ॥ टेक ॥
हरि मेरा पीव मैं हरि की बहुरिया,
रांम बड़े मैं छटक लहुरिया ॥
किया स्यंगार मिलन कै ताई,
काहे न मिलौ राजा रांम गुसाई ॥
अब की बेर मिलन जो पाऊं,
कहै कबीर भौ-जलि नहीं आऊं ॥ ११७ ॥

रांम बांन अन्ययाले तीर, जाहि लागे सो जानै पीर ॥ टेक ॥
तन मन खोजौ चोट न पाऊं, ओषद मूली कहाँ घसि लाऊं ॥
एकहीं रूप दीसै सब नारी, नां जानौ को पीयहि पियारी ॥
कहै कबीर जा मस्तकि भाग, नां जानूँ काहू देइ सुहाग ॥ ११८ ॥

आस नहीं पुरिया रे, रांम बिन को कर्म काटणहार ॥ टेक ॥
जद सर जल परिपूरता, चात्रिग चितह उदास ।
मेरी बिषम कर्म गति हूँ परी, ताथै पियास पियास ॥
सिध मिलै सुधि नां मिलै, मिलै मिलौवै सोइ ।

सूर सिध जत्र भेटिये, तत्र दुख न व्यपै कोइ ॥
 बोछै जलि जैसै मछिका, उदर न भरई नीर ।
 त्यूं तुम्ह कारनि केसवा, जन ताला बेली कबीर ॥ ११८ ॥

रांम बिन तन की ताप न जाई,
 जल में अगनि उठी अधिकाई ॥ टेक ॥
 तुम्ह जलनिधि में जल कर मीनां,
 जल में रहै जलहिं बिन घीनां ॥
 तुम्ह प्यंजरा में सुवनां तोरा,
 दरसन देहु भाग बड़ मोरा ॥
 तुम्ह सतगुर में नौतम चेला,
 कहै कबीर रांम रमूं अकेला ॥ १२० ॥

गोव्यंदा गुण गाईये रे, ताथै भाई पाईये परम निधान ॥ टेक ॥
 ऊंकारे जग ऊपजै, विकारे जग जाइ ।
 अनहद बेन बजाइ करि, रह्यो गगन मठ छाइ ॥
 भूठै जग डहकाइया रे, क्या जीवण की आस ।
 रांम रसांइण जिनि पोया, तिनि कौं बहुरि न लागी रे पियास ॥
 अरध षिन जीवन भला, भगवत भगति सहेत ।
 कोटि कलप जीवन ब्रिथा, नाहिन हरि सूं हेत ॥
 संपति देखि न हरषिये, विपति देखि न रोइ ।
 ब्यूं संपति त्यूं विपति है, करता करै सु होइ ॥
 सरग लोक न बांछिये, डरिये न नरक निवास ।
 हूंणां था सो हूँ रह्या, मनहु न कीजै भूठी आस ॥
 क्या जप क्या तप संजमां, क्या तीरथ व्रत अस्नान ।
 जौ पै जुगति न जानियै, भाव भगति भगवान ॥

सुनि मंडल मैं सोधि लै, परम जोति परकास ।
तहूवां रूप न रेष है, बिन फूलनि फूल्यौ रे अकास ॥
कहै कबीर हरि गुंण गाइ लै, सत संगति रिदा मंभारि ।
जो सेवग सेवा करै, ता संगि रमै रे मुरारि ॥ १२१ ॥

मन रे हरि भजि हरि भजि हरि भजि भाई ।
जा दिन तेरो कोई नाहीं, ता दिन रांम सहाई ॥ टेक ॥
तंत न जानूं मंत न जानूं, जानूं सुंदर काया ।
मीर मलिक छत्रपति राजा, ते भी खाये माया ॥
बेद न जानूं भेद न जानूं, जानूं एकहि रांमां ।
पंडित दिसि पछिवारा कीन्हां, मुख कीन्हों जित नांमां ॥
राजा अंबरीक कै कारणि, चक्र सुदरसन जारै ।
दास कबीर कौ ठाकुर ऐसौ, भगत की सरन उबारै ॥ १२२ ॥

रांम भणि रांम भणि रांम चिंतामणि,
भाग बड़े पायौ छाड़ि जिनि ॥ टेक ॥
असंत संगति जिनि जाइ रे भुलाइ,
साध संगति मिलि हरि गुंण गाइ ॥
रिदा कवल मैं राखि लुकाइ,
प्रेम गांठि दे ज्यूं छूटि न जाइ ॥
अठ सिधि नव निधि नांव मंभारि,
कहै कबीर भजि चरन मुरारि ॥ १२३ ॥

निरमल निरमल रांम गुंण गावै, सो भगता मेरे मनि भावै ॥ टेक ॥
जे जन लेहि रांम कौ नाडं, ताकी मैं बलिहारी जांडं ॥

जिहिं घटि रांम रहे भरपूरि, ताकी मैं चरनन की धूरि ॥
जाति जुलाहा मति कौ धीर,
हरषि हरषि गुंण रमै कबीर ॥१२४॥

जा नरि रांम भगति नहीं साधो,
सो जनमत काहे न मूवौ अपराधो ॥टेक॥
गरभ मुचे मुचि भई किन बांभ,
सूकर रूप फिरै कलि मांभ ॥
जिहि कुलि पुत्र न ग्यांन बिचारी,
वाकी बिधवा काहे न भई महतारी ॥
कहै कबीर नर सुंदर सरूप,
रांम भगति बिन कुचल करूप ॥१२५॥

रांम बिनां ध्रिग ध्रिग नर नारी,
कहा तैं आइ कियौ संसारी ॥ टेक ॥
रज बिनां कैसौ रजपूत,
ग्यांन बिनां फोकट अवधूत ॥
गनिका कौ पूत पिता कासों कहै,
गुर बिन चेला ग्यांन न लहै ॥
कवारी कन्यां करै स्यंगार,
सोभ न पावै बिन भरतार ॥
कहै कबीर हूँ कहता डरूँ,
सुषदेव कहै तौ मैं क्या करौं ॥१२६॥
जरि जाव ऐसा जीवनां, राजा रांम सूँ प्रीति न होई ।
जन्म अमोलिक जात है, चेति न देखै कोई ॥ टेक ॥
मधुमाषी धन संग्रहै, मधुवा मधु ले जाई रे ।
गयौ गयौ धन मूँढ जनां, फिरि पीछै पछिताई रे ॥

बिषिया सुख कै कारनै, जाइ गनिका सुं प्रीति लगाई ।
 अंधै आगि न सूझई, पढ़ि पढ़ि लोग बुझाई ॥
 एक जनम कै कारणै, कत पूजौ देव सहसौ रे ।
 काहे न पूजौ राम जी, जाकौ भगत महेसौ रे ॥
 कहै कबीर चित चंचला, सुनहु मूढ मति मोरी ।
 बिषिया फिरि फिरि आवई, राजा राम न मिलै बहोरी ॥१२७॥

राम न जपहु कहा भयौ अंधा,
 राम बिनां जंम मेलै फंधा ॥ टेक ॥
 सुत दारा का किया पसारा, अंत की बेर भये बटपारा ॥
 माया ऊपरि माया मांडों, साथ न चलै षोषरी हांडों ॥
 जपौ राम ज्यूं अंति उबारै, ठाढी बांह कबीर पुकारै ॥१२८॥

डगमग छाड़ि दे मन बौरा ।
 अब तौ जरे बरे बनि आवै, लीन्हों हाथ सिंधौरा ॥ टेक ॥
 होइ निसंक मगन हूँ नाचौ, लोभ मोह भ्रम छाड़ौ ।
 सूरौ कहा मरन थै डरपै, सती न संचै भांडौ ॥
 लोक बेद कुल की मरजादा, इहै गलै मैं पासी ।
 आधा चलि करि पोछा फिरिहै, हूँ जग मैं हासी ॥
 यहु संसार सकल है मैला, राम कहैं ते सूचा ।
 कहै कबीर नाव नहीं छाड़ौ, गिरत परत चढ़ि ऊँचा ॥१२९॥

(१२७) इसके आगे ख० प्रति में यह पद है—

राम न जपहु कवन भ्रम लागै ।
 मरि जाहुहुगे कहा कहा करहु अभागे ॥ टेक ॥
 राम नाम जपहु कहा करौ वैसे, भेद कसाई कै घरि जैसे ॥
 राम न जपहु कहा गरबाना, जम के घर आगैं हूँ जाना ॥
 राम न जपहु कहा मुसकौ रे, जम के मुदगरि गणि गणि खहु रे ॥
 कहै कबीर चतुर के राह, चतुर बिना को नरकहि जाह ॥ १३० ॥

का सिधि साधि करौं कुछ नाहीं,

राम रसाइन मेरी रसना माहीं ॥ टेक ॥

नहीं कुछ ग्यान ध्यान सिधि जोग, ताथै उपजै नाना रोग ॥

का बन मैं बसि भये उदास, जे मन नहीं छाड़ै आसा पास ॥

सब कृत काच हरी हित सार, कहै कबीर तजि जग व्योहार ॥१३०॥

जौ तै रसनां राम न कहिबौ,

तौ उपजत बिनमत भरमत रहिबौ ॥ टेक ॥

जैसी देखि तरवर की छाया, प्रांन गयें कहु का की माया ॥

जीवत कछू न कीया प्रवांन, मूवा मरम को काकर जानां ॥

कंधि काल सुख कोई न सोवै, राजा रंक दोऊ मिलि रोवै ॥

हंस सरोवर कँवल सरीरा, राम रसाइन पीवै कबीरा ॥१३१॥

का नांगे का बांधे चाम, जौ नहीं चोन्हसि आतम-राम ॥ टेक ॥

नागे फिरे जोग जे होई, बन का मृग मुक्ति गया कोई ॥

मुंड मुंडायै जौ सिधि होई, स्वर्ग ही भेड़ न पहुँती कोई ॥

व्यं द राखि जे खेलै है भाई, तौ पुनरै कौण परंम गति पाई ॥

पढे गुने उपजै अहंकारा, अधधर डूबे वार न पारा ॥

कहै कबीर सुनहु रे भाई, राम नाम बिन किन सिधि पाई ॥१३२॥

हरि बिन भरमि बिगूते गंदा ।

जापै जाऊं आपनपै छुडावण, ते बोधे बहु फंधा ॥ टेक ॥

जोगी कहैं जोग सिधि नीकी, और न दूजी भाई ।

लुंचित मुंडित मोनि जटाधर, ऐ जु कहै सिधि पाई ॥

जहाँ का उपव्या तहाँ बिलाना, हरि पद बिसरया जबहीं ।

पंडित गुनीं सूर कवि दाता, ऐ जु कहैं बड़ हंमहीं ॥

वार पार की खबरि न जानीं, फिरसौ सकल बन ऐसैं ।
 यहु मन बोहि थके कऊत्रा ज्युं, रह्यौ ठग्यौ सौ बैसैं ॥
 तजि बावैं दाहिणै बिकार, हरि पद दिठ करि गहिये ।
 कहै कबीर गूंगै गुड़ खाया, बूझै तौ का कहिये ॥ १३३ ॥

चलौ विचारी रहौ सँभारी, कहता हूँ ज पुकारी ।
 राम नाम अंतर गति नाहीं, तौ जनम जुग ज्युं हारी ॥ टेका
 मूँड़ मुड़ाइ फूलि का बैठे, काननि पहिरि मंजूसा ।
 बाहरि देह पेह लपटांनीं, भीतरि तौ घर मूसा ॥
 गालिब नगरी गांव बसाया, हाँम काँम अहंकारी ।
 घालि रसरिया जब जंम खैचै, तब का पति रहै तुम्हारी ॥
 छाँड़ि कपूर गाँठि विष बाँध्यौ, मूल हूग न लाहा ।
 मेरे राम की अभै पद नगरी, कहै कबीर जुलाहा ॥ १३४ ॥

कौन विचारि करत है पूजा,
 आतम राम अवर नहीं दूजा ॥ टेक ॥
 बिन प्रतीतैं पाती तोड़ै, ग्यांन बिनां देवलि सिर फोड़ै ॥
 लुचरी लपसी आप संवारै, द्वारै ठाढा राम पुकारै ।
 पर-आत्म जो तत बिचारै, कहि कबीर ताकै बलिहारै ॥ १३५ ॥

कहा भयौ तिलक गरै जपमाला,
 मरम न जानै मिलन गोपाला ॥ टेक ॥
 दिन प्रति पसु करै हरिहाई,
 भरै काठ वाकी बाँनि न जाई ॥
 स्वांग सेत करणीं मनि काली,
 कहा भयौ गलि माला घाली ॥

बिन ही प्रेम कहा भयौ रोये,
 भीतरि मैल बाहरि कहा धोये ॥
 गल गल स्वाद भगति नहीं धोर,
 चीकन चंदवा कहै कबीर ॥ १३६ ॥

ते हरि के आवैहि किहि कांमा,
 जे नहीं चीन्है आतमरांमां ॥ टेक ॥
 थोरी भगति बहुत अहंकारा,
 ऐसे भगता मिलै अपारा ॥
 भाव न चीन्है हरि गोपाला,
 जानि क अरहट कै गलि माला ॥
 कहै कबीर जिनि गया अभिमानां,
 सो भगता भगवत समानां ॥ १३७ ॥

कहा भयौ रचि स्वांग बनायौ,
 अंतरिजांमीं निकटि न आयौ ॥ टेक ॥
 बिषई बिषै दिटावै गावै,
 राम नाम मनि कबहुँ न भावै ॥
 पापी परलै जाहि अभागे,
 अमृत छाड़ि बिषै रसि लागे ॥
 कहै कबीर हरि भगति न साधो,
 भग मुषि लागि मूये अपराधी ॥ १३८ ॥

जौ पै पिय के मनि नहीं भांये,
 तौ का पारोसनि कै हुलाराये ॥ टेक ॥
 का चूरा पाइल भूमकांये,
 कहा भयौ बिलुवा ठमकांये ॥

का काजल स्यंदूर कै दीयै,
 सोलह स्यंगार कहा भयौ कीयै ॥
 अंजन मंजन करै ठगौरी,
 का पचि भरै निगौड़ी बैरी ॥
 जौ पै पतिव्रता हूँ नारी,
 कैसैं हीं रहौ सो पियहि पियारी ॥
 तन मन जोवन सौंपि सरीरा,
 ताहि सुहागनि कहै कबीरा ॥ १३६ ॥

दूभर पनियां भरया न जाई,
 अधिक त्रिषा हरि बिन न बुझाई ॥ टेक ॥
 ऊपरि नीर ले ज तलि हारी,
 कैसैं नीर भरै पनिहारी ॥
 ऊधरयौ कूप घाट भयौ भारी,
 चली निरास पंच पनिहारी ॥
 गुर उपदेस भरी ले नीरा,
 हरषि हरषि जल पोवै कबीरा ॥ १४० ॥

कहौ भईया अंबर कासूं लागा,
 कोई जाणैंगा जाननहार सभागा ॥ टेक ॥
 अंबरि दीसै केता तारा, कौन चतुर ऐसा चितरनहारा ॥
 जे तुम्ह देखौ सो यहु नाहीं यहु पद अगम अगोचर माहीं ॥
 तीनि हाथ एक अरधाई, ऐसा अंबर चीन्हौ रे भाई ॥
 कहै कबीर जे अंबर जानै, ताही सूं मेरा मन मानै ॥ १४१ ॥

तन खोजौ नर नां करौ बड़ाई,
 जुगति बिना भगति किनि पाई ॥ टेक ॥
 एक कहावत मुलां काजी,
 राम बिनां सब फोकटबाजी ॥
 नव ग्रिह बांभण भणता रासी,
 तिनहुं न काटो जम की पासी ॥
 कहै कबीर यहु तन काचा,
 सबइ निरंजन राम नाम साचा ॥ १४२ ॥

जाइ परौ हमरौ का करिहै,
 आप करै आपै दुख भरिहै ॥ टेक ॥
 ऊभड़ जाता बाट बतावै, जौ न चलै तौ बहु दुख पावै ॥
 अंधे कूप क दिया बताई, तरकि पड़ै पुनि हरि न पत्ताई ॥
 इंद्रो स्वादि बिषै रसि बह्निहै, नरकि पड़ै पुनि राम न कहिहै ॥
 पंच सखी मिलि मतौ उपायौ, जंम की पासी हंस बंधायौ ॥
 कहै कबीर प्रतीति न आवै, पाषंड कपट इहै जिय भावै ॥ १४३ ॥

ऐसे लोगनि सूं का कहिये ।
 जे नर भये भगति थैं न्यारे, तिनथैं सदा डराते रहिये ॥ टेक ॥
 आपण देही चरवा पांनों, ताहि निदैं जिनि गंगा आनीं ॥
 आपण बूडैं और कौं बोडैं, अगनि लगाइ मंदिर में सोवैं ॥
 आपण अंध और कूं कानां, तिनकौं देखि कबीर डरानां ॥ १४४ ॥

है हरि जन सूं जगत लरत है,
 फुनिगा कैसें गरड़ भषत हैं ॥ टेक ॥
 अचिरज एक देखहु संसारा,
 सुनहां खेदै कुंजर असवारा ॥

ऐसा एक अर्चभा देखा,
जंबक करै केहरि सुं लेखा ॥

कहै कबीर राम भजि भाई,
दास अधम गति कबहूँ न जाई ॥ १४५ ॥

है हरिजन थैं चूक परी,
जे कछु आहि तुम्हारौ हरी ॥ टेक ॥

मोर तोर जब लग मैं कीन्हां,
तब लग त्रास बहुत दुख दोन्हां ॥

सिध साधिक कहैं हम सिधि पाई,
राम नाम बिन सबै गंवाई ॥

जे बैरागी आस पियासी,
तिनकी माया कदे न नासी ॥

कहै कबीर मैं दास तुम्हारा,
माया खंडन करहु हमारा ॥ १४६ ॥

सब दुनीं संयांनीं मैं बौरा,
हंम बिगरे बिगरी जिनि भौरा ॥ टेक ॥

मैं नहीं बौरा राम कियौ बौरा,
सतगुर जारि गयौ भ्रम मोरा ॥

बिद्या न पढ़ूं बाद नहीं जानूं,
हरि गुंन कथत सुनत बौरानूं ॥

काम क्रोध दोऊ भये विकारा,
आपहि आप जरैं संसारा ॥

मीठो कहा जाहि जो भावै,
दास कबीर राम गुन गावै ॥ १४७ ॥

अब मैं राम सकल सिधि पाई,
आन कहूँ तौ राम दुहाई ॥ टेक ॥
इहि चिति चाषि सबै रस दीठा,
राम नाम सा और न मीठा ॥
औरै रसि ह्वै है कफ गाता,
हरि-रस अधिक अधिक सुखदाता ॥
दूजा बणिज नहीं कछू बाषर,
राम नाम दोऊ तत आषर ॥
कहै कबीर जे हरि रस भोगो,
ताकूं मिल्या निरंजन जोगी ॥ १४८ ॥

रे मन जाहि जहां तोहि भावै,
अब न कोई तेरै अंकुस लावै ॥ टेक ॥
जहां जहां जाइ तहां तहां रामा,
हरि पद चीन्हि कियै बिश्रामा ॥
तन रंजित तब देखियत दोई,
प्रगट्यौ ग्यान जहां तहां सोई ॥
लीन निरंतर वपु बिसराया,
कहै कबीर सुख सागर पाया ॥ १४९ ॥

बहुरि हम काहे कूं आवहिगे ।
बिछुरे पंचतत की रचनां, तब हम रामहिं पांवहिगे ॥ टेक ॥
पृथी का गुण पाणीं सोप्या, पांनों तेज मिलावहिगे ।

तेज पवन मिलि पवन सबद मिलि, सहज समाधि लगावहिगे ॥
 जैसें बहुकंचन के भूषन, ये कहि गालि तवांवहिगे ।
 ऐसें हम लोक बेद के बिछुरें, सुनिहि मांझि समांवहिगे ॥
 जैसें जलहि तरंग तरंगनीं, ऐसें हम दिखलांवहिगे ।
 कहै कबीर खांमीं सुख सागर, हंसहि हंस मिलांवहिगे ॥१५०॥

कबीरौ संत नदी गयौ बहि रे ।
 ठाढ़ो माइ कराड़ै टेरे, है कोई ल्यावै गहि रे ॥ टेक ॥
 बादल बांनीं रांम घन उनयां, बरिषै अमृत धारा ।
 सखी नीर गंग भरि आई, पीवै प्रांन हमारा ॥
 जहां बहि लागे सनक सनंदन, रुद्र ध्यान धरि बैठे ।
 सुयं प्रकास आनंद बमेक में, घन कबीर द्वै पैठे ॥१५१॥

अवधू कामधेन गहि बांधी रे ।
 भांडा भंजन करै सबहिन का, कछु न सूझै आंधी रे ॥टेक॥
 जौ ब्यावै तौ दूध न देई, ग्याभण अमृत सरवै ।
 कौली घाल्यां बीडरि चालै, ज्युं घेरौं त्युं दरवै ॥
 तिहिं धेन थै इच्छा पूगी, पाकड़ि खूंटै बांधी रे ।
 ग्वाड़ा मांहीं आनंद उपनौं, खूंटै दोऊ बांधी रे ॥
 साई माइ सास पुनि साई, साई याकी नारी ।
 कहै कबीर परम पद पाया, संतौ लेहु बिचारी ॥ १५२ ॥

[राग रामकली]

जगत गुर अनहद कींगरी बाजै, तहाँ दीरघ नाद ल्यौ लागै ॥टेक॥
 त्री अस्थान अंतर मृगछाला, गगन मंडल सींगीं बाजै ।

(१५२) ख०—साई घर की नारी ।

तहुआं एक दुकान रच्यो है, निराकार व्रत साजै ॥
 गगन हीं भाठी सींगी करि चूंगी, कनक कलस एक पावा ।
 तहुवां चवै अमृत रस नीभर, रस ही मैं रस चुवावा ॥
 अब तौ एक अनूपम बात भई, पवन पियाला साजा ।
 तीनि भवन मैं एकै जोगी, कहौ कहां बसै राजा ॥
 बिनर जानि परणउं परसोतम, कहि कबीर रंगि राता ।
 यहु दुनियां कांड भ्रमि भुलांनों, मैं राम रसाइन माता ॥१५३॥

ऐसा ग्यांन बिचारि लै, लै लाइ लै ध्यानां ।
 सुनि मंडल मैं घर किया, जैसै रहै सिचांनां ॥ टेक ॥
 छलटि पवन कहां राखिये, कोई भरम बिचारै ।
 सांघै तीर पताल कूं, फिरि गगनहि मारै ॥
 कंसा नाद बजाव ले, धुनि निमसि ले कंसा ।
 कंसा फूटा पंडिता, धुनि कहां निवासा ॥
 प्यंड परें जीव कहां रहै, कोई मरमं लखावै ।
 जीवत जिस घरि जाइये, ऊंघै मुषि नहीं आवै ॥
 सतगुर मिलै त पाईये, ऐसी अकथ कहांणीं ।
 कहै कबीर संसा गया, मिले सारंग पांणीं ॥ १५४ ॥

है कोई संत सहज सुख उपजै, जाकौं जप तप देउ दलाली ।
 एक बूंद भरि देइ राम रस, ज्युं भरि देइ कलाली ॥ टेक ॥
 काया कलाली लांहनि करिहूं, गुरु सबद गुड़ कीन्हां ।
 काम क्रोध मोह मद मंछर, काटि काटि कस दीन्हां ॥
 भवन चतुरदस भाठी पुरई, ब्रह्म अगनि परजारी ।
 मूंदे मदन सहज धुनि उपजी, सुखमन पोतनहारी ॥

नीभर भरै अंमों रस निकसै, तिहि मदिरावल छाका ।

कहै कबीर यहु बास बिकट अति, ग्यान गुरु ले बांका ॥१५५॥

अकथ कहाणीं प्रेम की, कछू कहो न जाई ।

गूंगे केरी सरकरा, बैठे मुसकाई ॥ टेक ॥

भोमि विनां अरु बीज विन, तरवर एक भाई ।

अनंत फल प्रकासिया, गुर दीया बताई ॥

मन थिर बैसि विचारिया, रामहि ल्यौ लाई ।

भूठी अनभै बिस्तरो, सब थोथो वाई ॥

कहै कबीर सकति कछू नाहीं, गुर भया सहाई ।

आवण जाणी मिटि गई, मन मनहि समाई ॥ १५६ ॥

संतौ सो अनभै पद गहिये ।

कला अतीत आदि निधि निरमल,

ताकूं सदा विचारत रहिये ॥ टेक ॥

सो काजी जाकौं काल न व्यापै, सो पंडित पद बूझै ।

सो ब्रह्मा जो ब्रह्म विचारै, सो जोगी जग सूझै ॥

बदै न अस्त सूर नहीं ससिहर, ताकौ भाव भजन करि लीजै ।

काया थै कछू दूरि विचारै, तास गुरु मन धीजै ॥

जारयौ जरै न काट्यौ सूकै, उतपति प्रलै न आवै ।

निराकार अषंड मंडल मै, पांचौं तत समावै ॥

लोचन अछित सबै अधियारा, विन लोचन जग सूझै ।

पड़दा खोलि मिलै हरि ताकूं, जो या अरथहिं बूझै ॥

आदि अनंत उभै पख निरमल, द्विष्टि न देख्या जाई ।

ज्वाला उठी अकास प्रजल्यौ, सीतल अधिक समाई ॥

एकनि गंध बासनां प्रगट, जग थै रहै अकेला ।

प्रांन पुरिस काया थै' बिछुरै, राखि लेहु गुर चेला ॥
 भागा भर्म भया मन असथिर, निद्रा नेह नसंनानां ।
 घट की जोति जगत प्रकास्या, माया सोक बुझानां ॥
 बंक्रनालि जे संमि करि राखै, तौ आवागमन न होई ।
 कहै कबीर धुनि लहरि प्रगटी, सहजि मिलैगा सोई ॥ १५७ ॥

जाइ पृछै गोबिंद पढ़िया पंडिता, तेरा कौन गुरु कौन चेला ।
 अपणें रूप कौं आपहि जाणै, आपै रहै अकेला ॥ टेक ॥
 बांझ का पूत बाप बिना जाया, बिन पांऊं तरवरि चढ़िया ।
 अस बिन पाषर गजबिन गुड़िया, बिन षंढै संग्राम जुड़िया ॥
 बीज बिन अंकूर पेड़ बिन तरवर, बिन साषा तरवर फलिया ।
 रूप बिन नारी पुहप बिन परमल, बिन नीरै सरवर भरिया ॥
 देव बिन देहुरा पत्र बिन पूजा, बिन पांषां भवर बिलंबिया ।
 सुरा होइ सु परम पद पावै, कीट पतंग होइ सब जरिया ॥
 दीपक बिन जोति जोति बिन दीपक, हृद बिन अनाहद सबद बागा ।
 चेतना होइ सु चेति लीज्यौ, कबीर हरि के अंगि लागा ॥ १५८ ॥

पंडित होइ सु पदहि बिचारै, मूरिष नांहिन बूझै ।
 बिन हाथनि पांइन बिन काननि, बिन लोचन जग सूझै ॥ टेक ॥
 बिन मुख खाइ चरन बिन चालै, बिन जिभ्या गुण गावै ।
 आछै रहै ठौर नहीं छाड़ै, दह दिसिहीं फिरि आवै ॥
 बिनहीं तालां ताल बजावै, बिन मंदल पट ताला ।
 बिनहीं सबद अनाहद बाजै, तहां निरतत है गोपाला ॥
 बिनां चोलनै बिनां कंचुकी, बिनहीं संग संग होई ।
 दास कबीर औसर भल देख्या, जानैगा जन कोई ॥ १५९ ॥

है कोई जगत गुर ग्यानों, बलटि बेद बूझै ।

पांशों में अगनि जरै, अंधरे कौं सूझै ॥ टेक ॥

एकनि दादुरि खाये पंच भवंगा, गाइ नाहर खायौ काटि काटि अंगा ॥

बकरी बिघार खायौ, हरनि खायौ चीता ।

कागिल गर फांदियां, बटेरै बाज जीता ॥

मूसै मँजार खायौ, स्यालि खायौ स्वानां ।

आदि कौं आदेस करत, कहै कबीर ग्यानां ॥ १६० ॥

ऐसा अदभुत मेरे गुरि कथ्या, मैं रह्या उभेवै ।

मूसा हसती सौं लड़ै, कोई विरला पेवै ॥ टेक ॥

मूसा पैठा बांवि मैं, लारै सापणि धाई ।

बलटि मूसै सापणि गिली, यहु अचिरज भाई ॥

चोंटी परबत ऊषण्यां, ले राख्यौ चौड़ै ।

मुर्गा मिनकी सूं लड़ै, भल पांशों दौड़ै ॥

सुरहीं चूषै बछतलि, बछा दूध उतारै ।

ऐसा नवल गुंणी भया, सारदूलहि मारै ॥

भील लुक्या बन बीभ्र मैं, ससा सर मारै ।

कहै कबीर ताहि गुर करौं, जो या पदहि विचारै ॥ १६१ ॥

अवधू जागत नींद न कीजै ।

काल न खाइ कलप नहीं ब्यापै, देही जुरा न छीजै ॥ टेक ॥

उलटो गंग संमुद्रहि सोखै, ससिहर सूर गरासै ।

नव ग्रिह मारि रोगिया बैठे, जल मैं व्यंभ प्रकासै ॥

ढाल गह्रां थै मूल न सूझै, मूल गह्रां फल पावा ।

बंबई बलटि शरप कौं लागी, धरणि महा रस खावा ॥

बैठि गुफा में सब जग देख्या, बाहरि कछू न सूझै ।
 उलटै धनकि पारधी मारजो, यहु अचिरज कोइ बूझै ॥
 ओंधा घड़ा न जल में डुबै, सुधा सूभर भरिया ।
 जाको यहु जग धिण करि चालै, ता प्रसादि निस्तरिया ॥
 अंबर बरसै धरती भीजै, यहु जाणै सब कोई ।
 धरती बरसै अंबर भीजै, बूझै बिरला कोई ॥
 गांवणहारा कदे न गावै, अणबोल्या नित गावै ।
 नटवर पेधि पेघनां पेघै, अनहद बेन बजावै ॥
 कहणीं रहणीं निज तत जाणै, यहु सब अकथ कहाणीं ।
 धरती उलटि अक्रासहि प्रासै, यहु पुरिसां की बांणीं ॥
 बाभ पियालै अमृत सोख्या, नदी नीर भरि राण्या ।
 कहै कबीर ते बिरला जोगी, धरणि महारस चाण्या ॥ १६२ ॥

राम गुन बेलड़ी रे, अवधू गोरषनाथि जाणीं ।
 नाति सरूप न छाया जाकै, बिरध करै बिन पांणीं ॥ टेक ॥
 बेलड़िया द्वै अणीं पहूँती, गगन पहूँती सैली ।
 सहज बेलि जब फूलण लागी, डाली कूपल मेलही ॥
 मन कुंजर जाइ बाड़ी बिलंव्या, सतगुर बाही बेली ।
 पंच सखी मिलि पवन पयंप्या, बाड़ी पांणीं मेलही ॥
 काटत बेली कूपले मेलहीं, सींचताड़ीं कुमिलाणीं ।
 कहै कबीर ते बिरला जोगी, सहज निरंतर जाणीं ॥ १६३ ॥

राम राइ अबिगत बिगति न जानै,
 कहि किम तोहि रूप बषानं ॥ टेक ॥
 प्रथमे गगन कि पुहमि प्रथमे प्रभू, प्रथमे पवन कि पांणीं ।
 प्रथमे चंद कि सूर प्रथमे प्रभू, प्रथमे कौन बिनांणीं ॥

प्रथमे प्राण कि व्यंङ्ग प्रथमे प्रभू, प्रथमे रक्त कि रेतं ।
 प्रथमे पुरिष कि नारि प्रथमे प्रभू, प्रथमे बीज कि खेतं ॥
 प्रथमे दिवस कि रँणि प्रथमे प्रभू, प्रथमे पाप कि पुन्यं ।
 कहै कबीर जहां बसहु निरंजन, तहां कुछ आहि कि सुन्यं ॥ १६४ ॥

अबधू सो जोगी गुर मेरा, जो या पद का करै नबेरा ॥ टेक ॥
 तरवर एक पेड़ बिन ठाढ़ा, बिन फूलां फल लागा ।
 साखा पत्र कछू नहीं वाकै, अष्ट गगन मुख बागा ॥
 पैर बिन निरति करां बिन बाजै, जिभ्या होंणां गावै ।
 गावणहारे कै रूप न रेषा, सतगुर होइ लखावै ॥
 पंषी का पोत्र मीन का मारग, कहै कबीर बिचारी ।
 अपरंपार पार परसोतम, वा मूरति की बलिहारी ॥ १६५ ॥

अब मैं जाणिवौ रे केवल राइ की कहाँणी ।
 मंभा जोति राम प्रकासै, गुर गमि बाँणी ॥ टेक ॥
 तरवर एक अनंत मूरति, सुरता लेहु पिछाँणी ।
 साखा पेड़ फूल फल नाहीं, ताकी अमृत बाँणी ॥
 पुहप बास भवरा एक राता, बारा ले नर धरिया ।
 सोलह भंभै पवन झकोरै, आकासे फल फलिया ॥
 सहज समाधि विरष यहु सींच्या, धरती जल हर सोप्या ।
 कहै कबीर तास मैं चेला, जिनि यहु तरवर पेप्या ॥ १६६ ॥

राजा राम कवन रंगै, जैसै परिमल पुहप संगै ॥ टेक ॥
 पंचतल ले कीन्ह बंधान, चौरासी लष जीव समान ॥
 बेगर बेगर राखि ले भाव, तामै कीन्ह आपकौ ठांव ॥
 जैसै पावक भंजन का बसेष, घट बनमान किया प्रवेस ॥

कह्या चाहूं कछू कह्या न जाइ, जल जीव हूँ जल नहीं बिगराइ ॥
 सकल आतमां बरतै जे, छल बल कौं सब चीन्हि बसे ॥
 चीनियत चीनियत ता चीन्हिलै से, तिहि चीन्हिअत धूँका करके ॥
 आपा पर सब एक समान, तब हम पाया पद निरबाण ॥
 कहै कबीर मन्य भया संतोष, मिले भगवंत गया दुख दोष ॥१६७॥

अंतर गतिअनि अनि बाणों ॥

गगन गुपत मधुकर मधु पीवत, सुगति सेस सिव जांणी ॥टेक॥
 त्रिगुण त्रिविधि तलपत तिमरातन, तंती तंत मिलांनीं ।
 भागे भरम भोइन भये भारी, बिधि बिरंचि सुषि जांणीं ॥
 बरन पवन अबरन विधि पावक, अनल अमर मरै पांणीं ।
 रवि ससि सुभग रहे भरि सब घटि, सबद सुनि थिति मांहीं ॥
 संकट सकति सकल सुख खोये, उदिध मथित सब हारे ।
 कहै कबीर अगम पुर पटण, प्रगटि पुरातन जारे ॥१६८॥

लाधा है कछू लाधा है, ताकी पारिष को न लहै ।

अबरन एक अकल अविनासी, घटि घटि आप रहै ॥ टेक ॥
 तोल न मोल माप कछु नाहीं, गिणंती ग्यान न होई ।
 नां सो भारी नां सो हलवा, ताकी पारिष लपै न कोई ॥
 जामैं हम सोई हम हों मैं, नीर मिले जल एक हूवा ।
 यों जांयें तौ कोई न मरिहै, बिन जांयें थै बहुत मूवा ॥
 दास कबीर प्रेम रस पाया, पीवणहार न पाऊं ।
 बिधनां बचन पिछायत नाहीं, कहु क्या काढ़ि दिखाऊं ॥१६९॥

हरि हिरदै रे अनत कत चाहै,

भूलै भरम दुनीं कत बाहै ॥ टेक ॥

जग परबोधि होत नर खाली, करते उदर उपाया ।

आत्म राम न चीन्हैं संतौ, क्यूं रमि लै राम राया ॥

लागैं प्यास नीर सो पीवै, बिन लागैं नहीं पीवै ।
 खोजैं तत मिलै अविनासी, बिन खोजैं नहीं जीवै ॥
 कहै कबीर कठिन यह करणी, जैसी षंडे धारा ।
 उलटीं चाल मिलै परब्रह्म कौं, सो सतगुरु हमारा ॥ १७० ॥

रे मन बैठि कितै जिनि जासी,
 हिरदै सरोबर है अविनासी ॥ टेक ॥

काया मधे कोटि तीरथ, काया मधे कासी ।
 काया मधे कवलापति, काया मधे बैकुण्ठवासी ॥
 उलटि पवन षटचक्र निवासी, तीरथराज गंग तट बासी ॥
 गगन मंडल रवि ससि दोइ तारा, उलटी कूंची लागि किवारा ।
 कहै कबीर भई उजियारा, पंच मारि एक रह्यौ निनारा ॥ १७१ ॥

रांम बिन जन्म मरन भयौ भारी ।

साधिक सिध सूर अरु सुरपति, भ्रमत भ्रमत गये हारी ॥ टेक ॥
 व्यंद भाव भ्रिग तत जंत्रक, सकल सुख सुखकारी ।
 श्रवत सुनि रवि ससि सिव सिव, पलक पुरिष पल नारी ॥
 अंतर गगन होत अंतर धुनि, बिन सासनि है सोई ।
 घोरत सबद समंगल सब घटि, व्यंदत व्यंदै कोई ॥
 पांशीं पवन अवनि नभ पावक, तिहि संगि सदा बसेरा ।
 कहै कबीर मन मन करि बेध्या, बहुरि न कीया फेरा ॥ १७२ ॥

नर देही बहुरि न पाईये, ताथैं हरषि हरषि गुंण गाईये ॥ टेक ॥
 जे मन नहीं तजै बिकारा, तौ क्यूं तिरिये भौ पारा ॥
 जब मन छाड़ै कुटिलाई, तब आइ मिलै रांम राई ॥
 ज्यूं जांमण त्यूं मरणां, पछितावा कछू न करणां ॥
 १०

जाणि मरै जे कोई, तौ बहुरि न मरणां होई ॥
 गुर वचनां मंझि समावै, तब रांम नांम ल्यौ लावै ॥
 जब रांम नांम ल्यौ लागा, तब भ्रम गया भौ भागा ॥
 ससिहर सूर मिलावा, तब अनहद बेन बजावा ॥
 जब अनहद बाजा बाजै, तब साईं संगि बिराजै ॥
 होह संत जनन के संगी, मन राचि रह्यौ हरि रंगी ॥
 धरौ चरन कवल विसवासा, ज्यूं होइ निरभै पद बासा ॥
 यहु काचा खेल न होई, जन परतर खेलै कोई ॥
 जब परतर खेल मचावा, तब गगन मंडल मठ छावा ॥
 चित चंचल निहचल कीजै, तब रांम रसाइन पीजै ॥
 जब रांम रसाइन पीया, तब काल मिथ्या जन जीया ॥
 यूं दास कबीरा गावै, ताथै मन कौं मन समझावै ॥
 मन हों मन समझाया, तब सतगुर मिलि सचुपाया ॥१७३॥

अवधू अगनि जरै कै काठ ।

पूछौ पंडित जोग संन्यासी, सतगुर चीन्है बाट ॥ टेक ॥
 अगनि पवन मैं पवन कवन मैं, सबद गगन के पवनां ।
 निराकार प्रभु आदि निरंजन, कत रवते भवनां ॥
 उतपति जोति कवन अंधियारा, घन बादल का बरिषा ।
 प्रगट्यो बीज धरनि अति अधिकै, पारब्रह्म नहीं देखा ॥
 मरनां मरै न मरि सकै, मरनां दूरि न नेरा ।
 द्वादस द्वादस सनमुख देखै, आपै आप अकेला ॥
 जे बांध्या ते छुछंद मुकता, बांधनहारा बांध्या ।
 बांध्या मुकता मुकता बांध्या, तिहि पारब्रह्म हरि लांधा ॥
 जे जाता ते कौण पठाता, रहता ते किनि राख्या ।
 अमृत समानां, बिष मैं जानां, बिष मैं अमृत चाख्या ॥

कहै कबीर बिचार बिचारी, तिल मैं मेर समानां ।

अनेक जनम का गुर गुर करता, सतगुर तब भेटानां ॥ १७४ ॥

अवधू ऐसा ग्यान बिचार' ।

भेरै चढे सु अधधर डूबे, निराधार भये पार' ॥ टेक ॥

ऊघट चले सु नगरि पहुंते, बाट चले ते लूटे ।

एक जेवड़ी सब लपटाने', के बांधे के छूटे ॥

मंदिर पैसि चहुँ दिसि भीगे, बाहरि रहे ते सूका ।

सरि मारे ते सदा सुखारे, अनमारे ते दूषा ॥

बिन नैनन के सब जग देखै, लोचन अछते अंधा ।

कहै कबीर कछु समझि परी है, यहु जग देख्या धंधा ॥ १७५ ॥

जग धंधा रे जग धंधा, सब लोगन जांणै' अंधा ।

लोभ मोह जेवड़ी लपटानी', बिनही गांठि गह्यो फंधा ॥ टेक ॥

ऊंचै टीबै मछ बसत है, ससा बसै जल माहीं ।

परबत ऊपरि लोक डूबि मूवा, नीर मूवा धूं कांहीं ॥

जलै नीर तिण षड सब उबरै, बैसंदर ले साँचै ।

ऊपरि मूल फूल तिन भीतरि, जिनि जान्यां तिनि नीकै ॥

कहै कबीर जानहीं जानै', अन-जानत दुख भारी ।

हारी बाट बटाऊ जीत्या, जानत की बलिहारी ॥ १७६ ॥

अवधू ब्रह्म मतै घरि जाइ ।

काल्हि जु तेरी बंसरिया छीनीं, कहा चरावै गाइ ॥ टेक ॥

तालि चुगै' बन तीतर लडवा, परबति चरै सौरा मछा ।

बन की हिरनीं कूवै बियानीं, ससा फिरै अकासा ॥

ऊंट मारि मैं चारै लावा, हस्ती तर'डवा देखै ।

बंबूर की डरियां बनसी लैहूँ, सीयरा भूंकि भूंकि षाई ॥
 आंव कै बैरै चरहल करहल, निबिया छोलि छोलि खाई ।
 मोरै आग निदाष दरी बल, कहै कबीर समझाई ॥ १७७ ॥

कहा करौं कैसें तिरौं, भौ जल अति भारी ।
 तुम्ह सरणा-गति केसवा, राखि राखि मुरारी ॥ टेक ॥
 घर तजि बन खंडि जाइये, खनि खइये कंदा ।
 विषै बिकार न छूटै, ऐसा मन गंदा ॥
 विष बिषिया की बासनां, तजौं तजी नहीं जाई ।
 अनेक जतन करि सुरभिहौं, फुनि फुनि उरझाई ॥
 जीव अछित जोवन गया, कछू कीया न नीका ।
 यहु हीरा निरमोलिका, कौडी पर बीका ॥
 कहै कबीर सुनि केसवा, तूँ सकल बियापी ।
 तुम्ह समांनि दाता नहीं, हम से नहीं पापी ॥ १७८ ॥

बाबा करहु कृपा जन मारगि लावो, ज्यूं भव बंधन षूटै ।
 जुरा मरन दुख फेरि करन सुख, जीव जनम थै छूटै ॥ टेका ॥
 सतगुर चरन लागि यौं बिनऊं, जीवनि कहां थै पाई ।
 जा कारनि हम उपजै बिनसै, क्यूं न कहा समझाई ॥
 आसा-पास षंड नहीं पाडै, यौं मन सुनि न लूटै ।
 आपा पर आनंद न बूझै, बिन अनभै क्यूं छूटै ॥
 कहां न उपजै उपज्यां नहीं जाणै, भाव अभाव बिहूनां ।
 उदै अस्त जहां मति बुधि नाहीं, सहजि राम ल्यौ लीनां ॥
 ज्यूं बिबहि प्रतिबिब समांनां, उदिक कुंभ बिगरांनां ।
 कहै कबीर जानि भ्रम भागा, जीवहि जीव समांनां ॥ १७९ ॥

संतो धोखा कासूँ कहिये ।

गुंण मैं निरगुंण निरगुंण मैं गुंण है,

बाट छाड़ि क्यूँ बहिये ॥ टेक ॥

अजरा अमर कथै सब कोई, अलख न कथणां जाई ।

नाति सरूप बरण नहीं जाकै, घटि घटि रह्यौ समाई ॥

प्यंड ब्रह्मंड कथै सब कोई, वाकै आदि अरु अंत न होई ।

प्यंड ब्रह्मंड छाड़ि जे कथिये, कहै कबीर हरि सोई ॥ १८० ॥

पषा पषी कै पेषणै, सब जगत भुलांनां ॥

निरपष होइ हरि भजै, सो साध सयांनां ॥ टेक ॥

ज्यूं षर सूं षर बंधिया, यूं बंधे सब लोई ।

जाकै आत्म द्विष्टि है, साचा जन सोई ॥

एक एक जिनि जाणियां, तिनहीं सच पाया ।

प्रेम प्रीति ल्यौ लीन मन, ते बहुरि न आया ॥

पूरे की पूरी द्विष्टि, पूरा करि देखै ।

कहै कबीर कछू समझि न परई, या कछू बात अलेखै ॥ १८१ ॥

अजहूँ न संक्या गई तुम्हारी,

नाहि निसंक मिले बनवारी ॥ टेक ॥

बहुत गरब गरबे संन्यासी, ब्रह्मचरित छूटी नहीं पासी ॥

सुद्र मलेछ बसै मन माहीं, आतमरांम सु चीन्हां नाहीं ॥

संन्या डांशणि बसै सरीरा, ता कारणि रांम रमै कबीरा ॥ १८२ ॥

सब भूले हो पाषंडि रहे,

तेरा बिरला जन कोई राम कहै ॥ टेक ॥

होइ अरोगि बूटी घसि लावै, गुर बिन जैसै अमृत फिरै ।

है हाजिर परतीति न आवै, सो कैसें परताप धरै ॥
 ज्युं सुख त्युं दुख द्विद मन राखै, एकादसी इकतार करै ।
 द्वादसी भ्रमैं लष चौरासी, गर्भ बास आवै सदा मरै ॥
 मैं तैं तजै तजै अपमारग, चारि बरन उपराति चढै ।
 ते नहीं डूबै पार तिरि लंघै, निरगुण अगुण संग करै ॥
 होइ मगन राम रंगि राचै, आवागवन मिटै धापै ।
 तिनह उछाह सोक नहीं व्यापै, कहै कबीर करता आपै ॥१८३॥

तेरा जन एक आध है कोई ।

काम क्रोध अरु लोभ बिबर्जित, हरिपद चीन्हैं सोई ॥टेक॥
 राजस तामस सातिग तीन्युं, ये सब तेरी माया ।
 चौथै पद कौं जे जन चीन्हैं, तिनहि परम पद पाया ॥
 असतुति निंदा आसा छाडै, तजै मान अभिमानां ।
 लोहा कंचन समि करि देखै, ते मूरति भगवानां ॥
 च्यंतै तौ माधौ च्यंतामणि, हरिपद रमैं उदासा ।
 त्रिस्नां अरु अभिमान रहित है, कहै कबीर सो दासा ॥ १८४ ॥

हरि नामैं दिन जाइ रे जाकौ,

सोई दिन लेखै लाइ राम ताकौ ॥ टेक ॥

हरि नाम मैं जन जागै, ताकै गोब्यंद साथी आगै ॥
 दीपक एक अभंगा, तामैं सुर नर पढै पतंगा ॥
 ऊंच नींच सम सरिया, ताथै जन कबीर निसतरिया ॥१८५॥

जब थै आतम-तत बिचारा ।

तब निरबैर भया सबहिन थै, काम क्रोध गहि दारा ॥टेक॥
 व्यापक ब्रह्म सबनि मैं एकै, को पंडित को जोगी ।

राणां राव कवन सूं कहिये, कवन बैद को रोगी ॥
 इनमें आप आप सबहिन में, आप आपसूं खेलै ।
 नानां भाति घड़े सब भाड़े, रूप धरे धरि मेलै ॥
 सोचि विचारि सबै जग देख्या, निरगुण कोई न बतावै ।
 कहै कबीर गुणीं अरु पंडित, मिलि लीला जस गावै ॥ १८६ ॥

तू माया रघुनाथ की, खेलण चढ़ी अहेड़ै ।
 चतुर चिकारे चुणि चुणि मारे, कोई न छोड्या नेहै ॥ टेक ॥
 मुनियर पीर डिगंबर मारे, जतन करंता जोगी ।
 जंगल महि के जंगम मारे, तूर फिरै बलिवंती ॥
 बेद पढंतां बांम्हण मारा, सेवा करतां स्वामीं ।
 अरथ करतां मिसर पछाड्या, तूर फिरै मैं मंती ॥
 साधित कै तूं हरता करता, हरि भगतन कै चेरी ।
 दास कबीर राम कै सरनै, ज्युं लागी त्यूं तोरी ॥ १८७ ॥

जग सूं प्रीति न कीजिये, संमझि मन मेरा ।
 खाद हेत लपटाइए, को निकसै सूर ॥ टेक ॥
 एक कनक अरु कामनीं, जग मैं दोइ फंदा ।
 इनपै जौ न बंधावई, ताका मैं बंदा ॥
 देह धरें इन मांहि बास, कहु कैसै छूटै ।
 सीव भये ते ऊबरे, जीवत ते लूटै ॥
 एक एक सूं मिलि रह्या, तिनहीं सचुपाया ।
 प्रेम मगन लै लीन मन, सो बहुरि न आया ॥
 कहै कबीर निहचल भया, निरभै पद पाया ।
 संसा ता दिन का गया, सतगुर समझाया ॥ १८८ ॥

रांम मोहि सतगुर मिले अनेक कलानिधि, परम तत सुखदाई ।

कांम अगनि तन जरत रही है,

हरि रसि छिरकि बुझाई ॥ टेक ॥

दरस परस तै' दुरमति नासी, दीन रटनि ल्यौ आई ।

पाषंड भरंम कपाट खोलि कै', अनभै कथा सुनाई ॥

यहु संसार गंभीर अधिक जल, को गहि लावै तीरा ।

नाव जिहाज खेवइया साधू, उतरे दास कबीरा ॥ १८८ ॥

दिन दहूं चहूं कै कारणें, जैसैं सैबल फूले ।

भूठी सूं प्रीति लगाइ करि, साचे कूं भूले ॥ टेक ॥

जो रस गा सो परहरया, बिड़राता प्यारे ।

आसति कहूं न देखिहूं, बिन नांव तुम्हारे ॥

सांची सगाई रांम की, सुनि आतम मेरे ।

नरकि पडें नर बापुडे, गाहक जम तेरे ॥

हंस उड़या चित चालिया, सगपन कछू नाहीं ।

माटी सूं माटी मेलि करि, पीछै' अनखाहीं ॥

कहै कबीर जग अंधला, कोई जन सारा ।

जिनि हरि मरम न जाणिया, तिनि किया पसारा ॥ १८९ ॥

माधौ मैं ऐसा अपराधी, तेरी भगति हेत नहीं साधो ॥ टेक ॥

कारनि कवन आई जग जनम्यां, जनमि कवन सचुपाया ।

भौ जल तिरण चरण च्यंतामणि, ता चित घड़ी न लाया ॥

पर निंदा पर धन पर दारा, पर अपवादैं सूरा ।

ताबैं आवागवन होइ फुनि फुनि, ता पर संग न चूरा ॥

कांम क्रोध माया मद मंछर, ए संतति हंम माहीं ।

दया धरम ग्यांन गुर सेवा, ए प्रभू सूपिनैं नाहीं ॥

तुम्ह कृपाल दयाल दमोदर, भगत-बछल भौ-हारी ।
कहै कबीर धीर मति राखहु, सासति करौ हंमारी ॥ १८१ ॥

राम राइ कासनि करौ पुकारा,
ऐसे तुम्ह साहिब जाननिहारा ॥ टेक ॥
इंद्रो सबल निबल मैं माधौ, बहुत करै बरियाई ।
लौ धरि जाहिं तहां दुख पड़ये, बुधि बल कछू न बसाई ॥
मैं बपरौ का अलप मूढ़ मति, कहा भयौ जे लूटे ।
मुनि जन सती सिध अरु साधिक, तेऊ न आयै छूटे ॥
जोगी जती तपी संन्यासी, अह निसि खोजै काया ।
मैं मेरी करि बहुत बिगूते, बिषै बाघ जग खाया ॥
एकत छांडि जाहिं घर घरनीं, तिन भी बहुत उपाया ।
कहै कबीर कछु समझि न परई, बिषम तुम्हारी माया ॥ १८२ ॥

माधौ चले बुनावन माहा, जग जीते जाइ जुलाहा ॥ टेक ॥
नव गज दस गज गज उगनींसा, पुरिया एक तनाई ।
सात सूत दे गंड बहतरी, पाट लगी अधिकाई ॥
तुलह न तोली गजह न मापी, पहजन सेर अढाई ।
अढाई मैं जे पाव घटै तौ, करकस करै बजहाई ॥
दिन की बेठि खसम सूं कीजै, अरज लगीं तहां ही ।
भागी पुरिया घर ही छाड़ी, चले जुलाह रिसाई ॥
छोछी नलीं कामि नहीं आवै, लपटि रह्यो चरभाई ।
छांडि पसारा राम कहि बैरे, कहै कबीर समझाई ॥ १८३ ॥

बाजै जंत्र बजावै गुनीं, राम नाम बिन भूलो दुनी ॥ टेक ॥
रजगुन सतगुन तमगुन तीन, पंच तत ले साज्या बान ॥

तीनि लोक पूरा पेखनां, नाच नचावै एकै जनां ॥
कहै कबीर संसा करि दूरि, त्रिभवन नाथ रह्या भर पूरि ॥१८४॥

जंत्रो जंत्र अनूपम बाजै, ताका सबद गगन में गाजै ॥ टेक ॥
सुर की नालि सुरति का तूँबा, सतगुर साज बनाया ।
सुर नर गण गंधप ब्रह्मादिक, गुर बिन तिनहूँ न पाया ॥
जिभ्या तांति नासिका करहीं, माया का मैण लगाया ।
गमां बतीस मोरणां पांचों, नीका साज बनाया ॥
जंत्रो जंत्र तजै नहीं बाजै, तब बाजै जब वावै ।
कहै कबीर सोई जन साचा, जंत्रो सूँ प्रीति लगावै ॥ १८५ ॥

अवधू नादैं व्यं द गगन गाजै, सबद अनाहद बोलै ।
अंतरि गति नहीं देखै नेड़ा, ढूँढत बन बन डोलै ॥ टेक ॥
सालिगरांम तजौ सिव पूजौ, सिर ब्रह्मा का काटौ ।
सायर फोडि नीर मुकलांऊं, कुंवा सिला दे पाटौ ॥
चंद सूर दोइ तूँबा करिहूँ, चित चेतनि की डांडी ।
सुषमन तंती बाजण लागी, इहि बिधि त्रिषणां बांडी ॥
परम तत आधारी मेरे, सिव नगरी घर मेरा ।
कालहि षं डूं मीच बिहं डूं, बहुरि न करिहूँ फेरा ॥
जपौ न जाप हतौ नहीं गूगल, पुस्तक ले न पढांऊं ।
कहै कबीर परंम पद पाया, नहीं आंऊं नहीं जांऊं ॥१८६॥

बाबा पेड़ छाडि सब डाली लागे, मूँढे जंत्र अभागो ।
सोइ सोइ सब रैणि बिहांणीं, भोर भयौ तब जागे ॥ टेक ॥
देवलि जांऊं तौ देवी देखौं, तीरथि जांऊं त पाणीं ।
ओछी बुधि अगोचर बाणीं, नहीं परंम गति जांणीं ॥

साध पुकारै' समभक्त नाहीं, भ्रान जन्म के सूते ।
 बांधे ज्यूं अरहत की टीढरि, भ्रावत जात बिगूते ॥
 गुर बिन इहि जगि कौन भरोसा, काकै संगि हूँ रहिये ।
 गनिका कै घरि बेटा जाया, पिता नांव किस कहिये ॥
 कहै कबीर यहु चित्र बिरोध्या, बूझी अमृत बांणी ।
 खोजत खोजत सतगुर पाया, रहि गई भ्रावण जांणी ॥ १६७ ॥

भूली मालनी हे गोव्यंद जागतै जगदेव,
 तूं करै किसकी सेव ॥ टेक ॥

भूली मालनि पाती तोड़ै, पाती पाती जीव ।
 जा मूरति कौं पाती तोड़ै, सो मूरति नर जीव ॥
 टांचणहारै टांचिया, दे छाती ऊपरि पाव ।
 जे तूं मूरति सकल है, तौ घड़ण्हारे कौं, खाव ॥
 लाडू लावण लापसी, पूजा चढ़ै अपार ।
 पूजि पुजारा ले गया, दे मूरति कै मुहि छार ॥
 पाती ब्रह्मा पुहपे विष्णु, फूल फल महादेव ।
 तीनि देवों एक मूरति, करै किसकी सेव ॥
 एक न भूला दोइ न भूला, भूला सब संसारा ।
 एक न भूला दास कबीरा, जाकै राम अधारा ॥ १६८ ॥

सेइ मन समझि संमर्थ सरणांगता
 जाकी आदि अंति मधि कोइ न पावै ।
 कोटि कारिज सरै' देह गुण सब जरै,
 नैक जौ नांव पतिव्रत आवै ॥ टेक ॥
 आकार की ओट आकार नहीं ऊबरै,
 सिव बिरंचि अरु बिष्णु ताई ।

जास का सेवक तास कौ पाइहै,
 इष्ट कौ छाडि आगै न जाहीं ॥
 गुंणमई मूरति सेइ सब भेष मिलि,
 निरगुण निज रूप विश्राम नाहीं ।
 अनेक जुग बंदिगी बिबिध प्रकार की,
 अंति गुंण का गुंण हीं समाहीं ॥
 पांच तत तीनि गुण जुगति करि सांनियां,
 अष्ट बिन होत नहीं क्रम काया ।
 पाप पुन बोज अंकूर जांमैं मरै,
 उपजि बिनसै जेती सर्व माया ॥
 क्लितम करता कहैं, परम पद क्यूं लहैं,
 भूलि भ्रम में पड़ा लोक सारा ।
 कहै कबार राम रमिता भजै,
 कोई एक जन गए उतरि पारा ॥ १८६ ॥

राम राइ तेरी गति जांणीं न जाई ।
 जो जस करिहै सो तस पइहै, राजा राम नियाई ॥ टेक ॥
 जैसी कहै करै जो तैसी, तौ तिरत न लागै बारा ।
 कहता कहि गया सुनता सुंणि गया, करणीं कठिन अपारा ॥
 सुरही तिण चरि अमृत सरवैं, लेर भवंगहि पाई ।
 अनेक जतन करि निग्रह कीजै, बिषै बिकार न जाई ।
 संत करै असंत की संगति, तासूं कहा बसाई ।
 कहै कबीर ताके भ्रम छूटै, जे रहे राम ल्यौ लाई ॥ २०० ॥

कथणीं बदणीं सब जंजाल,
 भाव भगति अरु राम निराल ॥ टेक ॥
 कथै बदै सुणैं सब कोई, कथे न होई कीये होइ ॥

कूड़ी करणी राम न पावै, साच टिकै निज रूप दिखावै ॥
घट में अग्नि घर जल अवास, चेति बुझाइ कबोरादास ॥२०१॥

[राग आसावरी]

ऐसी रे अवधू की बाण्णी,
ऊपरि कूवटा तलि भरि पाण्णी ॥ टेक ॥
जब लग गगन जोति नहीं पलटै,
अबिनासी सूं चित नहीं चिहुटै ॥
जब लग भवर गुफा नहीं जानै,
तौ मेरा मन कैसें मानै ।
जब लग त्रिकुटी संधि न जानै,
ससिहर कै घरि सूर न आनै ॥
जब लग नाभि कवल नहीं सोधै,
तौ हीरै हीरा कैसें बेधै ॥
सोलह कला संपूरण छाजा,
अनहद कै घरि बाजै बाजा ॥
सुषमन कै घरि भया अनंदा,
बलटि कवल भेटे गोब्यंदा ॥
मन पवन जब परचा भया,
ज्यूं नाले राषो रस मइया ॥
कहै कबोर घटि लेहु बिचारी,
औघट घाट सींचि ले क्यारी ॥ २०२ ॥

मन का भ्रम मन हीं थै भागा,
सहज रूप हरि खलण लागा ॥ टेक ॥
मैं तै तै मैं ए हूँ नाहीं, आपै अकल सकल घट माहीं ॥

जब थै' इनमन उनमन जानां, तब रूप न रेष तहां ले बानां ॥
 तन मन मन तन एक समानां, इन अनभै मांहैं मन मानां ।
 आतमलीन अष'डित रांमां, कहै कबीर हरि मांहि समानां ॥२०३॥

आत्मा अनंदी जोगी, पीवै महारस अमृत भोगी ॥ टेक ॥
 ब्रह्म अगनि काया परजारी, अजपा जाप उनमनों तारी ॥
 त्रिकुट कोट मैं आसण मांडै, सहज समाधि बिषै सब छांडै ॥
 त्रिवेणी बिभूति करै मन मंजन, जन कबीर प्रभू अलष निरंजन २०४

या जोगिया की जुगति जु बूझै,
 राम रमैं ताकौं त्रिभुवन सृझै ॥ टेक ॥
 प्रगट कंथा गुप्त अधारी, तामैं मूरति जीवनि प्यारी ॥
 है प्रभू नेरै खोजै दूरि, ग्यान गुफा मैं सींगी पूरि ॥
 अमर बेलि जो छिन छिन पीवै, कहै कबीर सो जुगि जुगि जीवै २०५

सो जोगी जाकै मन मैं मुद्रा,
 राति दिवस न करई निद्रा ॥ टेक ॥
 मन मैं आसण मन मैं रहणां, मन का जप तप मन सूं कहणां ॥
 मन मैं षपरा मन मैं सींगी, अनहद बेन बजावै रंगी ॥
 पंच परजारि भसम करि भूका, कहै कबीर सो लहसै लंका २०६

बाबा जोगी एक अकेला, जाकै तीर्थ व्रत न मेला ॥ टेक ॥
 भोली पत्र बिभूति न बटवा, अनहद बेन बजावै ।
 मांगि न खाइ न भूखा सोवै, घर अंगनां फिरि आवै ॥
 पांच जनां की जमाति चलावै, तास गुरु मैं चेला ।
 कहै कबीर उनि देसि सिधाये, बहुरि न इहि जगि मेला ॥२०७॥

जोगिया तन कौ जंत्र बजाइ,

ज्यूं तेरा आवागवन मिटाइ ॥ टेक ॥

तत करि तांति धर्म करि डांडी, सत की सारि लगाइ ।

मन करि निहचल आसंण निहचल, रसनां रस उपजाइ ॥

चित करि बटवा तुचा मेषली, भसमें भसम चढ़ाइ ।

तजि पाषंड पांच करि निग्रह, खोजि परम पद राइ ॥

हिरदै सींगो ग्यान गुणि बांधौ, खोजि निरंजन साचा ।

कहै कबीर निरंजन की गति, जुगति बिनां प्यंड काचा ॥२०८॥

अवधू ऐसा ज्ञान बिचारी, ज्यूं बहुरि न हूँ संसारी ॥टेक॥

च्यंत न सोज चित बिन चितवै, बिन मनसा मन होई ।

अजपा जपत सुनि अभि-अंतरि, यहु तत जानै सोई ॥

कहै कबीर खाद जब पाया, बंक नालि रस खाया ।

अमृत भरै ब्रह्म परकासै, तब ही मिलै राम राया ॥ २०९ ॥

गोव्यंदे तुम्हारै बन कंदलि, मेरो मन अहेरा खेलै ॥

बपु बाड़ी अनगु मृग, रचिहीं रचि मेलै ॥ टेक ॥

चित तरउवा पवन पेदा, सहज मूल बांधा ।

ध्यान धनक जोग करम, ग्यान बान सांधा ॥

षट चक्र कंवल बेधा, जारि उजारा कीन्हां ।

काम क्रोध लोभ मोह, हाकि स्यावज दीन्हां ॥

गगन मंडल रोकि बारा, तहां दिवस न राती ।

कहै कबीर छाडि चले, बिछुरे सब साथी ॥ २१० ॥

साधन कंचू हरि न उतारै, अनभै हूँ तौ अर्थ बिचारै ॥टेक॥

बाणों सुरंग सोधि करि आणै, आणै नौ रंग धागा ।

चंद सूर एकंतरि कीया, सीवत बहु दिन लागा ॥
 पंच पदार्थ छोड़ि समानां, हीरै मोती जड़िया ।
 कोटि बरस लूं कंचूं सीयां, सुर नर धंधै पाड़या ॥
 निस बासुर जे सोवै नहिं, ता नरि काल न खाई ।
 कहै कबीर गुर परसादै, सहजै रहया समाई ॥ २११ ॥

जीवत जिनि मारै मृवा मति ल्यावै,
 मास बिहूणां घरि मत आवै हो कंता ॥ टेक ॥
 उर बिन पुर बिन चंच बिन, बपु बिहूनां सोई ।
 सो स्यावज जिनि मारै कंता, जाकै रगत मास न होई ॥
 पैली पार के पारधी, ताकी धुनहीं पिनच नहीं रे ।
 ता बेली कौ दूंक्यौ मृग लौ, ता मृग कैसी सनहीं रे ॥
 मारया मृग जीवता राख्या, यहु गुर ग्यांन मही रे ।
 कहै कबीर स्वांमीं तुम्हारं मिलन कौं, बेली है पर पात नहीं रे ॥ २१२ ॥

धीरौ मेरे मनवां तोहिं धरि टांगौ,
 तै तौ कीयौ मेरे खसम सूं षांगौ ॥ टेक ॥
 प्रेम की जेवरिया तेरे गलि बांधूं,
 तहां लै जाउं जहां मेरौ माधौ ॥
 काया नगरी पैसि किया मै बासा,
 हरि रस छाड़ि बिषै रसि माता ॥
 कहै कबीर तन मन का ओरा,
 भाव भगति हरि सूं गठजोरा ॥ २१३ ॥

पारब्रह्म देख्या हो तत बाड़ी फूली, फल लागा बडहूली ।
 सदा सदाफल दाख बिजौरा कौतिकहारी भूली ॥ टेक ॥
 द्वादस कूंवा एक बनमाली, उलटा नीर चलावै ।

सहजि सुषमनां कूल भरावै, दह दिसि बाड़ी पावै ॥
 ल्यौकी लेज पवन का ढींकू, मन मटका ज बनाया ।
 सत की पाटि सुरति का चाठा, सहजि नीर मुकलाया ॥
 त्रिकुटो चढ्यौ पाव ठौ ढारै, अरध उरध की क्यारी ।
 चंद सूर दोऊ पाँणति करिहैं, गुर मुषि बीज बिचारी ॥
 भरी छाबड़ी मन बैकुंठा, साईं सूर हिया रंगा ।
 कहै कबीर सुनहु रे संतौ, हरि हंम एकै संग ॥ २१४ ॥

राम नाम रंग लागौ, कुरंग न होई ।
 हरि रंग सौ रंग और न कोई ॥ टेक ॥
 और सबै रंग इहिं रंग थैं छूटै, हरि-रंग लागा कदे न खूटै ॥
 कहै कबीर मेरे रंग राम राई, और पतंग रंग उड़ि जाई ॥ २१५ ॥

कबीरा प्रेम की कूल ठरै, हमारै राम बिनां न सरै ।
 बांधि लै धोरा सींचि लै क्यारी, ज्यूं तूं पेड भरै ॥ टेक ॥
 काया बाड़ी माहैं माली, टहल करै दिन राती ।
 कबहूँ न सोवै काज संवारे, पाँणतिहारी माती ॥
 सेभै कूवा स्वांति अति सीतल, कबहूँ कुवा वनहीं रे ।
 भाग हमारे हरि रखवाले, कोई उजाड़ नहीं रे ॥
 गुर बीज जमाया कि रखि न पाया, मन की आपदा खोई ।
 औरै स्यावढ करै पारिसा, सिला करै सब कोई ॥
 जौ घरि आया तौ सब ल्याया, सबही काज संवारया ।
 कहै कबीर सुनहु रे संतौ, थकित भया मैं हारया ॥ २१६ ॥

राजा राम बिनां तकती धो धो ।

राम बिनां नर क्यूँ छूटौगे,

जम करै नग धो धो धो ॥ टेक ॥

मुद्रा पहरां जोग न होई,
 घूँघट काढ्यां सती न कोई ॥
 माया कै सँगि हिलि मिलि आया, ।
 फोकट साटै जनम गँवाया ॥
 कहै कबीर जिनि हरि पद चीन्हां,
 मलिन प्यंड थै' निरमल कीन्हां ॥ २१७ ॥

है कोई राम नाम बतावै, बस्त अगोचर मोहि लखावै ॥ टेक ॥
 राम नाम सब कोई बखानै', राम नाम का मरम न जानै' ॥
 ऊपर की मोहि बात न भावै, देखै गावै तौ सुख पावै ।
 कहै कबीर कछु कहत न आवै, परचै विनां मरम को पावै ॥ २१८ ॥

गोव्यं दे तू' निरंजन तू' निरंजन तू' निरंजन राया ।
 तेरे रूप नाहीं रेख नाहीं मुद्रा नहीं माया ॥ टेक ॥
 समद नाहीं सिषर नाहीं, धरती नहीं गगनां ।
 रवि ससि दोउ एकै नाहीं, बहत नाहीं पवनां ॥
 नाद नाहीं व्यं'द नाहीं, काल नहीं काया ।
 जब तैं जल व्यं'व न होते, तब तू'हीं राम राया ॥
 जप नाहीं तप नाहीं, जोग ध्यान नहीं पूजा ।
 सिव नाहीं सकति नाहीं, देव नहीं दूजा ॥
 रुग न जुग न स्याम अथरवन, बेद नहीं व्याकरनां ।
 तेरी गति तू'हीं जानै', कबोरा तो सरनां ॥ २१९ ॥

राम कै नाई नोसान बागा, ताका मरम न जानै' कोई ।
 भूख त्रिषा गुण वाकै नाहीं, घट घट अंतरि सोई ॥ टेक ॥
 बेद बिबर्जित भेद बिबर्जित, बिबर्जित पाप रु पुंन्य' ।
 ग्यान बिबर्जित ध्यान बिबर्जित, बिबर्जित अस्थूल सुंन्य' ॥

भेष विवर्जित भीख विवर्जित, विवर्जित उद्यंभक रूपं ।

कहै कबीर तिहूं लोक विवर्जित, ऐसा तत अनूपं ॥ २१० ॥

रांम रांम रांम रमि रहिये, साषित सेती भूलि न कहिये॥टेक॥

का सुनहां कौं सुमृत सुनांये, का साषित पै हरि गुन गांये ।

का कऊवा कौं कपूर खवांये, का विसहर कौं दूध पिलांये ॥

साषित सुनहां दोऊ भाई, वो नांदै वौ भौंकत जाई ।

अमृत ले ले नीब स्यंचाई, कहै कबीर बाकी बांनि न जाई॥२२१॥

अब न बसूं इहिं गांइ गुसांई,

तेरे नेवगी खरे सयांनै हो रांम ॥ टेक ॥

नगर एक तहां जीव धरम हता, बसै जु पंच किसानां ।

नैनूं निकट श्रवणूं रसनूं, इंद्री कछ्छा न मानै हो रांम ॥

गांइ कु ठाकुर खेत कु नेपै, काइथ खरच न पारै ।

जोरि जेवरी खेति पसारै, सब मिलि मोकौं मारै हो रांम ॥

खोटौ महतौ बिकट बलाही, सिर कसदम का पारै ।

बुरो दिवांन दादि नहिं लागै, इक बाँधै इक मारै हो रांम ॥

धरमराइ जब लेखा मांग्या, बाकी निकसी भारी ।

पांच किसानां भाजि गये हैं, जीव धर बांध्यौ पारी हो रांम ॥

कहै कबीर सुनहु रे संतौ, हरि भजि बाँधौ भेरा ।

अब की बेर बकसि बंदे कौं, सब खत करौ नबेरा ॥ २२२ ॥

ता भै थै मन लागौ रांम तोही,

करौ कृपा जिनि बिसरौ मोही ॥ टेक ॥

जननीं जठर सहा दुख भारी,

सो संकथा नहीं गई हमारी ॥

दिन दिन तन छीजै जरा जनावै,
 केस गहें काल बिरदंग बजावै ॥
 कहै कबीर करुणामय आगैं,
 तुम्हारी क्रिया बिना यहु बिपति न भागै ॥ २२३ ॥

कब देखूं मेरे राम सनेही,
 जा बिन दुख पावै मेरी देहीं ॥ टेक ॥
 हूँ तेरा पंथ निहारूं स्वांमीं,
 कब रमि लहुगे अंतरजामीं ॥
 जैसैं जल बिन मीन तलपै,
 ऐसै हरि बिन मेरा जियरा कलपै ॥
 निस दिन हरि बिन नौद न आवै,
 दरस पियासी रांम क्युं सचुपावै ॥
 कहै कबीर अब बिलंब न कीजै,
 अपनौं जानि मोहि दरसन दीजै ॥ २२४ ॥

सो मेरा रांम कबै घरि आवै, ता देखे' मेरा जिय सुख पावै ॥ टेक ॥
 बिरह अगिनि तन दिया जराई, बिन दरसन क्युं होइ सराई ॥
 निस वासुर मन रहै उदासा, जैसैं चातिग नीर पियासा ॥
 कहै कबीर अति आतुरताई, हमकौं बेगि मिलौ रांमराई ॥ २२५ ॥

मैं सासने पोव गौंहनि आई ।
 सांई' संगि साध नहीं पूगी, गयौ जोवन सुपिनां की नाई' ॥ टेक ॥
 पंच जना मिलि मंडप छाथौ, तीनि जनां मिलि लगन लिखाई ।
 सखी सहेली मंगल गावै, सुख दुख माथै हलद चढ़ाई ॥

नांनां रंगैं भांवरि फेरी, गांठि जेरि बाबै पति ताई ।
 पूरि सुहाग भयौ बिन दूलह, चौक कै रंगि धरगौ सगौ भाई ॥
 अपनै पुरिष मुख कबहूँ न देख्यौ, सती होत समझी समझाई ।
 कहै कबीर हूँ सर रचि मरि हूँ, तिरौं कंत ले तूर बजाई ॥२२६॥

धीरैं धीरैं खाइबौ अनत न जाइबौ,
 रांम रांम रांम रमि रहिबौ ॥ टेक ॥
 पहली खाई आई माई, पीछै खैहूँ सगौ जवाई ।
 खाया देवर खाया जेठ, सब खाया सुसर का पेट ॥
 खाया सब पटण का लोग, कहै कबीर तब पाया जोग ॥२२७॥

मन मेरौ रहटा रसना पुरइया,
 हरि कौ नाउं लै लै काति बहुरिया ॥ टेक ॥
 चारि खूंटो दोइ चमरख लाई, सहजि रहटवा दियौ चलाई ॥
 सासू कहै काति बहू ऐसै, बिन कातै निसतरिबौ कैसै ॥
 कहै कबीर सूत भल काता, रहटां नहीं परम पद दाता ॥२२८॥

अब की घरी मेरो घर करसी,
 साध संगति ले मोकौं तिरसी ॥ टेक ॥
 पहली को घाल्यौ भरमत डोल्यौ, सच कबहूँ नहीं पायौ ।
 अब की धरनि धरी जा दिन थै, मगलौ भरम गमायौ ॥
 पहली नारि सदा कुलवंती, सासू सुसरा मानै ।
 देवर जेठ सबनि की प्यारी, पिय कौ मरम न जानै ॥
 अब की धरनि धरी जा दिन थै, पीय सूं बांन बन्यूं रे ।
 कहै कबीर भाग बपुरी कौ, आइ रु रांम सुन्यूं रे ॥ २२९ ॥
 मेरी मति बैरी रांम बिसारगौ,

किहि बिधि रहनि रहूं हो दयाल ।

सेजैं रहूं नैन नहीं देखौं,

यहु दुख कासौं कहूं हो दयाल ॥ टेक ॥

सासु की दुखी सुसर की प्यारी, जेठ कै तरसि डरौं रे ।

नणद सुहेली गरब गहेली, देवर कै बिरह जरौं हो दयाल ॥

बाप सावकौ करै लराई, माया सद मतिवाली ॥

सगौ भईया लै सलि चढ़िहूँ, तब हूँ हूँ पीयहि पियारी ॥

सोचि बिचारि देखौ मन मांहीं, औसर आइ बन्यूं रे ।

कहै कबीर सुनहुं मति सुंदरि, राजा राम रमूं रे ॥ २३० ॥

अवधू ऐसा ग्यांन बिचारी, तार्थे भई पुरिष थैं नारी ॥ टेक ॥

नां हूं परनों नां हूं कारी, पूत जन्युं यौ हारी ।

काली मूंड कौ एक न छोड़्यौ, अजहूं अकन कुवारी ॥

बाम्हन कै बम्हनेटी कहियौं, जोगी कै घरि चेली ।

कलमां पढि पढि भई तुरकनों, अजहूं फिरौं अकेली ॥

पीहरि जाऊं न रहूं सासुरै, पुरषहि अंगि न लाऊं ।

कहै कबीर सुनहु रे संतौ, अंगहि अंग न छुवाऊं ॥ २३१ ॥

मींठी मींठा माया तजी न जाई,

अग्यांनीं पुरिष कौं भोलि भोलि खाई ॥ टेक ॥

निरगुंण सगुंण नारी, संसारि पियारी,

लषमणि त्यागी गोरषि निवारी ॥

कीड़ी कुंजर मैं रही समाई,

तीनि लोक जीत्या माया किनहूँ न खाई ॥

कहै कबीर पद लेहु बिचारी,

संसारि आइ माया किनहूँ एक कहीं षारी ॥ २३२ ॥

मन कै मैलौ बाहरि ऊजलौ किसौ रे,
 खांडे की धार जन कौ धरम इसौ रे ॥ टेक ॥
 हिरदा कौ बिलाव नैन बग ध्यानीं,
 ऐसी भगति न होइ रे प्रानीं ॥
 कपट की भगति करै जिन कोई,
 अंत की बेर बहुत दुख होई ॥
 छांडि कपट भजौ राम राई,
 कहै कबीर तिहूं लोक बडाई ॥ २३३ ॥

चोखौ बनज व्यौपार करीजै,
 आइनें दिसावरि रे राम जपि लाहौ लीजै ॥ टेक ॥
 जब लग देखौं हाट पसारा,
 उठि मन बणियों रे, करि ले बणज सवारा ॥
 बेगे हो तुम्ह लाद लदानां,
 घौघट घाटा रे चलनां दूरि पर्यानां ॥
 खरा न खोटा नां परखानां,
 लाहे कारनि रे सब मूल हिरानां ॥
 सकल दुनीं मैं लोभ पियारा,
 मूल ज राखै रे सोई बनिजारा ॥
 देस भला परिलोक बिरानां,
 जन दोइ चारि नरे पूछौ साध सयानां ॥
 सायर तीर न वार न पारा,
 कहि समझावै रे कबीर बणिजारा ॥ २३४ ॥

जौ मैं ग्यांन विचार न पाया,
 तौ मैं यौहीं जन्म गंवाया ॥ टेक ॥

यहु संसार हाट करि जानूं, सबको बणिजण आया ।
 चेति सकै सो चेतौ रे भाई, मूरिख मूल गंवाया ॥
 थाके नैन बैन भी थाके, थाकी सुंदर काया ।
 जामण मरण ए द्वै थाके, एक न थाकी माया ॥
 चेति चेति मेरे मन चंचल, जब लग घट मैं सासा ।
 भगति जाव परभाव न जइयौ, हरि के चरन निवासा ॥
 जे जन जानि जपै जग जीवन, तिनका ग्यान न नासा ।
 कहै कबीर वै कबहुं न हारै, जानि न ढारै पासा ॥ २३५ ॥

लावौ बाबा आगि जलावो घरा रे,
 ता कारनि मन धंधै परा रे ॥ टेक ॥
 इक डांइनि मेरे मन में बसै रे, नित उठि मेरे जीय कौं डसै रे ॥
 या डांइन्य के लरिका पांच रे, निस दिन मोहि नचावै नाच रे ॥
 कहै कबीर हूँ ताकौ दाम, डांइनि कै संगि रहै उदास ॥ २३६ ॥

बंदे तोहि बंदिगी सौं काम, हरि बिन जानि और हरांम ।
 दूरि चलणां कूंच बेगा, इहां नहीं मुकांम ॥ टेक ॥
 इहां नहीं कोई यार दोस्त, गांठि गरथ न दांम ।
 एक एकै संगि चलणां, बीचि नहीं बिभ्रांम ॥
 संसार सागर विषम तिरणां, सुमरि लै हरि नांम ।
 कहै कबीर तहां जाइ रहणां, नगर बसत निधान ॥ २३७ ॥

झूठा लोग कहैं घर मेरा ।
 जा घर माहैं बोलै डोलै, सोई नहीं तन तेरा ॥ टेक ॥
 बहुत बंध्या परिवार कुटुंब मैं, कोई नहीं किस करा ।
 जीवत आषि मूंदि किन देखौ, संसार अंध अंधेरा ॥

बस्ती मैं थै मारि चलाया, जंगलि किया बसेरा ।
 घर कौं खरच खबरि नहीं भेजी, आप न कीया फेरा ॥
 हस्ती घोड़ा बैल बांहरणीं, संग्रह किया घणेर ।
 भीतरि बीबी हरम महल मैं, साल भिया का डेरा ॥
 बाजी की बाजीगर जानै, कै बाजीगर का चेरा ।
 चेरा कबहुं उभकि न देखै, चेरा अधिक चितेरा ॥
 नौ मन सूत उरभि नहीं सुरभै, जनमि जनमि उरभेरा ।
 कहै कबीर एक रांम भजहु रे, बहुरि न हूँगा फेरा ॥ २३८ ॥

हावड़ि धावड़ि जनम गवावै,

कबहुं न रांम चरन चित लावै ॥ टेक ॥

जहां जहां दांम तहां मन धावै, अंगुरी गिनतां नि बिहावै ।
 तृया का बदन देखि सुख पावै, साध की संगति कबहुं न आवै ॥
 सरग के पंथि जात सब लोई, सिर धरि पोट न पहुँच्या कोई ॥
 कहै कबीर हरि कहा उबारै, अपणै पाव आप जौ मारै ॥ २३९ ॥

प्रांणीं काहे कै लोभ लागि, रतन जनम खोयौ ।

बहुरि हीरा हाथि न आवै, रांम चिनां रोयौ ॥ टेक ॥

जल बूंद थै ज्यनि प्यंढ बांध्या, अगिन कुंढ रहाया ।
 दस मास माता उदरि राख्या, बहुरि लागी माया ॥
 एक पल जीवन की आश नाहीं, जम निहारै सासा ।
 बाजीगर संसार कबीरा, जानि ढारौ पासा ॥ २४० ॥

फिरत कत फूल्यौ फूल्यौ ।

जब दस मास उरध मुखि होते, सो दिन काहे भूल्यौ ॥ टेक ॥
 जौ जारै तौ होइ भसम तन, रहत कृम हूँ जाई ।
 काचै कुंभ उद्यक भरि राख्यौ, तिनकी कौन बडाई ॥

ज्यूं माषी मधु संचि करि, जोरि जोरि धन कीनो ।
 मूयें पीछै लेहु लेहु करि, प्रेत रहन क्यूं दीनूँ ॥
 ज्यूं घर नारी संग देखि करि, तब लग संग सुहेलौ ।
 मरघट घाट खैचि करि राखे, वह देखिहु हंस अकेलौ ॥
 राम न रमहु मदन कहा भूले, परत अंधेरै कूवा ।
 कहै कबीर सोई आप बंधायौ, ज्यूं नलनीं का सूवा ॥ २४१ ॥

जाइ रे दिन हीं दिन देहा, करि लै बैरी राम सनेहा ॥ टेक ॥
 बालापन गयौ जोवन जासी, जुग मरण भौ संकट आसी ॥
 पलटे केस नैन जल छाया, मूरिख चेति बुढ़ापा आया ॥
 राम कहत लज्या क्यूं कीजै, पल पल आउ घटै तन छीजै ॥
 लज्या कहै हूं जम की दासी, एकै हाथि मुदिगर दूजै हाथि पासी ॥
 कहै कबीर तिनहूं सब हारया, राम नाम जिनि मनहु बिसारया ॥ २४२ ॥

मेरी मेरी करतां जनम गयौ,
 जनम गयौ परि हरि न कहौ ॥ टेक ॥
 बारह बरस बालापन खोयौ, बीस बरस कछू तप न कीयौ ।
 तीस बरस कै राम न सुमिरयौ, फिरि पछितानों बिरध भयौ ॥
 सूकै सरवर पालि बंधावै, लुणै खेत हठि बाड़ि करै ।
 आयौ चोर तुरंग मुसि ले गयौ, मेरी राखत मुगध फिरै ॥
 सीस चरन कर कंपन लागे, नैन नीर अस राल बहै ।
 जिभ्या बचन सूध नहीं निकसै, तब सुकरित की बात कहै ॥
 कहै कबीर सुनहु रे संतौ, धन संच्यो कछु संगि न गयौ ।
 आई तलब गोपाल राइ की, मैड़ी मंदिर छाड़ि चलयौ ॥ २४३ ॥

जाहि जाती नांव न लीया, फिरि पछितावैगौ रे जीया ॥टेक॥
 धंधा करत चरन कर घाटे, आव घटी तन खीना ।
 बिषै बिकार बहुत रुचि मानीं, माया मोह चित दीन्हं ॥
 जागि जागि नर काहे सोवै, सोइ सोइ कब जागैगा ।
 जब घर भीतरि चोर पडैंगे, तब अंचलि किस कै लागैगा ॥
 कहै कबीर सुनहु रे संतौ, करि ल्यौ जे कछु करणं ।
 लख चौरासी जोनि फिरौंगे, बिनां राम की सरनां ॥ २४४ ॥

माया मोहि मोहि हित कीन्हं,
 ताथै मेरौ ग्यान ध्यान हरि लीन्हं ॥ टेक ॥
 संसार ऐसा सुपिन जैसा, जीव न सुपिन समान ।
 सांच करि नरि गांठि बांध्यौ, छाडि परम निधान ॥
 नैन नेह पतंग हुलसै, पसू न पेखै आगि ।
 काल पासि जु मुगध बांध्या, कलंक कामिनीं लागि ॥
 करि बिचार बिकार परहरि, तिरण तारण सोइ ।
 कहै कबीर रघुनाथ भजि नर, दूजा नाहीं कोइ ॥ २४५ ॥

ऐसा तेरा भूठा मीठा लागा, ताथै साचे सूं मन भागा ॥टेक॥
 भूठे के घरि भूठा आया, भूठा खान पकाया ।
 भूठी सहन क भूठा बाह्या, भूठै भूठा खाया ॥
 भूठा ऊठण भूठा बैठण, भूठी सबै सगाई ।
 भूठे के घरि भूठा राता, साचे को न पत्याई ॥
 कहै कबीर अलह का पंगुरा, साचे सूं मन लावौ ।
 भूठे केरी संगति त्यागौ, मन बंछित फल पावौ ॥ २४६ ॥

कौण कौण गया राम कौण कौणन जासी,
 पड़सी काया गढ़ माटी थासी ॥ टेक ॥
 इंद्र सरीखे गये नर कोड़ी, पांचों पांडों सरिषी जोड़ी ।
 धूँ अविचल नहीं रहसी तारा, चंद सूर की आइसी बारा ॥
 कहै कबीर जग देखि संसारा, पड़सी घट रहसी निरकारा ॥२४७॥

ताथै सेविये नारांइणां,
 प्रभू मेरौ दीन दयाल दया करणा ॥ टेक ॥
 जौ तुम्ह पंडित आगम जाणौं, विद्या व्याकरणां ।
 तंत मंत सब ओषदि जाणौं, अंति तऊ मरणां ॥
 राज पाट स्यंघासण आसण, बहु सुंदरि रमणां ।
 चंदन चीर कपूर बिराजत, अंति तऊ मरणां ॥
 जोगी जती तपी संन्यासी, बहु तीरथ भरमणां ।
 लुंचित मुंडित मोनि जटाधर, अंति तऊ मरणां ॥
 सोचि बिचारि सबै जग देख्या, कहूं न ऊवरणां ।
 कहै कबीर सरणई आयौ, मेदि जामन मरणां ॥ २४८ ॥

पांडे न करसि बाद बिबादं,
 या देही बिन सबद न स्वादं ॥ टेक ॥
 अंड ब्रह्मंड खंड भी माटो, माटी नवनिधि काया ।
 माटी खोजत सतगुर भेट्या, तिन कछू अलख लखाया ॥
 जीवत माटो मूवा भी माटो, देखौ ग्यान बिचारी ।
 अंति कालि माटो मैं बासा, लैटै पांव पसारी ॥
 माटो का चित्र पवन का थंभा, व्यंद सँजोगि उपाया ।
 भानै घड़ै संवारै सोई, यहु गोव्यंद की माया ॥
 माटो का मंदिर ग्यान का दोपक, पवन बाति उजियारा ।
 तिहि उजियारै सब जग सूझै, कबीर ग्यान बिचारा ॥ २४९ ॥

मेरी जिभ्या बिल नैन नाराइन, हिरदै जपौ गोविंदा ।

जंम दुवार जब लेख मांग्या, तब का कहिसि मुकंदा ॥ टेक ॥

तू बांम्हण मैं कासी का जुलाहा, चीन्हि न मोर गियाना ।

तैं सब मांगे भूपति राजा, मोरे राम धियाना ॥

पूरव जनम हम बांम्हन होते, वोछै करम तप हीना ।

रामदेव की सेवा चूका, पकरि जुलाहा कीन्हा ॥

नौमी नेम दसमीं करि संजम, एकादसी जागरणा ।

द्वादसी दान पुनि की बेलां, सर्व पाप छगै करणां ॥

भौ बूडत कछु उपाइ करीजै, ज्युं तिरि लंगै तीरा ।

राम नाम लिखि भेरा बांधौ, कहै उपदेस कबीरा ॥ २५० ॥

कहु पांडे सुचि कवन ठांव,

जिहि घरि भोजन बैठि खाऊं ॥ टेक ॥

माता जूठी पिता पुनि जूठा, जूठे फल चित लागे ।

जूठा आवन जूठा जाना, चेतहु क्युं न अभागे ॥

अन जूठा पांणी पुनि जूठा, जूठे बैठि पकाया ।

जूठी कड़छा अन परोस्या, जूठे जूठा खाया ॥

चौका जूठा गोबर जूठा, जूठी का ढीकारा ।

कहै कबीर तेई जन सूचे, जे हरि भजि तजहिं विकारा ॥ २५१ ॥

(२५०) ख० प्रति में इसके आगे यह पद है—

कहु पांडे कैसी सुचि कीजै,

सुचि कीजै तौ जनम न लीजै ॥ टेक ॥

जा सुचि केरा करहु बिचारा, भिष्ट भए लीन्हा औतारा ॥

जा कारणि तुम्ह धरती काटी, तामैं मृए जीव सौ सारी ॥

जा कारण तुम्ह लीन जनेऊ, थूक लगाइ कातैं सब कोऊ ॥

एक खाल घृत केरी साखा, दूजी खाल मैले घृत राखा ॥

सो घृत कब देवतनि चढ़ायौ, सोई घृत सब दुनियां खायौ ॥

कहै कबीर सुचि देहु बताई, राम नाम लीजौ रे भाई ॥ ५० ॥

हरि बिन भूठे सब व्यौहार, केते कोऊ करौ गँवार ॥ टेक ॥
 भूठा जप तप भूठा ग्यान, राम राम बिन भूठा ध्यान ॥
 विधि न खेद पूजा आचार, सब दरिया मैं वार न पार ॥
 इंद्री स्वारथ मन के स्वाद, जहां साच तहां मांडै बाद ॥
 दास कबीर रह्या ल्यौ लाइ, भर्म कर्म सब दिये बहाइ ॥ २५२ ॥

चेतनि देखै रे जग धंधा ।

राम नाम का मरम न जानै, माया कै रसि अंधा ॥ टेक ॥
 जनमत हीरू कहा ले आयौ, मरत कहा ले जासी ।
 जैसै तरवर बसत पंखेरू, दिवस चारि के बासी ॥
 आपा थापि अवर कौ निंदै, जन्मत हीं जड़ काटी ।
 हरि की भगति बिनां यहु देही, धब लोटै ही फाटी ॥
 काम क्रोध मोह मद मछर, पर-अपवाद न सुणिये ।
 कहै कबीर साध की संगति, राम नाम गुन भणिये ॥ २५३ ॥

रे जम नाहि नवै व्यौपारी, जे भरै जगति तुम्हारी ॥ टेक ॥
 बसुधा छाड़ि बनिज हम कीन्हों, लाघो हरि कौ नाऊं ।
 राम नाम की गूनि भराऊं, हरि कै टांडै जाऊं ॥
 जिनकै तुम्ह अगिवानीं कहियत, सो पूंजी हंम पासा ।
 अबै तुम्हारौ कछु बल नाहीं, कहै कबारा दासा ॥ २५४ ॥

माँयां तुम्ह सौं बोल्यां बणि नहीं आवै ।

हम मसकीन खुदाई बंदे, तुम्हरा जस मनि भावै ॥ टेक ॥
 अलह अवलि दीन का साहिब, जोर नहीं फुरमाया ।
 मुरिसद पीर तुम्हारै है को, कहौ कहां थै आया ॥
 रोजा करै निवाज गुजारै, कल मैं भिसत न होई ।
 सतरि कावे इक दिल भीतरि, जे करि जानै कोई ॥

खसम पिछानि तरस करि जिय मैं, माल मनीं करि फोकी ।
 आपा जानि साईं कूं जानैं, तब है भिस्त सरीकी ॥
 माटी एक भेष धरि नानां, सब मैं ब्रह्म समानां ।
 कहै कबीर भिस्त छिटकाई, दोजग ही मन मानां ॥ २५५ ॥

अलह ल्यौ लायें काहे न रहिये,
 अह निसि केवल रांम नांम कहिये ॥ टेक ॥
 गुरमुखि कलमां ग्यान मुखि छुरी, हुई हलाल पंचू पुरी ॥
 मन मसीति मैं किनहूं न जानां, पंच पीर मालिम भगवानां ॥
 कहै कबीर मैं हरि गुंन गाऊं, हिंदू तुरक दोऊ समभाऊं ॥ २५६ ॥

रे दिल खोजि दिलहर खोजि, नां परि परेसानों मांहि ।
 महल माल अजीज औरति, कोई दस्तगीरी क्यूं नांहि ॥ टेक ॥
 पीरां मुरीदां काजियां, मुलां अरू दरवेस ।
 कहां थे तुम्ह किनि कीये, अकलि है सब नेस ॥
 कुरांना कतेवां अस पढि पढि, फिकरि या नहीं जाइ ।
 टुक दम करारी जे करै, हाजिरां सुर खुदाइ ॥
 दरोगां बकि बकि हूंहिं खुसियां, बे-अकलि बकहिं पुमांहि ।
 हक खाच खालिक खालक म्यानै, सो कछु सच सूरति मांहि ॥
 अलह पाक तूं नापाक क्यूं, अब दूसर नाहीं कोइ ।
 कबीर करम करीम का, करनों करै जानैं सोइ ॥ २५७ ॥

खालिक हरि कहीं दर हाल ।

पंजर जसि करद दुसमन, मुरद करि पैमाल ॥ टेक ॥

(२५७) क० प्रति में आठवीं पंक्ति का पाठ इस प्रकार है—

साचु खलक खालक, सैल सूरति मांहि ॥

भिस्त हुसकां दोजगां, दुंदर दराज दिवाल ।
 पहनाम परदा ईत आतस, जहर जंगम जाल ॥
 हम रफत रहबरहु समां, मैं खुर्दा सुमां बिसियार ।
 हम जिमीं असमान खालिक, गुंद मुसिकल कार ॥
 असमान म्यानिँ लहंग दरिया, तहां गुसल करदा बूद ।
 करि फिकर रह सालक जसम, जहां स तहां मौजूद ॥
 हंम चु बूंदनि बूंद खालिक, गरक हम तुम पेस ।
 कबीर पनह खुदाइ की, रह दिगर दावानेस ॥ २५८ ॥

अलह राम जीऊँ तेरे नाईं,
 बंदे ऊपरि मिहर करौ मेरे साईं ॥ टेक ॥
 क्या ले माटी भुंइ सूं मारै, क्या जल देह न्दवाये ।
 जोर करै मसकीन सतावै, गुन हीं रहे छिपाये ॥
 क्या तु जू जप मंजन कीये, क्या मसीति सिर नायें ।
 रोजा करै निमाज गुजारै, क्या हज काबै जायें ॥
 बांम्हण ग्यारसि करै चौबोसैं, काजी महरम जान ।
 ग्यारह मास जुदे क्यूं कीये, एकहि मांहि समांन ॥
 जौर खुदाइ मसीति बसत हैं, और मुलिक किस केरा ।
 तीरथ मूरति राम निवासा, दुहु मैं किनहूँ न हेरा ॥
 पूरिब दिसा हरी का बासा, पछिम अलह मुकामां ।
 दिल ही खोजि दिलै दिल भीतरि, इहां राम रहिमानां ॥
 जेती औरति मरदां कहिये, सब मैं रूप तुम्हारा ।
 कबीर पंगुड़ा अलह राम का, हरि गुर पीर हमारा ॥ २५९ ॥

मैं बड़ मैं बड़ मैं बड़ मांटी,

मण दसना जट का दस गांठी ॥ टेक ॥

मैं बाबा का जोध कहाँऊं, अपणीं मारी गोंद चलाँऊं ॥
इनि अहंकार घणें घर घाले, नाचत कूदत जम पुरि चाले ॥
कहै कबीर करता की बाजी, एक पलक मैं राज बिराजी ॥२६०॥

काहे बीहे मेरे साथी, हूं हाथी हरि केरा ।

चौरासी लख जाकें मुख मैं, मो च्यंत करैगा मेरा ॥ टेक ॥
कहौ कौन धियै कहौ कौन गाजै, कहाँ थैं पाणीं निसरै ।
ऐसी कला अनंत हैं जाकै, सो हंम कौं क्यूं विसरै ॥
जिनि ब्रह्मंड रच्यौ बहु रचना, बाव बरन ससि सृरा ।
पाइक पंच पुहमि जाकै प्रगटै, सो क्यूं कहिये दूरा ॥
नैन नासिका जिनि हरि सिरजे, दसन वसन बिधि काया ।
साधू जन कौं सो क्यूं विसरै, ऐसा है राम राया ॥
को काहू का मरम न जानै, मैं सरनांगति तेरी ।
कहै कबीर बाप राम राया, हुरमति राखहु मेरी ॥२६१॥

[राग सोरठि]

हरि कौ नांव न लेह गंवारा, क्या सोचै बारंबारा ॥ टेक ॥
पंच चोर गढ मंभा, गढ लूटै दिवस र संभा ॥
जौ गढपति मुहकम होई, तौ लूटि न सकै कोई ॥
अंधियारै दीपक चाहिये, तब बस्त अगोचर लहिये ॥
जब बस्त अगोचर पाई, तब दीपक रखा समाई ॥
जौ दरसन देख्या चाहिये, तौ दरपन मंजत रहिये ॥
जब दरपन लागै काई, तब दरसन किया न जाई ॥
का पढ़िये का गुनिये, का बेद पुराना सुनिये ॥
पढ़े गुनें मति होई, मैं सहजै पाया सोई ॥
कहै कबीर मैं जानां, मैं जानां मन पतियानां ।
पतियानां जौ न पतीजै, तौ अंधे कूं का कीजै ॥२६२॥

अंधे हरि बिन को तेरा, कवन सूँ कहत मेरी मेरा ॥ टेक ॥
 तजि कुलाक्रम अभिमानां, भूठे भरमि कहा भुलानां ॥
 भूठे तन की कहा बडाई, जं निमष मांहि जरि जाई ॥
 जब लग मनहि बिकारा, तब लगि नहीं छूटै संसारा ॥
 जब मन निरमल करि जानां, तब निरमल मांहि समानां ॥
 ब्रह्म अगनि ब्रह्म सोई, अब हरि बिन और न कोई ॥
 जब पाप पुंनि भ्रम जारी, तब भयौ प्रकास मुरारी ॥
 कहै कबीर हरि ऐसा, जहां जैसा तहां तैसा ॥
 भूलै भरमि परै जिनि कोई, राजा राम करै सो होई ॥ २६३ ॥

मन रे सरगौ न एकौ काजा,
 तार्थै भज्यौ न जगपति राजा ॥ टेक ॥
 बेद पुरांन सुमृत गुन पढि पढि, पढि गुनि मरम न पावा ।
 संध्या गाइत्रो अरु षट करमां, तिन थैँ दूरि बतावा ॥
 बनखंडि जाइ बहुत तप कीन्हां, कंद मूल खनि खावा ।
 ब्रह्म गियांनीं अधिक धियांनीं, जंम कै पटै लिखावा ॥
 रोजा किया निमाज गुजारी, बंग दे लोग सुनावा ।
 हिरदै कपट मिलै क्यूँ साई, क्या हज काबै जावा ॥
 पहरगौ काल सकल जग ऊपरि, मांहि लिखे सब ग्यांनीं ।
 कहै कबीर ते भयं षालसै, राम भगति जिनि जानीं ॥ २६४ ॥

मन रे जब तैँ राम कह्यौ,
 पीछै कहिबे कौँ कछू न रह्यौ ॥ टेक ॥
 का जोग जगि तप दानां, जौ तैँ राम नाम नहीं जानां ॥
 काम क्रोध दोऊ भारे, तार्थै गुरु प्रसादि सब जारे ॥
 कहै कबीर भ्रम नासी, राजा राम मिले अबिनासी ॥ २६५ ॥

रांम राइ सो गति भई हंमारी, मो पै छूटत नहीं संसारी ॥ टेक ॥
 ज्यू पंखी उडि जाइ अकासां, आस रही मन मांहां ।
 छूटी न आस दृष्ट्यौ नहीं फंधा, उडिबौ लागौ कांहीं ॥
 जो सुख करत होत दुख तेई, कहत न कछू बनि आवै ।
 कुंजर ज्यू कसतूरी का मृग, आपै आप बँधावै ॥
 कहै कबीर नहीं बस मेरा, सुनिये देव मुरारी ।
 इत भैभीत डरौं जम दूतनि, आये सरनि तुम्हारी ॥ २६६ ॥

रांम राइ तूं ऐसा अनभूत अनूपम, तेरी अनभै थै निस्तरिये ।
 जे तुम्ह कृपा करौ जगजीवन, तौ कतहूं भूलि न परिये ॥ टेक ॥
 हरि पद दुरलभ अगम अगोचर, कथिया गुर गमि बिचारा ।
 जा कारंनि हंम दूँढत फिरते, आथि भरयो संसारा ॥
 प्रगटो जोति कपाट खोलि दिये, दगधे जंम दुख द्वारा ।
 प्रगटे बिस्वनाथ जगजीवन, मैं पायं करत बिचारा ॥
 देख्यत एक अनेक भाव है, लेखत जात अजाती ।
 बिह कौ देव तबि दूँढत फिरते, मंडप पूजा पाती ॥
 कहै कबीर करुणामय किया, देरी गलियां बहु बिस्तारा ।
 रांम कै नांव परंम पद पाया, छूटे बिघन बिकारा ॥ २६७ ॥

रांम राइ को ऐसा बैरागी,
 हरि भजि मगन रहै विष त्यागी ॥ टेक ॥
 ब्रह्मा एक जिनि सिष्टि उपाई, नांव कुलाल धराया ।
 बहु बिधि भाँडै उनहीं घड़िया, प्रभू का अंत न पाया ॥
 तरवर एक नानां बिधि फलिया, ताकै मूल न साखा ।
 भौजलि भूलि रह्या रे प्राणीं, सो फल कदे न चाखा ॥
 कहै कबीर गुर बचन हेत करि, और न दुनियां आथी ।
 माटो का तंन मांटों मिलिहै, सबद गुरू का साथी ॥ २६८ ॥

नै'क निहारि हो माया बोनती करै,
 दीन बचन बोलै कर जोरै, फुनि फुनि पाइ परै ॥ टेक ॥
 कनक लेहु जेता मनि भावै, कांमनि लेहु मन-हरनीं ।
 पुत्र लेहु विद्या-अधिकारी, राज लेहु सब धरनीं ॥
 अठि सिधि लेहु तुम्ह हरि के जनां, नवै' निधि है तुम्ह आगै' ।
 सुर नर सकल भवन के भूपति, तेऊ लहै न मांगै' ॥
 तै' पापणीं सबै संघारे, काकौ काज संवारयौ ।
 जिनि जिनि संग कियौ है तेरौ, को बेसासि न मारयौ ॥
 दास कबीर राम कै सरनै', छाडी भूठी माया ।
 गुर प्रसाद साध की संगति, तहां परम पद पाया ॥ २६६ ॥

तुम्ह घरि जाहु हंमारी बहनां, बिष लागै' तुम्हारे नै'नां ॥ टेक ॥
 अंजन छाडि निरंजन राते, नां किसहीं का दैनां ।
 बलि जांड ताकी जिनि तुम्ह पठई, एक माइ एक बहनां ॥
 राती खांडी देखि कबीरा, देखि हमारा सिंगारो ।
 सरग लोक थै' हम चलि आई, करन कबोर भरतारौ ॥
 सर्ग लोक में क्या दुख पड़िया, तुम्ह आई' कलि मांहीं ।
 जाति जुलाहा नाम कबीरा, अजहूं पतीजौ नांहीं ॥
 तहां जाहु जहां पाट पटंबर, अगर चंदन घसि लीनां ।
 आई हमारै कहा करौगी, हम तौ जाति कर्मीनां ॥
 जिनि हंम साजे साज्य निवाजे, बांधे काचै धागै ।
 जे तुम्ह जतन करौ बहुतेरा, पांणीं आगि न लागै ॥
 साहिब मेरा लेखा मांगै, लेखा क्यूं करि दीजै ।
 जे तुम्ह जतन करौ बहुतेरा, तौ पांहण नीर न भीजै ॥
 जाकी मैं मछी सो मेरा मछा, सो मेरा रखवालू ।
 दुक एक तुम्हारै हाथ लगाऊं, तौ राजा राम रिसालू ॥

जाति जुलाहा नाम कबोरा, बनि बनि फिरौ उदासी ।

आसि पासि तुम्ह फिरि फिरि वैसौ, एक माउ एक मासी ॥२७०॥

ताकूं रे कहा कीजै भाई,

तजि अमृत बिषै सूं ल्यौ लाई ॥ टेक ॥

बिष संप्रह कहा सुख पाया,

रंचक सुख कौ जनम गँवाया ॥

मन बरजै चित कह्यौ न करई,

सकति सनेह दीपक मैं परई ॥

कहत कबीर मोहि भगति उमाहा,

कृत करणी जाति भया जुलाहा ॥ २७१ ॥

रे सुख इब मोहि बिष भरि लागा,

इनि सुख डहके मोटे मोटे छत्रपति राजा ॥ टेक ॥

उपजै बिनसै जाइ बिलाई, संपति काहू कै संगि न जाई ॥

धन जोवन गरव्यौ संसारा, यहु तन जरि बरि है छारा ।

चरन कवल मन राखि ले धीरा, राम रमत सुख कहै कबोरा ॥२७२॥

इब न रहूं माटी के घर मैं, इब मैं जाइ रहूं मिलि हरि मैं ॥ टेक ॥

छिनहर घर अरु भिरहर टाटी, घन गरजत कंपे मेरी छाती ॥

दसवै द्वारि लागि गई तारी, दूरि गवन आवन भयौ भारी ॥

चहुँ दिसि बैठे चारि पहरिया, जागत मुसि गये मोर नगरिया ॥

कहै कबीर सुनहु रे लोई, भानड़ घड़ण संवारण सोई ॥२७३॥

कबोरा बिगरया राम दुहाइ, तुम्ह जिनि बिगरौ मेरे भाई ॥ टेक ॥

चंदन कै ढिग बिरष जु भैला, बिगरि बिगरि सो चंदन हैला ॥

पारस कौ जे लोह छिवैंगा, बिगरि बिगरि सो कंचन हैला ॥

गंगा में जे नीर मिलैगा, बिगरि बिगरि गंगोदिक ह्वैला ।
कहै कबीर जे रांम कहैला, बिगरि बिगरि सो रांमहिं ह्वैला ॥२७४॥

रांम राइ भई बिकल मति मेरी, कै यहु दुनीं दिवांनीं तेरी ॥टेक॥
जे पूजा हरि नाहीं भावै, सो पूजनहार चढ़ावै ॥
जिहि पूजा हरि भल मानै, सो पूजनहार न जानै ॥
भाव प्रेम की पूजा, ताथै भयौ देव थै दूजा ॥
का कीजै बहुत पसारा, पूजी जै पूजनहारा ॥
कहै कबीर मैं गावा, मैं गावा आप लखावा ॥
जो इहिं पद मांहिं समांना, सो पूजनहार सयांना ॥ २७५ ॥

रांम राइ भई बिगूचनि भारी,
भले इन ग्यानियन थै संसारी ॥ टेक ॥
इक तप तीरथ औगांहीं, इक मानि महातम चाहैं ॥
इक मैं मेरी मैं बीभै, इक अहंमेव मैं रीभै ॥
इक कथि कथि भरम लगावै, संमिता सी बस्त न पावै ॥
कहै कबीर का कीजै, हरि सूभै सो अंजन दीजै ॥ २७६ ॥

काया मंजसि कौन गुनां, घट भीतरि है मलनां ॥ टेक ॥
जौ तू हिरदै सुध मन ग्यानीं, तौ कहा बिरोलै पानीं ॥
तू बो अठ सठि तीरथ न्हाई, कड़वापण तऊ न जाई ॥
कहै कबीर बिचारी, भवसागर तारि मुरारी ॥ २७७ ॥

कैसे तू हरि कौ दास कहायौ,
करि बहु भेषर जनम गंवायौ ॥ टेक ॥
सुध बुध होइ भय्यौ नहिं साईं, काछ्यौ ड्यंभ उदर कै ताईं ॥
हिरदै कपट हरि सूं नहीं साचौ, कहा भयौ जे अनहद नाच्यौ ॥

भूठे फोकट कलु मंभारा, राम कहैं ते दास नियारा ॥

भगति नारदी मगन सरीरा,

इहि विधि भव तिरि कहै कबीरा ॥ २७८ ॥

राम राइ इहि सेवा भल मानैं,

जै कोई राम नाम तत जानैं ॥ टेक ॥

रे नर कहा पषालै काया, सो तत चोन्हि जहां थैं आया ॥

कहा बिभूति जटा पट बांधैं, काजल पैसि हुतासन साधैं ॥

र राम मां देई अखिर सारा, कहै कबीर तिहूं लोक पियारा ॥ २७९ ॥

इहि विधि राम सूं ल्यौ लाइ ।

चरन पाषैं निरति करि, जिभ्या बिनां गुंण गाइ ॥ टेक ॥

जहां स्वांति बूंद न सीप साइर, सहजि मोती होइ ।

उन मोतियन में नीर पोयौ, पवन अंबर धोइ ॥

जहाँ धरनि बरषै गगन भीजै, चंद सूरज मेल ।

देइ मिलि तहाँ जुड़न लागे, करत हंसा केलि ॥

एक विरष भोतरि नदी चाली, कनक कलस समाइ ।

पंच सुवटा आइ बैठे, उदै भई बनराइ ॥

जहाँ बिछट्यौ तहां लाग्यौ, गगन बैठौ जाइ ।

जन कबीर बटाऊवा, जिनि मारग लियौ चाइ ॥ २८० ॥

ताथै मोहि नाचिबौ न आवै, मेरौ मन मंदलान बजावै ॥ टेक ॥

ऊभर था ते सूभर भरिया, त्रिष्णां गागरि फूटी ।

हरि चिंतत मेरौ मंदला भीनों, भरम भोयन गयौ छूटी ॥

ब्रह्म अगनि में जरी जु ममिता, पाषंड अरु अभिमानां ।

काम चोलनां भया पुराना, मोषैं होइ न आना ॥

जे बहु रूप किये ते कीये, अब बहु रूप न होई ।

थाकी सौंज संग के बिछुरे, राम नाम मसि धोई ॥

जे थे सचल अचल हूँ थाके, करते बाद बिबाद ।
कहै कबीर मैं पूरा पाया, भया राम परसाद ॥ २८१ ॥

अब क्या कीजै ग्यांन विचारा, निज निरखत गत व्यौहारा । टेक।
जाचिग दाता इक पाया, धन दिया जाइ न खाया ॥
कोई ले भरि सकै न मूका, औरनि पै जाना चूका ॥
तिस बाभ न जीव्या जाई, वो मिलै त घालै खाई ॥
वों जीवन भला कहाई, बिन मूवां जीवन नाहीं ॥
घसि चंदन बनखंडि बारा, बिन नैननि रूप निहारा ॥
तिहि पृत बाप इक जाया, बिन ठाहर नगर बसाया ॥
को जीवत ही मरि जानै, तै पंच सयल सुख मानै ।
कहै कबीर सो पाया, प्रभू भेटत आप गंवाया ॥ २८२ ॥

अब मैं पायौ राजा राम सनेही,
जा बिन दुख पावै मेरी देही ॥ टेक ॥
बेद पुरान कहत जाकी साखी,
तीरथि ब्रति न छूटै जंम की पासी ॥
जाथै जनम लहत नर आगै, पाप पुनि दोऊ भ्रम लागै ॥
कहै कबीर सोई तत जागा,
मन भया मगन प्रेम सर लागा ॥ २८३ ॥

बिरहिनी फिरै है नाथ अधीरा ।
उपजि बिनां कछू समझि न परई,
बाभ न जानै पीरा ॥ टेक ॥
या बड बिधा सोई भल जानै, राम बिरह सर मारी ।
कैसे जानै जिनि यहु लाई, कै जिनि चोट सहारो ॥
संग की बिछुरो मिलन न पावै, सोच करै अरु काहै ।
जतन करै अरु जुगति विचारै, रटै राम कूँ चाहै ॥

हीन भई बृभै सखियन कौं, कोई मोहि राम मिलावै ।
दास कबीर मीन ज्यूं तलपै, मिलै भलै सचुपावै ॥ २८४ ॥

जातनि बेद न जानै गा जन सोई,
सारा भरम न जानै राम कोई ॥ टेक ॥
चषि बिन दिवस जिसी है संझा, व्यावन पीर न जानै बंझा ॥
सूझै करक न लागै कारी, बैद विधाता करि मोहि सारी ॥
कहै कबीर यहु दुख कासनि कहिये,
अपनें तन की आप ही सहिये ॥ २८५ ॥

जन की पीर हो राजा राम भल जानै,
कहूं काहि को मानै ॥ टेक ॥
नैन का दुख बैन जानै, बैन का दुख श्रवनां ।
प्यंड का दुख प्रांन जानै, प्रांन का दुख मरनां ॥
आस का दुख प्यामा जानै, प्यास का दुख नीर ।
भगति का दुख राम जानै, कहै दास कबीर ॥ २८६ ॥

तुम्ह बिन राम कवन सौं कहिये,
लागी चोट बहुत दुख सहिये ॥ टेक ॥
बेध्यौ जीव विरह कै भालै, राति दिवस मेरे उर सालै ॥
को जानै मेरे तन की पीरा, सतगुर सबद बहि गयौ सरीरा ।
तुम्ह से बैद न हमसे रोगी, उपजी बिथा कैसै जीवै बियोगी ॥
निस बासुरि मोहि चितवत जाई, अजहूं न आइ मिले राम राई ॥
कहत कबीर हमको दुख भारी,
बिन दरसन क्यूं जीवहि मुरारी ॥ २८७ ॥

(२८५) ख० प्रति में अंतिम पंक्ति इस प्रकार है—

लागी चोट बहुत दुख सहिये । देखो (२८७) की टेक ।

तेरा हरि नामैं जुलाहा, मरै राम रमण का लाहा ॥टेक॥
 दस सै सूत्र की पुरिया पूरी, चंद सूर दोइ साखी ।
 अनत नांव गिनि लई मंजूरी, हिरदा कवल मै राखी ॥
 सुरति सुमृति दोइ खूंटी कीन्हों, आरंभ कीया बमेकी ।
 ग्यान तत की नली भराई, बुनित आतमां पेषी ॥
 अविनासी धन लई मंजूरी, पूरी थापनि पाई ।
 रन बन सोधि सोधि सब आये, निकटै दिया बताई ॥
 मन सूधा कौ कूच कियौ है, ग्यान बिथरनीं पाई ।
 जीव की गांठि गुठी सब भागी, जहां की तहां ल्यौ लाई ॥
 बेठि बेगारि बुराई थाकी, अनमै पद परकासा ।
 दास कबीर बुनत सच पाया, दुख संसार सब नासा ॥२८८॥

भाई रे सकहु त तनि बुनि लेहु रे,
 पीछै रामहिं दोस न देहु रे ॥ टेक ॥
 करगहि एक बिनांनी, ता भीतरि पंच परांनी ॥
 तामैं एक उदासी, तिहि तणि बुणि सबै बिनासी ॥
 जे तूं चौसठि बरियां धावा, नहीं होइ पंच सूं मिलावा ॥
 जे तैं पांसै छसै तांणीं, तौ तूं सुख सूं रहै परांणीं ॥
 पहली तणियां ताणां, पीछै बुणियां बांणां ॥
 तणि बुणि मुरतब कीन्हां, तब राम राइ पूरा दीन्हां ॥
 राख भरत भइ संझा, तारुणीं त्रिया मन बंधा ॥
 कहै कबीर बिचारी, अब छोछी नली हंमारी ॥ २८९ ॥

वै क्यूं कासी तजै मुरारी, तेरी सेवा चोर भये बनवारी ॥टेक॥
 जागी जती तपी संन्यासी, मठ देवल बसि परसैं कासी ॥
 तीन बार जे नित प्रति न्हावै, काया भीतरि खबरि न पावै ॥

देवल देवल फेरी देहीं, नांव निरंजन कबहुँ न लेहीं ॥
चरन विरद कासी कौं न दैहूँ, कहै कबीर भल नरकहि जैहूँ ॥२८०॥

तब काहे भूलौ बन जारे, अब आयौ चाहै संगि हंमारे ॥टेक॥
जब हंम बनजी लौंग सुपारी, तब तुम्ह काहे बनजी खारी ॥
जब हम बनजी परमल कसतूरी, तब तुम्ह काहे बनजी कूरी ॥
अमृत छाड़ि हलाहल खाया, लाभ लाभ करि मूल गँवाया ॥
कहै कबीर हंम बनज्या सोई, जाथै आवागवन न होई ॥२८१॥

परम गुर देखौ रिदै बिचारी, कछू करौ सहाइ हंमारी ॥टेक॥
लवानालि तंति एक संमि करि, जंत्र एक भल साजा ।
सति असति कछू नहीं जानूँ, जैसै बजावा तैसै बाजा ॥
चोर तुम्हारा तुम्हारी आग्या, मुसियत नगर तुम्हारा ।
इनके गुनह हमह का पकरौ, का अपराध हमारा ॥
सेई तुम्ह सेई हम एकै कहियत, जब आपा पर नहीं जानां ।
ज्युं जल मैं जल पैसि न निकसै, कहै कबीर मन मानां ॥२८२॥

मन रे आइर कहां गयौ, ताथै मोहि बैराग भयौ ॥ टेक ॥
पंच तत ले काया कीन्हौ, तत कहा ले कीन्हौ ।
करमों के बसि जीव कहत हैं, जीव करम किनि दोन्हौ ॥
आकास गगन पाताल गगन, दसौं दिसा गगन रहाई ले ॥
आनंद मूल सदा परसोतम, घट बिनसै गगन न जाई ले ॥
हरि मैं तन है तन मैं हरि है, है पुनि नाहीं सोई ।
कहै कबीर हरि नाम न छाड़ूँ, सहजै होइ सु होई ॥ २८३ ॥

हंमारै कौन सहै सिरि भारा,

सिर की सोभा सिरजनहारा ॥ टेक ॥

टेढी पाग बड जूरा, जरि भए भसम कौ कूरा ॥

अनहद कीं गुरी बाजी, तब काल द्रिष्टि भै भागी ।
कहै कबीर राम राया, हरि कै रंगै मूंड मुडाया ॥२८४॥

कारनि कौन संवारै देहा, यहु तन जरि बरि ह्वै है षेहा ॥टेक॥
चोवा चंदन चरचत अंगा, सो तन जरत काठ कै संगी ॥
बहुत जतन करि देह मुट्याई, अगनि दहै कै जं बुक खाई ॥
जा सिरि रचि रचि बांधन पागा, ता सिरि चंच सँवारत कागा ॥
कहि कबीर तन भूठा भाई, केवल राम रह्यौ ल्यौ लाई ॥२८५॥

धन धंधा व्यौहार सब, माया मिथ्या बाद ।

पाणों नीर हलूर ज्यूं, हरि नांव बिना अपवाद ॥टेक॥
इक राम नाम निज साचा, चित चेति चतुर घट काचा ॥
इस भरमि न भूलसि भोली, बिधना की गति है औली ॥
जीवते कूं मारन धावै, मरते कौं बेगि जिलावै ॥
जाकै हुंहि जम से बैरी, सो क्यूं सावै नींद घनेरी ॥
जिहि जागत नींद उपावै, तिहिं सोवत क्यूं न जगावै ॥
जलजंत न देखिसि प्रांतीं, सब दीसै भूठ निदांतीं ॥
तन देवल ज्यूं धज आछै, पड़ियां पछितावै पाछै ॥
जीवत ही कछू कीजै, हरि राम रसांइन पीजै ॥
राम नाम निज सार है, माया लागि न खोई ।
अंति कालि सिरि पोटली, ले जात न देख्या कोई ॥
कोई ले जात न देख्या, बलि विक्रम भोज ग्रस्ता ॥
काहू कै संगि न राखी, दीसै बीसल की साखी ॥
जब हंस पवन ल्यौ खेलै, पसरयौ हाटिक जब मेलै ॥
मानिख जनम अवतारा, नां ह्वै है बारंबारा ॥
कबहूँ है किसान विहानां, तर पंखी जेम उडानां ॥
सब आप आप कूं जाई, को काहू मिलै न भाई ॥

मुरिख मनिखा जनम गंवाया, बर कौडो ज्युं डहकाया ॥
जिहि तन धन जगत भुलाया, जग राख्यौ परहरि माया ॥
जल अंजुरी जीवन जैसा, ताका है किमा भरोसा ॥
कहै कबीर जग धंधा, काहे न चेतहु अंधा ॥ २८६ ॥

रे चित चेति च्यंति लै ताही,

जा च्यंतत आपा पर नाही ॥ टेक ॥

हरि हिरदै एक ग्यांन उपाया, ताथै छूटि गई सब माया ॥
जहां नाद न व्यंद दिवस नहीं राती, नहीं नर नारि नहीं कुल जाती ॥
कहै कबीर सरब सुख दाता, अविगत अलख अभेद विधाता ॥ २८७ ॥

सरवर तटि हंसणीं तिसाई,

जुगति बिनां हरि जल पिया न जाई ॥ टेक ॥

पीया चाहै तौ लै खग सारी, बडि न सकै दोऊ पर भारी ॥
कुंभ लीयै ठाढी पनिहारी, गुंण बिन नीर भरै कैसें नारी ॥
कहै कबीर गर एक बुधि बतार्है, सहज सुभाइ मिले राम राई ॥ २८८ ॥

भरथरी भूप भया बैरागी ।

बिरह वियोगी बनि बनि दूँढै, वाकी सुरति साहिब सौं लागी । टेक ।
हसती घोड़ा गांव गढ गूडर, कनड़ा पा इक आगी ।
जोगी हूवा जांणि जग जाता, सहर बजीणीं त्यागी ॥
छत्र सिंघासण चवर दुलंता, राग रंग बहु आगी ।
सेज रमैणीं रंभा होती, तासौं प्रीति न लागी ॥
सूर बीर गाढा पग रोप्या, इह बिधि माया त्यागी ।
सब सुख छाडि भज्या इक साहिब, गुरु गोरख ल्यौ लागी ॥
मनसा बाचा हरि हरि भाखै, गंधर्व सुत बड भागी ।
कहै कबीर कुदर भजि करता, अमर भणे अणरागी ॥ २८९ ॥

[राग केदारौ]

सार सुख पाईये रे, रंगि रमहु आत्मांरांम ॥ टेक ॥
 बनह बसे का कीजिये, जे मन नहीं तजै बिकार ।
 घर बन तत समि जिनि किया ते बिरला संसार ॥
 का जटा भसम लेपन कियं, कहा गुफा में बास ।
 मन जीत्यां जग जीतिये, जौ विषया रहै बदास ॥
 सहज भाइ जे ऊपजै, ताका किसान मान अभिमान ।
 आपा पर समि चीनियै, तब मिलै आत्मांरांम ॥
 कहै कबीर कृपा भई, गुर ग्यांन कहा समझाइ ।
 हिरदै श्री हरि भेटियै, जे मन अनतै नहीं जाइ ॥ ३०० ॥

है हरि भजन कौ प्रवांन ।

नौच पांवै ऊंच पदवी, बाजते नौसान ॥ टेक ॥
 भजन कौ प्रताप ऐसो, तिरे जल पाषाण ।
 अधम भील अजाति गनिका चढ़े जात बिवांन ॥
 नव लख तारा चलै मंडल, चलै ससिहर भांन ।
 दास धूकौ अटल पदवी, रांम को दोवांन ॥
 निगम जाकी साखि बोलै, कहैं संत सुजांन ।
 जन कबीर तेरी सरनि आयौ, राखि लेहु भगवांन ॥ ३०१ ॥

चलौ सखी जाइये तहां, जहां गये पाइयै परमानंद ॥ टेक ॥
 यहु मन आमन धूमनां, मेरौ तन छोजत नित जाइ ।
 च्यंतामणि चित चोरियौ, ताथै कछू न सुहाइ ॥
 सुनि सखी सुपिनै की गति ऐसी, हरि आये हम पास ।
 सोवत ही जगाइया, जागत भये बदास ॥
 चलु सखी बिलम न कीजियं, जब लग सास सरीर ।
 मिलि रहिये जगनाथ सूं, यूं कहै दास कबीर ॥ ३०२ ॥

मेरे तन मन लागी चोट सठौरी ॥

बिसरं ग्यान बुधि सब नाठी, भई बिकल मति बैरी ॥ टेक ॥
 देह बदेह गलित गुन तीनूँ, चलत अचल भइ ठौरी ।
 इत उत जित कित द्वादस चितवत, यहु भई गुपत ठगौरी ॥
 सोई पै जानै पीर हमारी, जिहि सरीर यहु व्यौरी ।
 जन कबोर ठग ठग्यौ है बापुरौ, सुनि संमानिं त्यौरी ॥३०३॥

मेरी अंखियां जान सुजान भई ।

देवर भरम सुसर संग तजि करि, हरि पीव तहां गई ॥ टेक ॥
 बालपनै के करम हमारे, काटे जानि दर्ई ।
 बांह पकरि करि कृपा कीन्हि, आप समीप लई ॥
 पानों की बूंद थे जिनि प्यंड साज्या, ता संगि अधिक करई ।
 दास कबोर पल प्रेम न घटई, दिन दिन प्रीति नई ॥३०४॥

हो बलियां कब देखोंगा तोहि ।

अह निस आतुर दरसन कारनि, ऐसी व्यापै मोहि ॥टेक॥
 नैन हमारे तुम्ह कूँ चाहैं, रती न मानै हारि ।
 बिरह अगिन तन अधिक जरावै, ऐसी लेहु बिचारि ॥
 सुनहुं हमारी दादि गुसाई, अब जिन करहु बधीर ।
 तुम्ह धीरज मैं आतुर स्वामी, काचै भाडै नीर ॥
 बहुत दिनन के बिछुरे माधौ, मन नहीं बांधै धीर ।
 देह छतां तुम्ह मिलहु कृपा करि, आरतिवंत कबोर ॥ ३०५ ॥

वै दिन कब आवैंगे माइ ।

जा कारनि हम देह धरी है, मिलिबौ अंगि लगाइ ॥ टेक ॥
 हौ जानूँ जे हिल मिलि खेलूं, तन मन प्राँन समाइ ।
 या कामनां करौ परपूरन, समरथ है राम राइ ॥

माहि उदासी माधौ चाहै, चितवत रैन बिहाइ ।
 सेज हमारी स्यंघ भई है, जब सोऊं तब खाइ ॥
 यहु अरदास दास की सुनिये, तन की तपति बुझाइ ।
 कहै कबीर मिलै जे साईं, मिलि करि मंगल गाइ ॥ ३०६ ॥

बालहा आव हमारे ग्रेह रे, तुम्ह बिन दुखिया देह रे ॥ टेक ॥
 सब को कहै तुम्हारी नारी, मोकौं इहै अदेह रे ।
 एकमेक हूँ सेज न सोवै, तब लग कैसा नेह रे ॥
 आन न भावै नींद न आवै, ग्रिह बन धरै न धीर रे ।
 ज्युं कामीं कौं काम पियारा, ज्युं प्यासे कूं नीर रे ॥
 है कोई ऐसा पर-उपगारी, हरि सुं कहै सुनाइ रे ॥
 ऐसे हाल कबीर भये हैं, बिन देखे जीव जाइ रे ॥ ३०७ ॥

माधौ कब करिहौ दया ।

काम क्रोध अहंकार व्यापै, नां छूटे माया ॥ टेक ॥
 उतपति व्यं द भयौ जा दिन थै कबहुँ सच नहीं पायौ ।
 पंच चोर संगि लाइ दिए हैं, इन संगि जनम गंवायौ ॥
 तन मन डस्यौ भुजंग भामिनीं, लहरी वार न पारा ।
 सो गारडू मिल्यौ नहीं कबहुँ, पसरयौ बिष विकराला ॥
 कहै कबीर यहु कासूं कहिये, यहु दुख कोइ न जानै ।
 देहु दीदार बिकार दूरि करि, तब मेरा मन मानै ॥ ३०८ ॥

मैं जन भूला तूं समझाइ ।

चित चंचल रहै न अटक्यौ, बिषै बन कूं जाइ ॥ टेक ॥
 संसार सागर माहि भूल्यौ, थक्यौ करत उपाइ ।
 मोहनीं माया बाधनीं थै, राखिलै राम राइ ॥

गोपाल सुनि एक बीनती, सुमति तन ठहराइ ।

कहै कबीर यहु काम रिप है, मारै सबकूँ ढाइ ॥ ३०८ ॥

भगति बिन भौजलि डूबत है रे ।

बोहिथ छाडि बैसि करि डूँडै,

बहुतक दुख सहै रे ॥ टेक ॥

बार बार जम पै डहकावै, हरि कौ ह्वै न रहै रे ।

चेरी के बालक की नाई, कासूँ बाप कहै रे ॥

नलिनी के सुवटा की नाई, जग सूँ राचि रहै रे ।

बंसा अगनि बंस कुल निकसै, आपहि आप दहै रे ॥

यहु संसार धार मैं डूबै, अधर थाकि रहै रे ।

खेवट बिनां कवन भौ तारै, कैसै पार गहै रे ॥

दास कबीर कहै समझावै, हरि की कथा जीवै रे ।

राम कौ नांव अधिक रस मोठौ, बार बार पीवै रे ॥ ३१० ॥

चलत कत टेढी टेढी रे ।

नऊँ दुवार नरक धरि मूँदे, तू दुरगंधि कौ बेढी रे ॥ टेक ॥

जे जारै तौ होइ भसम तन, रहित किरम जल खाई ।

सूकर खाँन काग कौ भखिन, तामैं कहा भलाई ॥

फूटे नैन हिरदै नहों सूझै, मति एकै नहीं जानीं ।

माया माह ममिता सूँ बांध्यौ, बूडि मूवौ बिन पांनीं ॥

बारू के घरवा मैं बैठो, चेतत नहीं अयांनीं ।

कहै कबीर एक राम भगति बिन, बूडे बहुत सयांनीं ॥ ३११ ॥

अरे परदेसी पीव पिछांनि ।

कहा भयौ तोकौं समझि न परई, लागी कैसी बांनि ॥ टेक ॥

भोमि बिडायी मैं कहा रातौ, कहा कियो कहि मोहि ।

लाहै कारनि मूल गमावै, समभावत हूँ तोहि ॥
 निस दिन तोहि क्यूं नोंद परत है, चितवत नाहीं ताहि ।
 जंम से बैरी सिर परि ठाढे, पर हथि कहा बिकाइ ॥
 भूठे परपंच मैं कहा लागै, ऊठै नाहीं चालि ।
 कहै कबीर कछू बिलम न कीजै, कौनै देखी कालिह ॥ ३१२ ॥

भयौ रे मन पांहुनड़ौ दिन चारि ।

आजिक कालिहक मांहि चलैगौ, ले किन हाथ सँवारि ॥टेक॥
 सौंज पराई जिनि अपणावै, ऐसी सुणि किन लेह ।
 यहु संसार इसौ रे प्राणो, जैसा धूवरि मेह ॥
 तन धन जांबन अंजुरी कौ पांनीं, जात न लागै वार ।
 सैबल के फूलन परि फूल्यौ, गरव्यौ कहा गँवार ॥
 खाटो खाटै खरा न लीया, कछू न जानों साटि ।
 कहै कबीर कछू बनिज न कीयौ, आयौ थौ इहि हाटि ॥३१३॥

मन रे राम नामहि जानि ।

थरहरी श्रुंती परयौ मंदिर, सूतौ खुंटो तानि ॥ टेक ॥
 सैन तेरी कोई न समझै, जीभ पकरी आनि ।
 पांच गज दोवटो मांगी, चूँन लीयौ सांनि ॥
 बैसंदर षोषरी हांडी, चल्यौ लादि पलांनि ।
 भाई बंध बोलाइ बहु रे, काज कीनौ आनि ॥
 कहै कबीर या मैं भूठ नाहीं, छाडि जीय की बानि ।
 राम नाम निसंक भजि रे, न करि कुल की कानि ॥ ३१४ ॥

प्राणीं लाल औसर चल्यौ रे बजाइ ।

मुठी एक मठिया मुठि एक कठिया, संगि काहू कै न जाइ ॥टेक॥
 देहली लग तेरी मिहरी सगी रे, फलमा लग सगी माइ ।
 मड़हट लूँ सब लोग कुटंबी, हंस अकेलौ जाइ ॥

कहाँ वै लोग कहाँ पुर पटण, बहुनि न मिलबौ आइ ।

कहै कबीर जगनाथ भजहु रे, जन्म अकारथ जाइ ॥ ३१५ ॥

रांम गति पार न पावै कोई ।

न्यंतामणि प्रभु निकटि छाडि करि,

अंमि अंमि मति बुधि खोई ॥ टेक ॥

तीरथ बरत जपै तप करि करि, बहुत भांति हरि सोधै ।

सकति सुहाग कहौ क्यूं पावै, अछता कंत बिरोधै ॥

नारी पुरिष बसै इक संग, दिन दिन जाइ अबोलै ।

तजि अभिमान मिलै नही पीव कूं, हूँढत बन बन डालै ।

कहै कबीर हरि अकथ कथा है, बिरला कोई जानै ॥

प्रेम प्रीति बेधो अंतर गति, कहूं काहि का मानै ॥ ३१६ ॥

रांम बिनां संसार धंध कुहेरा,

सिरि प्रगट्या जंम का पेरा ॥ टेक ॥

देव पूजि पूजि हिंदू मूयं, तुरक मूयें हज जाई ।

जटा बांधि बांधि यागी मूयें, इन मैं किनहूं न पाई ॥

कवि कवीनै कविता मूयें, कापड़ो के दारौं जाई ।

केस लूंचि लूंचि मूयें बरतिया, इनमैं किनहूं न पाई ॥

धन संचते राजा मूयें, अरु ते कंचन भारी ।

बेद पढ़ें पढ़ि पंडित मूयें, रूप भूले मूर्ख नारी ॥

जे नर जोग जुगति करि जानै, खोजै आप सरीरा ।

तिनकूं मुक्ति का संसा नही, कहत जुलाह कबीरा ॥ ३१७ ॥

कहूं रे जे कहिबे की होइ ।

नां को जानै नां को मानै, तार्थे अचिरज मोहि ॥ टेक ॥

अपने अपने रंग के राजा, मानत नाहीं कोई ।

अति अभिमान लोभ के घाले, चले अपन पै खोइ ॥

मैं मेरी करि यहु तन खोयौ, समझत नहीं गँवार ।
 भौजलि अधपर थाकि रहे हैं, बूढ़े बहुत अपार ॥
 मोहि आग्या दर्ई दयाल दया करि, काहू कूँ समझाइ ।
 कहै कबीर मैं कहि कहि हारगौ, अब मोहि दोस न लाइ ॥३१८॥

एक कोस बन मिलान न मेला ।

बहुतक भाँति करै फुरमाइस, है असवार अकेला ॥ टेक ॥
 जोरत कटक जु घेरत सब गढ, करतब भेली भेला ।
 जोरि कटक गढ तोरि पातिसाह, खेलि चलयौ एक खेला ॥
 कूँच मुकाम जोग के घर मैं, कछू एक दिवस खटाना ।
 आसन राखि बिभूति साखि दे, फुनि ले मटी उडाना ॥
 या जोगी की जुगति जु जानै, सो सतगुर का चेला ।
 कहै कबीर उन गुर की कृपा थै, तिनि सब भरम पछेला ॥३१९॥

[राग मारू]

मन रे राम सुमिरि राम सुमिरि, राम सुमिरि, भाई ।
 राम नाम सुमिरन विना, बूढ़त है अधिकाई ॥ टेक ॥
 दारा सुत प्रेह नेह, संपति अधिकाई ।
 यामैं कछ नाहिं तेरौ, काल अवधि आई ॥
 अजामेल गज गनिका, पतित करम कीन्हां ।
 तेऊ उतरि पारि गये, राम नाम लीन्हां ॥
 खान सूकर काग कीन्हीं, तऊ लाज न आई ।
 राम नाम अमृत छाड़ि, काहे विष खाई ॥
 तजि भरम करम विधि नखेह, राम नाम लेही ।
 जन कबीर गुर प्रसादि, राम करि सनेही ॥ ३२० ॥

रांम नांम हिरदै धरि, निरमोलिक हीरा ।
 सोभा तिहूं लोक, तिमर जाय त्रिबधि पीरा ॥ टेक ॥
 त्रिसनां नै' लोभ लहरि, काम क्रोध नीरा ।
 मद मछर कछ मछ, हरिष सोक तीरा ॥
 कामनी अरु कनक भवर, बोये बहु बोरा ।
 जन कबोर नवका हरि, खेवट गुर कीरा ॥ ३२१ ॥

चलि मेरी सखी हो, वो लगन रांम राया ।
 जब तब काल बिनासै काया ॥ टेक ॥
 जब लग लोभ मोह की दासी,
 तीरथ व्रत न छूटै जंम की पासी ॥
 आवै'गे जम के घालेंगे बांटी,
 यहु तन जरि बरि होइगा माटी ॥
 कहै कबोर जे जन हरि रंगि राता,
 पायौ राजा रांम परंम पद दाता ॥ ३२२ ॥

[राग टोडी]

तू' पाक परमानंदे ।
 पीर पैकंबर पनह तुम्हारी, मैं गरीब क्या गंदे ॥ टेक ॥
 तुम्ह दरिया सबही दिल भीतरि, परमानंद पियारे ।
 नै'क नजरि हम ऊपरि नाहीं, क्या कमिबखत हंमारे ॥
 हिकमति करै' हलाल बिचारै', आप कहावै' मोटे ।
 चाकरी चोर निवालै हाजिर, साई' सेती खोटे ॥
 दाइम दूवा करद बजावै', मैं क्या करू' भिखारी ।
 कहै कबोर मैं बंदा तेरा, खालिक पनह तुम्हारी ॥ ३२३ ॥

अब हम जगत गौहन तैं भाग,

जग की देखि जुगति रांमहि दूँरि लागे ॥ टेक ॥
 अयांन पनैं थैं बहु बैरांनैं, संमझि परी तब फिरि पछितानैं ॥
 लोग कहै जाकै जो मनि भावै, लहैं भुवंगम कौन डसावै ॥
 कबीर बिचारि इहै डर डरिये, कहै का हो इहां नै मरिये ॥३२४॥

[राग भैरू]

ऐसा ध्यान धरौ नरहरी, सबद अनाहद च्यंतन करी ॥टेक॥
 पहली खोजौ पंचे बाइ, बाइ व्यंद ले गगन समाइ ॥
 गगन जोति तहां त्रिकुटो संधि, रवि ससि पवनो मेलौ बंधि ॥
 मन थिर होइत कवल प्रकासै, कवला मांदि निरंजन बासै ॥
 सतगुर संपट खोलि दिखावै, निगुरा होइ तौ कहां बतावै ॥
 सहज लछिन ले तजौ उपाधि, आसण दिढ निद्रा पुनि साधि ॥
 पुहप पत्र जहां हीरा मणीं, कहै कबीर तहां त्रिभवन धणीं ॥३२५॥

इहि बिधि सेविये श्री नरहरी, मन की दुविध्या मन परहरी ॥टेक॥
 जहां नहीं जहां नहीं तहां कछू जांणि, जहां नहीं तहां लेहु पछांणि ॥
 नांही देखि न जइयें भागि, जहां नहीं तहां रहिये लागि ॥
 मन मंजन करि दसवै द्वारि, गंगा जमुना संधि बिचारि ॥
 नादहि व्यंद कि व्यंदहि नाद, नादहि व्यंद मिलै गोव्यंद ॥
 देवी न देवा पूजा नहीं जाप, भाइ न बंध माइ नहीं बाप ॥
 गुणातीत जस निरगुण आप, भ्रम जेवड़ी जग कीयौ साप ॥
 तन नांहीं कब जब मन नांहि, मन परतीति ब्रह्म मन मांदि ॥
 परहरि बकुला ग्रहि गुन डार, निरखि देखि निधि वार न पार ॥
 कहै कबीर गुर परम गियांन, सुनि मंडल मैं धरौ धियांन ॥
 प्यंड परें जीव जैहै जहां, जीवत ही ले राखौ तहां ॥३२६॥

अलह अलख निरंजन देव, किहि बिधि करौ तुम्हारी सेव ॥टेक॥
 बिभ्र सोई जाकौ बिस्तार, सोई कृष्ण जिनि कीयौ संसार ॥
 गोव्यं द ते ब्रह्मं डहि गहै, सोई राम जे जुगि जुगि रहै ॥
 अलह सोई जिनि उमति उपाई, दस दर खोलै सोई खुदाई ॥
 लख चौरासी रब परवरै, सोई करीम जे एती करै ॥
 गोरख सोई ग्यान गमि गहै, महादेव सोई मन की लहै ॥
 सिध सोई जो साधै इती, नाथ सोई जो त्रिभुवन जती ॥
 सिध साधू पैकंवर हूवा, जपै सु एक भेष है जूवा ॥
 अपरंपार का नांउ अनंत, कहै कबीर सोई भगवंत ॥ ३२७ ॥

तहां जौ राम नाम ल्यौ लागै, तौ जुरा मरण छूटै भ्रम भागै ॥टेक॥
 अगम निगम गढ रचि ले अवाम, तहुवां जोति करै परकास ॥
 चमकै बिजुरी तार अनंत, तहां प्रभू बैठे कवलाकंत ॥
 अखंड मंडिल मंडित मंड, त्रि-स्नान करै त्रिखंड ॥
 अगम अगोचर अभि-अंतरा, ताकौ पार न पावै धरणीधरा ॥
 अरध उरध विचि लाइ ले अकास, तहुवां जोति करै परकास ॥
 टारयौ टरै न आवै जाइ, सहज सुनि मैं रह्यौ समाइ ॥
 अबरन बरन स्याम नहीं पीत, हाहू जाइन गावै गीत ॥
 अनहद सबद उठै भणकार, तहां प्रभू बैठे समरथ सार ॥
 कदली पुहुप दीप परकास, रिदा पंकज मैं लिया निवास ॥
 द्वादस दल अभि-अंतरि म्यंत, तहां प्रभू पाइसि करिलै च्यंत ॥
 अमिलन मलिन घांम नहीं छांहां, दिवस न राति नहां है तहां ॥
 तहां न ऊगै सूर न चंद, आदि निरंजन करै अनंद ॥
 ब्रह्मं डे सो प्यं डे जानि, मानसरोवर करि असनान ॥
 सोहं हंसा ताकौ जाप, ताहि न लिपै पुन्य न पाप ॥
 काया मांहीं जानै सोई, जो बोलै सो आपै होई ॥
 जोति मांहि जे मन थिर करै, कहै कबीर सो प्राणोंतिरै ॥ ३२८ ॥

एक अचंभा ऐसा भया, करणीं थै कारण मिटि गया ॥टेक॥
 करणी किया करम का नास, पावक मांहि पुहुप प्रकास ॥
 पुहुप मांहि पावक प्रजरै, पाप पुन दोऊ भ्रम टरै ॥
 प्रगटो बास बासना धोइ, कुल प्रगट्यौ कुल घाल्यौ खोइ ॥
 उपजी च्यंत च्यंत मिटि गई, भौ भ्रम भागा ऐसी भई ॥
 उलटो गंग मेर कूं चली, धरती बलटि अकामहि मिली ।
 दास कबीर तत ऐसा कहै, ससिहर उलटि राह कौं गहै ॥३२८॥

है हजूरि क्या दूरि बतावै, दुंदर बांधे सुंदर पावै ॥टेक॥
 सो मुलनां जो मन सूं लरै, अह निसि काल चक्र सूं भिरै ॥
 काल चक्र का मरदै मान, ता मुलनां कूं सदा सलाम ॥
 काजी सो जो काया बिचारै, अह नसि ब्रह्म अगनि प्रजारै ॥
 सुप्पनै बिंद न देई भरनां, ता काजी कूं जुरा न मरणां ॥
 सो सुलितान जु द्वै सुर तानै, बाहरि जाता भीतरि आनै ॥
 गगन मंडल में लसकर करै, सो सुलितान छत्र सिरि धरै ॥
 जोगी गोरख गोरख करै, हिंदू राम नाम उचरै ॥

मुसलमान कहै एक खुदाइ,

कबीरा कौ स्वामीं घटि घटि रह्यौ समाइ ॥ ३३० ॥

आऊंगा न जाऊंगा, मरूंगा न जीऊंगा ।

गुर के सबद मैं रमि रमि रहूंगा ॥ टेक ॥

आप कटोरा आपै थारी, आपे पुरिखा आपै नारी ॥
 आप सदाफल आपै नीबू, आपै मुसलमान आपै हिंदू ॥
 आपै मछ कछ आपै जाल, आपै भीवर आपै काल ॥
 कहै कबीर हम नांही रे नांही, नां हंम जीवत न मुवले मांहीं ॥३३१॥

हंम सब मांहि सकल हम मांहीं, हम थै और दूसरा नांहीं ॥टेक॥
 तीनि लोक मैं हमारा पसारा, आवागवन सब खेल हमारा ॥

खट दरसन कहियत हम भेखा, हमहीं अतीत रूप नहीं रेखा ॥
हमहीं आप कबीर कहावा, हम हीं अपनां आप लखावा ॥३३२॥

सो धन मेरे हरि का नाउं, गांठि न बांधीं बेचि न खांड' ॥टेक॥
नाउ मेरे खेती नाउ मेरे बारी, भगति करौं मैं सरनि तुम्हारी ॥
नाउ मेरे सेवा नाउ मेरे पूजा, तुम्ह दिन और न जानौं दूजा ॥
नाउ मेरे बंधव नांव मेरं भाई, अंत की बिरियां नांव सहाई ॥
नाउ मेरे निरधन ज्युं निधि पाई, कहै कबीर जैसै र'क मिठाई ॥३३३॥

अब हरि हूं अपनौं करि लीनौं,

प्रेम भगति मेरौ मन भीनौं ॥ टेक ॥

जरै सरीर अंग नहीं मोरौं, प्रान जाइ तौ नेह न तोरौं ॥
च्यंतामणि क्युं पाइए ठोली, मन दे रांम लियौ निरमोली ॥
ब्रह्मा खोजत जनम गवायौ, सोई रांम घट भीतरि पायौ ॥
कहै कबीर छूटो सब आमा, मिल्यौ रांम उपज्यौ बिसवासा ॥३३४॥

लोग कहैं गोवरधनधारी, ताकौ मोहि अचंभौ भारी ॥ टेक ॥
अष्ट कुली परबत जाकं पग की रैनानां, सातौं सायर अंजन नैनानां ॥
ऐ उपमां हरि किती एक ओपै, अनेक मेर नख ऊपरि रोपै ॥
धरनि अकास अधर जिनि राखी, ताकी मुगधा कहैं न साखी ॥
सिव बिरंचि नारद जस गावै, कहै कबीर वाको पार न पावै ॥३३५॥

रांम निरंजन न्यारा रे, अंजन सकल पसारा रे ॥ टेक ॥
अंजन उतपति वो ऊंकार, अंजन मांड्या सब बिस्तार ॥
अंजन ब्रह्मा संकर इंद, अंजन गोपी संगि गोब्यंद ॥
अंजन बांणीं अंजन बेद, अंजन कीया नानां भेद ॥
अंजन बिद्या पाठ पुरांन, अंजन फोकट कथहि गियांन ॥
अंजन पाती अंजन देव, अंजन की करै अंजन सेव ॥

अंजन नाचै अंजन गावै, अंजन भेष अनंत दिखावै ॥
 अंजन कहैं कहीं लग केता, दान पुनि तप तीरथ जेता ॥
 कहै कबीर कोई बिरला जागै, अंजन छाड़ि निरंजन लागै ॥३३६॥

अंजन अलप निरंजन सार, यहै चीन्हि नर करहु बिचार ॥टेक॥
 अंजन उतपति बरतनि लोई, बिना निरंजन मुक्ति न होई ॥
 अंजन आवै अंजन जाइ, निरंजन सब घटि रखौ समाइ ॥
 जोग ध्यान तप सबै विकार, कहै कबीर मेरे राम आधार ॥३३७॥

एक निरंजन अलह मेरा, हिंदू तुरक दहूं नहीं नेरा ॥ टेक ॥
 राखूं व्रत न महरम जानां, तिसही सुमिरूं जो रहै निदानां ॥
 पूजा करूं न निमाज गुजारूं, एक निराकार हिरदै नमसकारूं ॥
 नां हज जाऊं न तीरथ पूजा, एक पिछांप्यां तौ क्या दूजा ॥
 कहै कबीर भरम सब भागा, एक निरंजन सूं मन लागा ॥३३८॥

तहां मुझ गरीब की को गुदरावै,
 मजलसि दूरि महल को पावै ॥ टेक ॥
 सतरि सहस सलार हैं जाकै, असी लाख पैकंबर ताकै ॥
 सेख जु कहिय सहस अख्यासी, छपन कोड़ि खेलिबे खासी ॥
 कोड़ि तेतीसूं अरु खिलखानां, चौरासी लख फिरै दिवानां ॥
 बाबा आदम पै नजरि दिलाई, नबी भिस्त घनेरी पाई ॥
 तुम्ह साहिव हम कहा भिखारी, देत जबाब हेत बजगारी ॥
 जन कबीर तेरी पनह समानां, भिस्त नजीक राखि रहिमानां ॥३३९॥

जौ जाचैं तौ केवल राम, आन देव सूं नाहीं काम ॥ टेक ॥
 जाकै सूरिज कोटि करै परकाम, कोटि महादेव गिरि कविलास ॥
 ब्रह्मा कोटि वेद ऊचरै, दुर्गा कोटि जाकै मरदन करै ॥
 कोटि चंद्रमां गहैं चिराक, सुर तेतीसूं जीमै पाक ॥

नौग्रहं कांति ठाढे दरबार, धरमराइ पौली प्रतिहार ॥
 कोटि कुबेर जाकै भरै भंडार, लछमीं कोटि करै सिंगार ॥
 कोटि पाप पुनि ब्यौहरै, इंद्र कोटि जाकी सेवा करै ॥
 जगि कोटि जाकै दरबार, गंध्रप कोटि करै जैकार ॥
 विद्या कोटि सबै गुण कहैं, पारब्रह्म कौ पारन लहैं ॥
 बासिग कोटि सेज बिमतरै, पवन कोटि चौवारै फिरै ॥
 कोटि समुद्र जाकै पणिहारा, रोमावली अठारह भारा ॥
 असंखि कोटि जाकै जमावली, रांवण सेन्यां जाथै चली ॥
 सहसबांह के हरे पराण, जरजोधन घाल्यौ खै मान ॥
 बावन कोटि जाकै कुटवाल, नगरी नगरी खेत्रपाल ॥
 लट छूटी खेलै विकराल, अनत कला नटवर गोपाल ॥
 कंद्रप कोटि जाकै लावन करै, घट घट भीतरि मनसा हरै ॥
 दास कबीर भजि सारंगपान, देहु अभै पद मांगीं दान ॥३४०॥

मन न डिगै ताथै तन न डराई,

केवल राम रहे ल्यौ लाई ॥ टेक ॥

अति अथाह जल गहर गंभीर, बांधि जंजीर जलि बोरे हैं कबीर ॥
 जल की तरंग उठि कटिहैं जंजीर, हरि सुमिरन तट बैठे हैं कबीर ॥
 कहै कबीर मेरे संग न साथ, जल थल में राखै जगनाथ ॥३४१॥

भलै नीदौ भलै नीदौ भलै नीदौ लोग,

तन मन राम पियारे जाग ॥ टेक ॥

मैं बैारी मेरे राम भरतार, ता कागनि रचि करै स्यंगार ॥
 जैसै धुबिया रज मल धोवै, हर-तप-रत सब निंदक खोवै ॥
 न्यंदक मेरे माई बाप, जन्म जन्म के काटे पाप ॥
 न्यंदक मेरे प्रांन अधार, बिन बेगारि चलावै भार ॥
 कहै कबीर न्यंदक बलिहारी, आप रहै जन पार उतारी ॥३४२॥

जौ मैं बौरा तौ रांम तोरा, लोग मरम का जानै' मोरा ॥टेक॥
 माला तिलक पहिर मनमाना, लोगनि रांम खिलौनां जानां ॥
 थोरी भगति बहुत अहंकारा, ऐसे भगता मिलै' अपारा ॥
 लोग कहै कबीर बौराना, कबीरा कौ मरम रांम भल जानां ॥३४३॥

हरिजन हंस दसा लीये डोलै,
 निर्मल नांव चवै जस बोलै ॥ टेक ॥
 मानसरोवर तट कं वासी, रांम चरन चित आन उदामी ॥
 मुक्ताहल बिन चंच न लावै', मैनि गह्वै कै हरि गुन गावै' ॥
 कऊवा कुबधि निकटि नहीं आवै, सो हंसा निज दरसन पावै ॥
 कहै कबीर सोई जन तेरा, खीर नीर का करै नबेरा ॥ ३४४ ॥

सति रांम सतगुर की संवा, पूजहु रांम निरंजन देवा ॥टेक॥
 जल कै मंजन्य जो गति होई, मोनां नित ही न्हावै ।
 जैसा मोनां तैसा नरा. फिरि फिरि जोनीं आवै ॥
 मन मैं मैना तीर्थ न्हावै, तिनि बैकुंठ न जानां ।
 पाखंड करि करि जगत भुलानां, नाहिंन रांम अर्यानां ॥
 हिरदै कठौर मरै बानारसि, नरक न बंझ्या जाई ।
 हरि कौ दास मरै जे मगहरि, संन्यां सकल तिराई ॥
 पाठ पुरान बेद नहीं सुमृत, तहां बसै निरकारा ।
 कहै कबीर एक ही ध्यावो, बावलिया संसारा ॥ ३४५ ॥

क्या हूँ तेरं न्हाईं' धोई', आतम-रांम न चीन्हां सोई ॥टेक॥
 क्या घट ऊपरि मंजन कीयै', भोतरि मैल अपारा ।
 रांम नाम बिन नरक न छूटै, जे धोवै सौ बारा ॥
 का नट भेष भगवां बस्तर, भसम लगावै लोई ।
 ज्यूं दादुर सुरसुरी जल भीतरि, हरि बिन मुक्ति न होई ॥

परहरि काम राम कहि बैरे, सुनि सिख बंधू मेरी ।
हरि कौ नांव अमै-पद-दाता, कहै कबीरा कोरी ॥ ३४६ ॥

पांणीं थैं प्रगट भई चतुराई, गुर प्रसादि परम निधि पाई ॥ टेक ॥
इक पांणीं पांणीं कूं धावै, इक पांणीं पांणीं कूं मोहै ॥
पांणी ऊंचा पांणीं नींचा, ता पांणीं का लीजै सींचा ॥
इक पांणीं थैं प्यंढ उपाया, दास कबीर राम गुण गाया ॥ ३४७ ॥

भजि गोब्यंद भूलि जिनि जाहु,
मनिसा जनम कौ एही लाहु ॥ टेक ॥
गुर सेवा करि भगति कमाई, जौ तैं मनिसा देही पाई ॥
या देही कूं लोचै देवा, सो देही करि हरि की सेवा ॥
जब लग जुरा रोग नहीं आया, तब लग काल प्रसै नहिं काया ॥
जब लग हीण पड़ै नहीं बांणीं, तब लग भजि मन सारंगपांणीं ॥
अब नहीं भजसि भजसि कब भाई, आवैगा अंत भय्यौ नहीं जाई ॥
जे कछू करौ सोई तत सार, फिरि पछितावोगे वार न पार ॥
सेवग सो जो लागै सेवा, तिनहीं पाया निरंजन देवा ॥
गुर मिलि जिनि के खुले कपाट, बहुरि न आवै जोनीं बाट ॥
यहु तेरा औसर यहु तेरी बार, घट ही भीतरि सोचि विचारि ॥
कहै कबीर जीति भावै हारि, बहु विधि कह्यौ पुकारि पुकारि ॥ ३४८ ॥

ऐसा ग्यान विचारि रे मनां,
हरि किन सुमिरै दुख भंजनां ॥ टेक ॥
जब लग मैं मेरी करै, तब लग काज एक नहीं सरै ॥
जब यहु मैं मेरी मिटि जाइ, तब हरि काज संवारै आइ ॥
जब लग स्यंघ रहै बन माहि, तब लग यहु बन फूलै नाहिं ॥
उलटि स्याल स्यंघ कूं खाइ, तब यहु फूलै सब बनराइ ॥

जीत्या डूबै हारया तिरै, गुर प्रसाद जीवत ही मरै ॥
दास कबीर कहै समझाइ, केवल राम रहौ ल्यौ लाइ ॥ ३४६ ॥

जागि रे जीव जागि रे ।

चोरन कौ डर बहुत कहत हैं, उठि उठि पहरै लागि रे ॥ टेक ॥
ररा करि टोप ममां करि बखतर, ग्यांन रतन करि षाग रे ।
ऐसै जौ अजराइल मारै, मस्तकि आवै भाग रे ॥
ऐसी जागणीं जे को जागै, ता हरि देइ सुहाग रे ।
कहै कबीर जाग्या ही चाहिये, क्या गृह क्या वैराग रे ॥ ३५० ॥

जागहु रे नर सोवहु कहा, जम बटपारै रुंधै पहा ॥ टेक ॥
जागि चेति कलू करौ उपाइ, मोटा बैरी है जंमराइ ॥
सेत काग आये वन मांहिं, अजहुँ रे नर चेतै नांहिं ॥
कहै कबीर तबै नर जागै, जंम का डंड मूंड मैं लागै ॥ ३५१ ॥

जाग्या रे नर नौंद नसाई, चित चेत्यौ च्यंतामणि पाई ॥ टेक ॥
सोवत सोवत बहुत दिन बीते, जन जाग्या तसकर गये रीते ॥
जन जागे का ऐसहि नांण, बिष से लागै बेद पुराण ॥
कहै कबीर अब सोवौं नांहि, राम रतन पाया घट मांहि ॥ ३५२ ॥

संतनि एक अहेरा लाधा, मिर्गनि खेत सबनि का खाधा ॥ टेक ॥
या जंगल मैं पांचौं मृगा, एई खेत सबनि का चरिगा ॥
पारधीपनौं जे साधै कोई, अध खाधा सा राखै सोई ॥
कहै कबीर जो पंचौं मारै, आप तिरै और कूं तारै ॥ ३५३ ॥

हरि कौ बिलोवनौं बिलोइ मेरी माई,

ऐसै बिलोइ जैसे तत न जाई ॥ टेक ॥

तन करि मटकी मनहि बिलोइ, ता मटकी मैं पवन समोइ ॥

इला प्यंगुला सुषमन नारी, बेगि बिलोइ ठाढो छछिहारी ॥
कहै कबीर गुजरी बैरांनीं, मटकी फूटी जोति समांनीं ॥३५४॥

आसण पवन कियै दिठ रहुरे, मन का मैत छाड़ि दे बैरे ॥ टेक ॥
क्या सींगी मुद्रा चमकायै, क्या विभूति सब अंगि लगाये ॥
सो हिंदू सो मुसलमान, जिसका दुरम रहै ईमान ॥
सो ब्रह्मा जो कथै ब्रह्म गियांन, काजी सो जानै रहिमान ॥
कहै कबीर कछू आन न कीजै, राम नाम जपि लाहा लीजै ॥३५५॥

तार्थै कहियं लोकाचार, वेद कतेब कथै व्यैहार ॥ टेक ॥
जारि वारि करि आवै देहा, मूवां पीछै प्रीति सनेहा ॥
जीवत पित्रहि मारहि डंगा, मूवां पित्र ले घालै गंगा ॥
जीवत पित्र कूं अन न खावै, मूवां पाछै प्यंड भरावै ॥
जीवत पित्र कूं बोलै अपराध, मूवां पीछै देहि सराध ॥
कहि कबीर मोहि अचिरज आवै, कऊवा खाइ पित्र क्यूं पावै ॥३५६॥

बाप राम सुनि बीनती मोरी,
तुम्ह सूं प्रगट लोगनि सूं चोरी ॥ टेक ॥
पहलै कांम मुगध मति कीया, ता भै कपै मेरा जोया ॥
राम राइ मेरा कह्या सुनीजै, पहले बकसि अब लेखा लीजै ॥
कहै कबीर बाप राम राया, अबहूं सरनि तुम्हारी आया ॥३५७॥

अजहूं बीच कैसें दरसन तोरा,
बिन दरसन मन मानै क्यूं मोरा ॥ टेक ॥
हमहि कुसेवग क्या तुम्हहि अजांनां, दुह मै दोस कहै किन रांमां ॥
तुम्ह कहियत त्रिभवन पति राजा, मन बंछित सब पुरवन काजा ॥
कहै कबीर हरि दरस दिखावौ,
हमहि बुलावौ कै तुम्ह चलि आवौ ॥ ३५८ ॥

क्यूं लीजै गढ़ बंका भाई, देवर कोट अरु तेवड़ खाई ॥टेक॥
 काम किवाड़ दुख सुख दरवांनीं, पाप पुंनि दरवाजा ।
 क्रोध प्रधान लोभ बड़ दूंदर, मन मैं वासी राजा ॥
 स्वाद सनाह टोप ममिता का, कुबधि कमाण चढ़ाई ।
 त्रिसना तीर रहै तन भीतरि, सुबधि हाथि नही आई ॥
 प्रेम पलीता सुरति नालि करि, गोला ग्यान चलाया ।
 ब्रह्म अग्नि ले दिया पलीता, एकै चोट ढहाया ॥
 सत संतोष ले लरनै लागे, तोरे दस दरवाजा ।
 साध संगति अरु गुर की कृपा र्ये, पकर्यौ गढ़ कौ राजा ॥
 भगवंत भीर सकति सुमिरण की, काटि काल की पासी ।
 दास कबीर चढ़े गढ़ ऊपरि, राज दियौ अविनासी ॥ ३५६ ॥

रैन गई मति दिन भी जाइ, भवर उड़े बग बैठे आई ॥टेक॥
 काचै करवै रहै न पांनीं, हंस उड़्या काया कुमिलानीं ॥
 थरहर थरहर कंपै जीव, नां जानूं का करिहै पीव ॥
 कऊवा उड़ावत मेरी बहियां पिरानीं,
 कहै कबीर मेरी कथा सिरानीं ॥ ३६० ॥

काहे कूं भीति बनाऊं टाटी, का जानू कहां परिहै माटी । टेक॥
 काहे कूं मंदिर महल चिणाऊं, मूंवां पीछै घड़ी एकरहण न पाऊं ॥
 काहे कूं छाऊं ऊंच उंचेरा, साढ़े तीनि हाथ घर मेरा ॥
 कहै कबीर नर गरब न कीजै, जेता तन तेती भुंइलीजै ॥ ३६१ ॥

[राग बिलावल]

बार बार हरि का गुण गावै, गुर गमि भेद सहर का पावै ॥टेक॥
 आदित करै भगति आरंभ, काया मंदिर मनसा थंभ ॥
 अखंड अह्निसि सुरण्या जाइ, अनहद बेन सहज मैं पाइ ॥

सोमवार ससि अमृत भरै, चाखत बेगि तपै निसतरै ।
 बाण्यो रोक्क्या रहै दुवार, मन मतिवाला पीवनहार ॥
 मंगलवार ल्यौ मांहींत, पंच लोक की छाड़ौ रीत ।
 घर छाड़ै जिनि बाहिर जाइ, नहीं तर खरौ रिसावै राइ ॥
 बुधवार करै बुधि प्रकास, हिरदा कवल में हरि का बास ।
 गुर गमि दोऊ एक समि करै, ऊरध पंकज थैं सूधा धरै ॥
 त्रिसपति त्रिषिया देइ बहाइ, तीनि देव एकै संगि लाइ ।
 तीनि नदी तहां त्रिकुटो मांहि, कुसमल धेवै अहनिशि न्हांहि ॥
 सुक्र सुधा ले इहि व्रत चढ़ै, अह निसि आप आप सैं लड़ै ।
 सुरषो पंच राखियं सबै, तौ दूजी द्रिष्टि न पैसै कबै ॥
 थावर थिर करि घट में सोइ, जोति दीवटी मेल्है जोइ ।
 बाहिर भीतरि भया प्रकास, तहां भया सकल करम का नास ॥
 जब लग घट में दूजी आंण, तब लग महलि न पावै जांण ।
 रमिता राम सैं लागै रंग, कहै कबीर ते निर्मल अंग ॥ ३६२ ॥

राम भजै सो जानिय, जाकै आतुर नांहीं ।
 सत संतोष लीयै रहै, धोरज मन मांहीं ॥ टेक ॥
 जन कौं कांम क्रोध व्यापै नहीं, त्रिष्णां न जरावै ।
 प्रफुलित आनंद में, गोव्यंद गुंण गावै ॥
 जन कौं पर निद्या भावै नहीं, अरु असति न भावै ।
 काल कल्पनां मेटि करि, चरनूँ चित राखै ॥
 जन सम द्रिष्टो सीतल सदा, दुविधा नहीं आनै ।
 कहै कबीर ता दास सैं, मेरा मन मानै ॥ ३६३ ॥

माधौ सो न मिलै जासौं मिलि रहिये,
 ता कारनि बर बहु दुख सहिये ॥ टेक ॥
 छत्रधार देखत ठहि जाइ, अधिक गरब थैं खाक मिलाइ ॥

अगम अगोचर लखी न जाइ, जहाँ का सहज फिरि तहाँ समाइ ॥
कहै कबीर भूठे अभिमान, सो हम सो तुम्ह एक समान ॥३६४॥

अहो मेरे गोव्यंद तुम्हारा जोर, काजो बकिवा हस्ती तोर ॥टेक॥
बांधि भुजा भलै करि डारयौ, हस्ती कोपि मूंड मैं मारयौ ॥
भाग्यौ हस्ती चीसां मारी, वा मूरति की मैं बलिहारी ॥
महावत तोकूं मारौं साटो, इसहि मराऊं घालौं काटो ॥
हस्ती न तोरै धरै धियान, वाकै हिरदै बसै भगवान ॥
कहा अपराध संत है कीन्हां, बांधि पोट कुंजर कूं दीन्हां ॥
कुंजर पोट बहु बंदन करै, अजहूं न सूझै काजी अंधरै ॥
तीनि बेर पतियारा लीन्हां, मन कठोर अजहूं न पतीनां ॥
कहै कबीर हमारै गोव्यंद, चौथे पद मैं जन का ज्यंद ॥३६५॥

कुसल खेम अरु सही सलांमति, ए दोइ काकों दीन्हां रे ।
आवत जात दुहुंघां लूटे, सर्व तत हरि लीन्हां रे ॥ टेक ॥
माया मोह मद मैं पीया, मुगध कहैं यहु मेरी रे ।
दिवस चारि भलै मन रंजै, यहु नाहीं किस केरी रे ॥
सुर नर मुनि जन पीर अवलिया, मीरां पैदा कीन्हां रे ।
कोटिक भये कहां लूं बरनूं, सबनि पर्यानां दीन्हां रे ॥
धरती पवन अकास जाइगा, चंद जाइगा सुरा रे ।
हम नाहीं तुम्ह नांही रे भाई, रहे रांम भरपूरा रे ॥
कुसलहि कुसल करत जग खीनां, पड़े काल भौ पासी ।
कहै कबीर सबै जग बिनस्या, रहे रांम अविनासी रे ॥ ३६६ ॥

मन बनजारा जागि न सोई, लाहे कारनि मूल न खोई ॥टेक॥
लाहा देखि कहा गरबानां, गरब न कीजै मूरिख अर्यानां ॥
जिनि धन संचया सो पछितानां, साथी चलि गये हम भी जानां ॥
निस अंधियारी जागहु बंदे, छिटकन लागे सबही संधे ॥

किसका बंधू किसकी जोई, चल्या अकेला संगि न कोई ॥
ठरि गये मंदिर टूटे बंसा, सूके सरवर छड़ि गये हंसा ॥
पंच पदारथ भरिहै खेहा, जरि बरि जायगी कंचन देहा ॥
कहत कबीर सुनहु रे लोई, राम नाम बिन और न कोई ॥३६७॥

मन पतंग चेतै नहीं, जल अंजुरी समान ।

बिषिया लागि बिगूचिये, दाभिये निदान ॥ टेक ॥

काहे नैन अनंदियै, सूभत नहीं आगि ।

जनम अमोलिक खोइयै, सांपनि संगि लागि ॥

कहै कबीर चित चंचला, गुर ग्यान कह्यौ समझाइ ।

भगति हीन न जरई जरै, भावै तहां जाइ ॥ ३६८ ॥

स्वादि पतंग जरै जरि जाइ,

अनहद सौं मेरौ चित न रहाइ ॥ टेक ॥

माया कै मदि चेति न देख्या, दुबिध्या मांहि एक नहीं पेख्या ॥

भेष अनंक किया बहु कीन्हां, अकल पुरिस एक नहीं चीन्हां ॥

केते एक मूयं मरहिगे केते, केतेक मुगध अजहू नहीं चेतै ॥

तंत मंत सब ओषद माया, केवल राम कबीर दिढाया ॥३६९॥

एक सुहागनि जगत पियारी, सकल जीव जंत की नारी ॥टेक॥

खसम मरै वा नारि न रोवै, उस रखवाला औरै होवै ॥

रखवाले का होइ विनास, उतहि नरक इत भोग बिलास ॥

सुहागनि गलि सोहै हार, संतनि बिख बिलसै संसार ॥

पीछै लागी फिरै पचिहारी, संत की ठठकी फिरै बिचारी ॥

संत भजै वा पाछी पढ़ै, गुर के सबदूं मारयौ डरै ॥

साषत कै यहु प्यंढ परांइनि, हमारी द्रिष्टि परै जैसै डांइनि ॥

अब हम इसका पाया भेद, होइ कृपाल मिले गुरदेव ॥

कहै कबीर इष बाहरि परी, संसारी कै अचलि टिरी ॥ ३७० ॥

पारोसनि मांगै कंत हमारा,

पीव क्यूं बैरी मिलहि उधारा ॥ टेक ॥

मासा मांगै रती न देखूं, घटै मेरा प्रेम तौ कासनि लेऊं ॥

राखि परोसनि लरिका मोरा, जे कछु पाऊं सु आधा तोरा ॥

बन बन दूँढों नैन भरि जोऊं, पीव न मिलै तौ बिलखि करि रोऊं ॥

कहै कबीर यहु सहज हमारा, बिरली सुहागनि कंत पियारा ॥३७१॥

राम चरन जाकै रिदै बसत है, ता जंन कौ मन क्यूं डोलै ॥

मानों अठ सिध्य नव निधि ताकै, हरषि हरषि जस बोलै ॥टेक॥

जहां जहां जाइ तहां सच पावै, माया ताहि न भोलै ।

बारंबार बरजि बिषिया तै, लै नर जौ मन तोलै ॥

ऐसी जे उपजै या जीय कै, कुटिल गांठि सब खोलै ।

कहै कबीर जब मन परचौ भयौ, रहै राम कै बोलै ॥३७२॥

जंगल मैं का सोवनां, औघट है घाटा ॥

स्यंघ बाघ गज प्रजलै, अरु लंबी बाटा ॥ टेक ॥

निस बासुरि पेड़ा पड़ै, जमदांनों लुटै ।

सूर धीर साचै मतै, सोई जन छूटै ॥

चालि चालि मन माहरा, पुर पटण गहिये ।

मिलिये त्रिभुवन नाथ सूं, निरभै होइ रहिये ॥

अमर नहीं संसार मैं, बिनसै नर-देही ॥

कहै कबीर बेसास सूं, भजि राम सनेही ॥ ३७३ ॥

[राग ललित]

राम ऐसौ ही जानि जपौ नरहरी,

माधव मदसुदन बनवारी ॥ टेक ॥

अनदिन ग्यांन कथै घरियार, धूवां धौलह रहै संसार ॥

जैसै नदी नाव करि संग, ऐसै हीं मात पिता सुत अंग ॥

सबहि नल दुल मलफ लकीर, जल बुदबुदा ऐसो आहि सरीर ॥
जिभ्या रांम नांम अभ्यास, कहै कबीर तजि गरभ बास ॥३७४॥

रसनां रांम गुन रमि रस पीजै,

गुन अतीत निरमोलिक लीजै ॥ टेक ॥

निरगुन ब्रह्म कथौ रे भाई, जा सुमिरत सुधि बुधि मति पाई ॥
बिष तजि रांम न जपसि अभागे, का बूड़े लालच के लागे ॥
ते सब तिरे राम रस स्वादी, कहै कबीर बूड़े बकबादी ॥३७५॥

निबरक सुत ल्यौ कोरा, रांम मोहि मारि कलि बिष बोरा ॥टेक॥
उन देस जाइबो रे बाबू, देखिबो रे लोग किन किन खैबू लो ॥
उड़ि कागा रे उन देस जाइबा, जासूं मेरा मन चित लागे लो ॥
हाट ढूँढ़ि ले, पटनपुर ढुँढ़ि ले, नहीं गांव कै गोरा लो ॥
जल बिन हंस निसह बिन रबू,

कबीरा कौ खांमीं पाइ परिकै मनै बू लो ॥३७६॥

[राग बसंत]

सो जोगी जाकै सहज भाइ, अकल प्रीति की भीख खाइ ॥टेक॥
सबद अनाहद सींगी नाद, काम क्रोध बिषिया न बाद ॥
मन मुद्रा जाकै गुर कौ ग्यान, त्रिकुट कोट में धरत ध्यान ॥
मनहीं करन कौ करै सनान, गुर कौ सबद ले ले धरै ध्यान ॥
काया कासी खोजै बास, तहां जोति सरूप भयौ परकास ॥
ग्यान मेषली सहज भाइ, बंरु नालि कौ रस खाइ ॥
जोग मूल कौ देख बंद, कहि कबीर थिर होइ कंद ॥ ३७७ ॥

मेरौ हार हिरांनों में लजाऊं, सास दुरासनि पीव डराऊं ॥टेक॥
हार गुह्यौ मेरौ रांम ताग, बिचि बिचि मान्यक एक लाग ॥
रतन प्रवालै परम जोति, ता अंतरि अंतरि लागे मोति ॥

पंच सखी मिलिहैं सुजान, चलहु तजई ये त्रिवेणी न्हान ॥
 न्हाइ धोइ कै तिलक दीन्ह, नां जानूँ हार किन्हूँ लीन्ह ॥
 हार हिरांनों जन विमल कीन्ह, मेरौ आहि परोसनि हार लीन्ह ॥
 तीनि लोक की जानैँ पीर, सब देव सिरोमनि कहै कबीर ॥३७८॥

नहीं छाड़ौ बाबा राम नाम,

मोहि और पढ़न सूँ कौन काम ॥ टेक ॥

प्रह्लाद पधारे पढ़न साल, संग सखा लीये बहुत बाल ॥
 मोहि कहा पढ़ावै आल जाल, मेरी पाटी मैं लिखि दे श्रीगोपाल ॥
 तब संनां मुरकां कह्यौ जाइ, प्रह्लाद बंधायौ बेगि आइ ॥
 तूं राम कहन की छाड़ि बानि, बेगि छुड़ाऊँ मेरौ कह्यौ मानि ॥
 मोहि कहा डरावै बार बार, जिनि जल थल गिर कौ कियौ प्रहार ॥
 बांधि मारि भावै देह जारि, जे हूँ राम छाड़ौँ तौ मेरे गुरहि गारि ॥
 तब काढ़ि खड़ग कोप्यौ रिसाइ, तोहि राखनहारौ मोहि बताइ ॥
 खंभा मैं प्रगट्यौ गिलारि, हरनाकस मार्यौ नख बिदारि ॥
 महापुरुष देवाधिदेव, नरस्यंघ प्रगट कियौ भगति भेव ॥
 कहै कबीर कोई लहै न पार, प्रह्लाद ऊचार्यौ अनंक बार ॥३७९॥

हरि कौ नांउ तत त्रिलोक सार, लै लीन भये जे उतरे पार ॥ टेक ॥

इक जंगम इक जटाधार, इक अंगि विभूति करै अपार ॥
 इक मुनियर इक मनहूँ लीन, ऐसैँ हात हात जग जात खीन ॥
 इक आराधै सकति सीव, इक पड़दा दे दे बधै जीव ॥
 इक कुलदेव्याँ कौ जपहि जाप, त्रिभवनपति भूले त्रिविध ताप ॥
 अनहि छाड़ि इक पीवहि दूध, हरि न मिलै बिन हिरदै सूध ॥
 कहै कबीर ऐसैँ बिचार, राम बिना कौ उतरे पार ॥ ३८० ॥

हरि बोलि सूवा बार बार, तेरी ढिग मीनां कछू करि पुकार ॥ टेक ॥

अंजन मंजन तजि बिकार, सतगुरु समझायौ तत-सार ॥

साध संगति मिलि करि बसंत, भौ बंद न छूटैं जुग जुगंत ॥
कहै कबीर मन भया अनंद, अनंत कला भेटे गोब्यंद ॥ ३८१ ॥

बनमाली जानैं बन की आदि, राम नाम बिन जनम बादि । टेक।
फूल जु फूले रुति बसंत, जामैं मोहि रहे सब जीव जंत ॥
फूलनि मैं जैसै रहै तबास, यूं घटि घटि गोबिंद है निवास ॥
कहै कबीर मन भया अनंद, जग जीवन मिलियौ परमानंद ॥ ३८२ ॥

मेरे जैसे बनिज सौं कवन काज, मूल घटै सिरि बधै ब्याज । टेक।
नाइक एक बनिजारे पांच, बैल पचीस कौ संग साथ ॥
नव बहियां दस गौंनि आहि, कसनि बहतारि लागे ताहि ॥
सात सूत मिलि बनिज कीन्ह, कर्म पयादौ संग लीन्ह ॥
तीन जगाती करत रारि, चलयौ है बनिज वा बनज भारि ॥
बनिज खुटानों पूंजी दूटि, षाड् दह दिसि गयौ फूटि ॥
कहै कबीर यहु जन्म वाद, सहजि समांनूं रही लादि ॥ ३८३ ॥

माधौ दारन दुख सह्यौ न जाइ,

मेरी चपल बुधि तातैं कहा बसाइ ॥ टेक ॥

तन मन भीतरि बसै मदन चोर, जिनि ग्यांन रतन हरि लीन्ह मोर ॥
मैं अनाथ प्रभू कहूं काहि, अनेक बिगूचे मैं को आहि ॥
सनक सनंदन सिव सुकादि, आपण कबलापति भये ब्रह्मादि ॥
जोगी जंगम जती जटाधार, अपनैं औसर सब गयें हैं हारि ॥
कहै कबीर रहु संग साथ, अभिअंतरि हरि सू कहौ बात ॥
मन ग्यांन जानि कै करि बिचार, राम रमत भौ तिरिबौ पार ॥ ३८४ ॥

तू करी डर क्यूं न करै गुहारि,

तूं बिन पंचाननि श्री मुरारि ॥ टेक ॥

तन भीतरि बसै मदन चोर, तिनि सरबस लीनों छोरि मोर ॥
मांगैं देइ न बिनै मान, तकि मारै रिदा मैं काम बान ॥

मैं किहि गुहरांऊं आप लागि, तू करी डर बड़े बड़े गये हैं भागि ॥
 ब्रह्मा विष्णु अरु सुर मयंक, किहि किहि नहीं लावा कलंक ॥
 जप तप संजम सुंचि ध्यान, बंदि परे सब सहित ग्यान ॥
 कहि कबीर उबरे द्वै तीनि, जा परि गोबिंद कृपा कीन्ह ॥३८५॥

ऐसौ देखि चरित मन मोह्यौ मोर,

तार्थै निस बासुरि गुन रमै तोर ॥टेक॥

इक पढ़हि पाठ इक भ्रमै उदास, इक नगन निरंतर रहै निवास ॥
 इक जोग जुगति तन हूंहि खीन, ऐसै रांम नाम संगि रहै न लीन ॥
 इक हूंहि दीन इक देहि दान, इक करै कलापी सुरा पान ॥
 इक तंत मंत घोषध बान, इक सकल सिध राखै अपान ॥
 इक तीर्थ व्रत करि काया जीति, ऐसै रांम नाम सूं करै न प्रीति ॥
 इक धोम घोटि तन हूंहि स्याम, यूं मुकति नहीं बिन रांम नाम ॥
 सत गुर तत कह्यौ विचार, मूल गह्यौ अनभै विसतार ॥
 जुरा मरण थै भये धोर, रांम कृपा भई कहि कबीर ॥३८६॥

सब मदिमाते कोई न जाग,

तार्थै संग ही चोर घर मुसन लाग ॥टेक॥

पंडित माते पढ़ि पुरान, जोगी माते धरि धियान ॥
 संन्यासी माते अहंमेव, तपा जु माते तप कै भेव ॥
 जागे सुक उधव अकूर, हणवत जागे लै लंगूर ॥
 संकर जागे चरन सेव, कलि जागे नामां जै देव ॥
 ए अभिमान सब मन के काम, ए अभिमान नहीं रहां ठाम ॥
 आतमां रांम कौ मन बिश्राम, कहि कबीर भजि रांम नाम ॥३८७॥

चलि चलि रे भवरा कवल पास, भवरी बोलै अति उदास ॥टेक॥
 तै अनेक पुहप कौ लियौ भोग, सुख न भयौ तब बढ़गै है रोग ॥
 हौं ज कहत तोसूं बार बार, मैं सब बन सोध्यौ डार डार ॥

दिनां चारि के सुरंग फूल, तिनहि देखि कहा रखौ है भूल ॥
 या बनासपती मैं लागैगी आगि, तब तू जैहौ कहां भागि ॥
 पहुप पुराने भये सूक, तब भवरहि लागी अधिक भुल ॥
 उड़गौ न जाइ बल गयो है छूटि, तब भवरी रुंती सीस कूटि ॥
 दह दिसि जोवै मधुप राइ, तब भवरी ले चली सिर चढ़ाइ ॥
 कहै कबीर मन कौ सुभाव, राम भगति बिन जम कौ डाव ॥ ३८८ ॥

आवध राम सबै करम करिहूं,

सहज समाधि न जम थै डरिहूं ॥ टेक ॥

कृभरा हूँ करि बासन घरिहूं, धोबी हूँ मल धोऊं ।
 चमरा हूँ करि रंगों अधौरी, जाति पांति कुल खोऊं ॥
 तेली हूँ तन कोल्हू करिहौं, पाप पुंनि दोऊ पीरौं ।
 पंच बैल जब सूध चलाऊँ, राम जेवरिया जोरुं ॥
 छत्रो हूँ करि खड़ग सँभालूँ, जोग जुगति दोउ साधूँ ।
 नऊवा हूँ करि मन कूँ मूँडूँ, बाढ़ी हूँ कर्म बाढूँ ॥
 अवधू हूँ करि यहु तन धूर्तौ, बधिक हूँ मन मारुं ।
 बनिजारा हूँ तत कूँ बनिजूँ, जूवारी हूँ जम हारुं ॥
 तन करि नवका मन करि खेवट, रसनां करऊं बाढारुं ॥
 कहि कबीर भौसागर तिरिहूं, आप तिरुं बप तारुं ॥ ३८९ ॥

[राग मालीगौड़ी]

पंडिता मन रंजिता, भगति हेत ल्यौ लाइ रे ।

प्रेम प्रीति गोपाल भजि नर, और कारण जाइ रे ॥ टेक ॥

दांम छै पणि काम नाहीं, ग्यांन छै पणि धंध रे ।

अवण छै पणि सुरति नाहीं, नैन छै पणि अंध रे ॥

जाकै नाभि पदम सु उदित ब्रह्मा, चरन गंग तरंग रे ।

कहै कबीर हरि भगति बांछूं, जगत गुर गोव्यंद रे ॥३६०॥

बिष्णु ध्यान सनान करि रे, बाहरि अंग न धोइ रे ।

साच बिन सीभसि नहीं, काई ग्यान दृष्टै जोइ रे ॥ टेक ॥

जंजाल मांहैं जीव राखै, सुधि नहीं सरीर रं ।

अभिअंतरि भेदै नहीं, काई बाहरि न्हावै नीर रे ॥

निहकर्म नदी ग्यान जल, सुनि मंडल मांहि रे ।

औधूत जोगी आतमां, काई पेणै संजमि न्हाहि रे ॥

इला प्यंगुला सुषमनां, पछिम गंगा बालि रे ।

कहै कबीर कुस मल भडै, काई मांहि लौ अंग पषालि रे ॥३६१॥

भजि नारदादि सुकादि बंदित, चरन पंकज भांमिनीं ।

भजि भजिसि भूषन पिया मनोहर, देव देव सिरोंवनीं ॥टेक॥

बुधि नाभि चंदन चरचिता, तन रिदा मंदिर भीतरा ।

राम राजसि नैन बांनीं, सुजान सुंदर सुंदरा ॥

बहु पाप परबत छेदनां, भौ ताप दुरिति निवारणां ।

कहै कबीर गोव्यंद भजि, परमानंद बंदित कारणां ॥३६२॥

[राग कल्यान]

ऐसैं मन लाइ लै राम रसनां, कपट भगति कीजै कौन गुणां ॥टेक॥

ज्यूं मृग नादै बेध्यौ जाइ, प्यंड परै बाकौ ध्यान न जाइ ॥

ज्यूं जल भीन हेत करि जानि, प्रांन तजै बिसरै नहीं बांनि ॥

भ्रिगी कीट रहै ल्यौ लाइ, हूँ लै लीन भ्रिग हूँ जाइ ॥

राम नाम निज अमृत सार, सुमरि सुमिरि जन उतरे पार ॥

कहै कबीर दासनि कौ दास,

अब नहीं छाडौं हरि क चरन निवास ॥ ३६३ ॥

[राग सारंग]

यहु ठग ठगत सकल जग डौलै,

गवन करै तब मुषह न बोलै ॥ टेक ॥

तूँ मेरौ पुरिषा हँ तेरी नारी, तुम्ह चलतै पाथर थै भारी ॥
बालपनां के मीत हमारे, हमहि छाड़ि कत चले हो निनारे ॥
हम सूँ प्रीति न करि री बौरी, तुम्हसे केते लागे डौरी ॥
हम काहू संगि गये न आये, तुम्ह से गढ हम बहुत बसाये ॥
माटी की देही पवन सरीरा, ता ठग सूँ जन डरै कबीरा ॥३८४॥

धनि सो घरी महरत्य दिनां,

जब ग्रिह आये हरि के जनां ॥ टेक ॥

दरसन देखत यहु फल भया, नैनं पटल दूरि हूँ गया ॥
सब्द सुनत संसा सब छूटा, श्रवन कपाट बजर था तूटा ॥
परसत घाट फेरि करि घड़ा, काया कर्म सकल भड़ि पड़ा ॥
कहै कबीर संत भल भाया, सकल सिरोमनि घट में पाया ॥३८५॥

[राग मलार]

जतन बिन मृगनि खेत उजारे ।

टारे टरत नहीं निस बासुरि, विडरत नहीं विडारे ॥ टेक ॥

अपने अपने रस के लोभी, करतव न्यारे न्यारे ।
अति अभिमान बढ़त नहीं काहू, बहुत लोग पचि हारे ॥
बुधि मेरी किरषी, गुर मेरौ बिभुका, अखिर दोइ रखवारे ।
कहै कबीर अब खान न दैहूँ, बरियां भली संभारे ॥ ३८६ ॥

हरि गुन सुमरि रे नर प्राणी ।

जतन करत पतन है जैहै, भावै जाणम जाण्यौ ॥ टेक ॥

छीलर नीर रहै धूँ कैसै, को सुपिनै सच पावै ।

सूकित पांन परत तरवर थै, उलटि न तरवरि आवै ॥
जल थल जीव डहके इन माया, कोई जन उवर न पावै ।
राम अधार कहत हैं जुगि जुगि, दास कबीरा गावै ॥ ३६७ ॥

[राग धनाश्री]

जपि जपि रे जीयरा गोव्यं दे, हित चित परमानंदे रे ।
बिरही जन कौ बाल है, सब सुख आनंदकंदे रे ॥ टेक ॥
धन धन भीखत धन गयौ, सो धन मिल्यौ न आये रे ।
ज्युं बन फूली मालती, जन्म अविरथा जाये रे ॥
प्राणीं प्रीति न कीजिये, इहि भूठै संसारो रे ।
धूवां केरा धौलहर, जात न लागै बारो रे ॥
माटी केरा पूतला, काहे गीरब कराये रे ।
दिवस चारि कौ पेखनौं, फिरि माटी मिलि जाये रे ॥
कामीं राम न भावई, भावै बिषै विकारो रे ।
लोह नाव पाहन भरी, बूडत नाहीं बारो रे ॥
नां मन मूवा न मरि सक्या, नां हरि भजि उतरया पारो रे ।
कबीरा कंचन गहि रह्यौ, काच गहै संसारो रे ॥ ३६८ ॥

न कछु रे न कछू राम बिनां ।

सरीर धरे की रहै परमगति, साध संगति रहनां ॥ टेक ॥
मंदिर रचत मास दस लागे, बिनसत एक छिनां ।
भूठे सुख कौ कारनि प्राणीं, परपंच करत घनां ॥
तात मात सुत लोग कुटंब मैं, फूल्यो फिरत मनां ।
कहै कबीर राम भजि बैरे, छाड़ि सकल भ्रमनां ॥ ३६९ ॥

कहा नर गरबसि थोरी बात ।

मन दस नाज, टका दस गंठिया, टेढौ टेढौ जात ॥ टेक ॥
कहा लै आयौ यहु धन कोऊ, कहा कोऊ लै जात ।

दिवस चारि की है पतिसाही ज्युं बनि हरियल पात ॥
 राजा भयौ गांव सौ पाये, टका लाख दस ब्रात ।
 रावन होत लंक कौ छत्रपति, पल मैं गई बिहात ॥
 माता पिता लोक सुत बनिता, अंति न चले संगत ।
 कहै कबीर राम भजि बैरे, जनम अकारथ जात ॥ ४०० ॥

नर पछिताहुगे अंधा ।

चेति देखि नर जमपुरि जैहै, क्युं बिसरौ गोव्यंदा ॥ टेक ॥
 गरभ कुंडिनल जब तूँ बसता, उरध ध्यान ल्यौ लाया ।
 उरध ध्यान मृत मंडलि आया, नरहरि नांव भुलाया ॥
 बाल विनोद छहूं रस भीनां, छिन छिन मोह बियापै ।
 विष अमृत पहिचानन लागौ, पांच भांति रस चाखै ॥
 तरन तेज पर त्रिय मुख जोवै, सर अपसर नहीं जानै ।
 अति उदमादि महामद मातौ, पाप पुनि न पिछानै ॥
 प्यंढर कोस कुसुम भये धौला, सेत पलटि गई बांनों ।
 गया क्रोध मन भया जु पावस, काम पियास मंदांनीं ॥
 तूटी गांठि दया धरम उपज्या, काया कवल कुमिलानां ।
 मरती बेर बिसूरन लागौ, फिरि पीछै पछितानां ॥
 कहै कबीर सुनहुं रे संतौ, धन माया कछू संगि न गया ।
 आई तलब गोपाल राइ की, धरती सैन भया ॥ ४०१ ॥

लोका मति के भोरा रे ।

जौ कासी तन तजै कबीरा, तौ रामहि कहा निहोरा रे ॥ टेक ॥
 तब हम वैसे अब हम ऐसे, इहै जनम का लाहा ।
 ज्युं जल मैं जल पैसि न निकसै, यूँ दुरि मिल्या जुलाहा ॥
 राम भगति परि जाकौ हित चित, ताकौ अचिरज काहा ।
 गुर प्रसाद साध की संगति, जग जीते जाइ जुलाहा ॥

कहै कबीर सुनहुं रे संतौ, भ्रमि परै जिनि कोई ।

जस कासी तस मगहर ऊसर, हिरदै रांम सति होई ॥ ४०२ ॥

ऐसी आरती त्रिभुवन तारै,

तेज पुंज तहां प्रांन उतारै ॥ टेक ॥

पाती पंच पहुप करि पूजा,

देव निरंजन और न दूजा ॥

तनमन सीस समरपन कीन्हां,

प्रगट जेति तहां आतम लीनां ॥

दीपक ग्यांन सबद धुनि घंटा,

परंम पुरिख तहां देव अनंता ॥

परम प्रकास सकल उजियारा,

कहै कबीर मै दास तुम्हारा ॥ ४०३ ॥

(३) रमैणी

[राग सूहा]

तू सकल गहगरा, सफ सफा दिलदार दीदार ॥
तेरी कुदरति किनहूँ न जानीं, पीर मुरीद काजी मुसलमांनों ॥
देवी देव सुर नर गण गंधर्व, ब्रह्मा देव महेसुर ॥
तेरी कुदरति तिनहूँ न जानीं ॥ टेक ॥

काजी सो जो काया बिचारै, तेल दीप मैं बाती जारै ॥
तेल दीप मैं बाती रहै, जोति चीह्वि जे काजी कहै ॥
मुलनां बंग देइ सुर जानां, आप मुसला बैठा तानीं ॥
आपुन मैं जे करै निवाजा, सो मुलनां सरबत्तरि गाजा ॥
सेष सहज मैं महल उठावा, चंद सूर बिचि तारी लावा ॥
अर्ध उर्ध बिचि आनि उतारा, सोई सेष तिहूँ लोक पियारा ॥
जंगम जोग बिचारै जहूँवां, जीव सीव करि एकै ठऊवां ॥
चित चेतनि करि पूजा लावा, तेतौ जंगम नाउ कहावा ॥
जोगी भसम करै भौ मारी, सहज गह्वि बिचार बिचारी ॥
अनभै घट परचा सूं बोलै, सो जोगी निहचल कदे न डोलै ॥
जैन जीव का करहु उबारा, कौण जीव का करहु उधारा ॥
कहां बसै चौरासी का देव, लहौ मुक्ति जे जानौं भेव ॥
भगता तिरण मतै संसारी, तिरण तत ते लेहु बिचारी ॥
प्रोति जानि राम जे कहै, दास नाउ सो भगता लहै ॥
पंडित चारि बेद गुण गावा, आदि अति करि पूत कहावा ॥
उतपति परलै कहौ बिचारी, संसा घालौ सबै निवारी ॥

अरधक उरध क ये संन्यासी, ते सब लागि रहैं अबिनासी ॥
 अजरावर कौं डिट करि गहै, सो संन्यासी उन्मन रहै ॥
 जिहि धर चाल रची ब्रह्मंडा, पृथमीं मारि करी नव खंडा ॥
 अविगत पुरिस की गति लखी न जाइ, दासकबीर अगह रहे ल्यो लाई ॥१॥

(१) ख० प्रति में इसके आगे यह रमैंगी है—

[ग्रंथ वावनी]

बावन आखिर लोकत्री सब कुछि इनही मांहि ॥
 ये सब षिरि षिरि जाहिगे, सो आखिर इनमैं नांहि ॥
 तुरक मुरी कत जानिये, हिंदू बेद पुरान ॥
 मन समझन कै कारनै, कछु एक पढ़िये ज्ञान ॥
 जहां बोल तहां आखिर आवा, जहां अबोल तहां मन न लगावा
 बोल अबोल मंझि है सोई, जे कुछि है ताहि लखै न कोई ॥
 ओ अंकार आदि मैं जाना, लिखि करि मेटे ताहि न माना ॥
 ओ ऊकार करै जस कोई, तस लिखि मरेणां न होई ॥
 ककां कवल किरणिं मैं पावा, अरि ससि बिगास सेपट नहीं आवा ॥
 अस जे जहां कुसम-रस पावा, तौ अकह कहा कहि का समझावा ॥
 खखा इहै खोरि मनि आवा, खोरहिं छाड़ि चहुं दिस धावा ॥
 ख समहि जानि पिमां करि रहै, तौ हो दून पेव अखै पद लहै ॥
 गगा गुर के बचन पिछाना, दूसर बात न धरिये काना ॥
 सोई बिहगम कबहुं न जाई, अगम गहै गहि गगन रहाई ॥
 घघा घटि घटि निमसै सोई, घट फाटा घट कबहुं न होई ॥
 ता घट मांहि घाट जो पावा, सुघटि छाड़ि औघट कत आवा ॥
 नाना निरखि सनेह करि, निरवालै संदेह,
 नाहीं देखि न भाजिये, प्रेम सयानप येह ॥
 चचा चरित चित्र है भारी, तजि बिचित्र चेतहु चितकारी ॥
 चित्र बिचित्र रहै औडेर, तजि बिचित्र चित राखि चितेरा ॥
 छछा इहै छत्रपति पासा, तिहिं छाक न रहै छाड़ि करि आसा ॥
 रे मन तूं छिन छिन समझाया, तहां छाड़ि कत आप बधाया ॥
 जजा जे जानै तौ दुरमति हारी, करि बासि काया गांव ।
 रिण रोक्या भाजै नहीं, तौ सूरण थारौ नाव ॥

[सतपदी रमैणी]

कहन सुनन कौं जिहि जग कीन्हा, जग भुलांन सो किनहूँ न चीन्हां ।
सत रज तम थैं कीन्हीं माया, आपण मांभै आप छिपाया ॥
ते तौ आहि अनंद सरूपा, गुन पल्लव बिस्तार अनूपा ॥
साखा तत थैं कुलम गियांनां, फल सो आछा राम का नामां ॥

भक्ता उरभि सुरभि नहीं जाना, रहि मुखि भक्तखि भक्तखि परवाना ॥
कत भूपि भूपि औरनि समझावा भगरौं कीये भगरिवौ पावा ॥

नना निकटि जु घटि रहै, दूरि कहाँ तजि जाइ ॥

जा कारणि जग हूँढियो, नेड़ै पायौ ताहि ॥

टटा विकट घाट है माहीं, खोलि कपाट महील जब जाहीं ॥

रहै लपटि जहि घटि परयौ आई, देखि अटल टलि कतहूँ न जाई ॥

ठठा ठौर दरि ठग नीरा, नीठि नीठि मन कीया धीरा ॥

जिहि ठगि ठगि सकल जग खावा, सो ठग ठग्यौ ठौर मन आवा ॥

ढढा डर उपजै डर जाई, डरही मैं डर रह्यौ समाई ॥

जो डर डरै तौ फिरि डर लागै, निडर होइ तौ डरि डर भागै ॥

ढढा ढिग कत हूँढे आना, हूँढत हूँढत गये पराना ॥

चढि सुमेर हूँढि जग आवा, जिहि गढ गढ्या सुगढ मैं पावा ॥

णणारि णरुं तौ नर नाहीं करै, ना फुनि नवै न संचरै ॥

धनि जनम ताहीं कौ गिणां, मेरे एक तजि जाहि घणां ॥

तता अतिर तिस्यौ नहीं गाई, तन त्रिभुवन में रह्यौ समाई ॥

जे त्रिभुवन तन मोहि समावै, तौ ततैं तन मिल्या सचुपावै ॥

थथा अथाह थाह नहीं आवा, वो अथाह यहु थिरि न रहावा ॥

थोरै थलि थानै आरंभै, तौ बिनहीं थंभै मंदिर थंभै ॥

ददा देखि जुरे विनसन हार, जस न देखि तस राखि विचार ॥

दसवै द्वारि जब कूंची दीजै, तब दयाल को दरसन कीजै ॥

धधा अरधैं उरध न बेरा, अरधैं उरधैं मंझि बसेरा ॥

अरधैं त्यागि उरध जब आवा, तब उरधैं छाँड़ि अरध कत धावा ॥

नना निस दिन निरखत जाई, निरखत नैन रहे रतवाई ॥

निरखत निरखत जब जाइ पावा, तब ले निरखै निरख मिलावा ॥

सदा अचेत चेत जीव पंखी, हरि तरवर करि बास ।

भूठै जगि जिनि भूलसि जियरे, कहन सुनन की आस ॥

सूक बिरख यहु जगत उपाया, समझि न परै बिखम तेरी माया ॥

साखा तीनि पत्र जुग चारी, फल दोइ पाप पुंनि अधिकारी ॥

सगद अनेक कथ्या नहीं जांहीं, किया चरित सो इन में नांहीं ॥

पपा अपार पार नहीं पावा, परम जोति सौं परयो आवा ॥

पांचौं इंद्रि निग्रह करै, तब पाप पुंनि दोऊ न संचरै ॥

फफा बिन फूलां फल होई, ता फल फंफ लहै जो कोई ॥

दूंगी न पड़ै फूंक विचारे, ताकी फूंक सबै तन फारै ॥

बबा बंदहि बंद मिलावा, बंदहि बिंद न बिलुरन पावा ॥

जे बंदा बंदि गहि रहै, तौ बंदिग होइ सबै बंद लहै ॥

भभा भेदै भेद नहीं पावा, अरभै भांनि ऐसो आवा ॥

जो बाहिरि सो भीतरि जाना, भयौ भेद भूपति पहिचाना ॥

ममां मन सौ काज है, मनमान्यां सिधि होइ ॥

मनहीं मन सौं कहै कबीर, मन सौं मिल्या न कोइ ॥

ममां भूल गह्यां मन माना, मरमी होइ सु मरमही जाना ॥

मति कोई मन सौं मिलता बिलमावै, मगन भया तैं सोगति पावै ॥

जजा सुतन जीवतहीं जरावै, जोबन जारि जुगति सो पावै ॥

अ संजरि बुजरि जरि वरिहै, तब जाइ जोति उजारा लहै ॥

ररा सरस निरस करि जानै, निरस होइ सुरस करि मानै ॥

यहु रस बिसरै सो रस होई, सो रस रसिक लहै जे कोई ॥

लला लहौ तौ भेद है, कहूँ तौ कौ उपगार ॥

बटक बीज में रमि रह्या, ताका तीन लोक विस्तार ॥

ववा वोइहि जाणिये, इहि जाण्यां वो होइ ॥

वोइ अस यहु जबहीं मिल्या, तब मिलत न जाणै कोइ ॥

ससा सो नीका करि सोचै, घट परया की बात निरोधै ॥

घट परथौ जे उपजै भाव, मिलै ताहि त्रिभुवनपति राव ॥

षषा खोजि परे जे कोई, जे खोजै सो बहुरे न होई ॥

घोजि बूझि जे करै बिचार, तौ भौ-जल तिरत न लागे बार

तैतौ आहि निनार निरंजनां, आदि अनादि न आन ।

कहन सुनन कौं कीन्ह जग, आपै आप भुलान ॥

जिनि नटवै नटसारी साजी, जो खेलै सो दीसै बाजी ॥

मो अपरा थै जोगति ढाठी, सिव त्रिरं चि नारद नहीं दीठी ॥

आदि अंति जो लीन भये हैं, सहजें जानि संतोखि रहै हैं ॥

सहजें राम नाम ल्यौ लाई, राम नाम कहि भगति दिवाई ॥

राम नाम जाका मन मानां, तिनि तौ निज सरूप पहिचानां ॥

निज सरूप निरंजनां, निराकार अपरं पार अपार ।

राम नाम ल्यौ लाइस जियरे, जिनि भूलै बिस्तार ॥

करि विसतार जग धंधै लाया, अंग काया थै पुरिष उपाया ॥

जिहि जैसी मनसा तिहि तैसा भावा, ताकूं तैसा कीन्ह उपावा ॥

तैतौ साया मोह भुलानां, खसम राम सो किनहुं न जानां ॥

जिनि जान्यां ते निरमल अंगा, नहीं जान्यां ते भये भुजंगा ॥

ता मुखि बिष आवै बिष जाई, ते बिष ही बिष में रहै समाई ॥

माता जगत भूत सुधि नाहीं, अंमि भूले नर आवै जाहीं ॥

जानि बूझि चेतै नहीं अंधा, करम जठर करम के फंधा ॥

ससा शोई शोज नू वारै, शोई शाब शदेह निवारै ॥

अति सुख विशरै परम सुख पावै, शो अस्त्री सो कंत कहावै ॥

हहा होइ होत नहीं जानै, जब होइ तबै मन मानै ॥

है तो सही लहै जे कोई, जब वो होइ तब यहु न होई ॥

ससा उन मन से मन लावै, अनत न जाइ परम सुख पावै ॥

अरु जे तहां प्रेम ल्यौ लावै, तो डालह लहै लैहि चरन समावै ॥

पषा पिरत पपत नहीं चेतै, पपत पपत गये जुग कैसे ॥

अब जुग जानि जोरि मन रहै, तौ जहां थै बिडुर्यौ सो थिर लहै ॥

बावन अपिर जोरै आनि, एको अपिर सक्या न जानि ॥

सति का शब्द कबीरा कहै, पूछै जाई कहां मन रहै ॥

पंडित लोगनि कौ बौहार, ग्यानवत कौ तन बिचारि ॥

जाकै हिरदै जैसी होई, कहै कबीर लहैगा सोई ॥ २ ॥

करंम का बांध्या जीयरा, अह निसि आवै जाइ ।

मनसा देही पाइ करि, हरि बिसरै तौ फिर पीछै पछिताइ ॥
तौ करि त्राहि चेति जा चंधा, तजि परकीरति भजि चरन गोब्यंदा ॥
उदर कूप तजौ ग्रभ वासा, रे जीव रांम नांम अभ्यासा ॥
जगि जीवन जैसैं लहरि तरंगा, खिन सुख कूं भूलसि बहु संगी ॥
भगति कौ हीन जीवन कछु नाहीं, उत्पति परलै बहुरि समाहीं ॥
भगति हीन अस जीवनां, जन्म मरन बहु काल ।

आश्रम अनेक करसि रे जियरा, रांम बिनां कोइ न करै प्रतिपाल ॥
सोई उपाव करि यहु दुख जाई, ए सब परहरि बिसै सगाई ॥
माया मोह जरै जग आगी, ता संगि जरसि कवन रस लागी ॥
त्राहि त्राहि करि हरी पुकारा, साध संगति मिलि करहु बिचारा ॥
रे रे जीवन नहीं बिश्रामां, सब दुख खंडन रांम कौ नामां ॥
रांम नाम संसार मैं सारा, रांम नाम भौ तारनहारा ॥

सुम्रित बेद सबै सुनें, नहीं आवै कृत काज ।

नहीं जैसैं कुंडिल वनित मुख, मुख सोभित बिन राज ॥
अब गहि रांम नाम अबिनासी, हरि तजि जिनि कतहूं कै जासी ॥
जहां जाइ तहां तहां पतंगा, अब जिनि जरसि समझि बिष संगी ॥
चोखा रांम नाम मनि लीन्हां, भ्रिगी कीट भयंन नहीं कीन्हां ॥
भौसागर अति बार न पारा, ता तिरबे का करहु बिचारा ॥
मनि भावै अति लहरि बिकारा, नहीं गमि सूझै बार न पारा ॥

भौसागर अथाह जल, तामैं बोहिथ रांम अधार ।

कहै कबीर हम हरि सरन, तब गोपद खुर बिस्तार ॥ २ ॥

[बड़ी अष्टपदी रमैणी]

एक बिनांनो रच्यो बिनांन, सद अयान जो आपै जान ॥
सत रज तम थैं कीन्हीं माया, चारि खानि बिस्तार उपाया ॥

पंच तत ले कीन्ह बंधानं, पाप पुनि मान अभिमानं ॥
 अहंकार कीन्हें माया मोहू, संपति बिपति दीन्हों सब काहू ॥
 भले रे पोच अकुल कुलवन्तां, गुंणी निरगुणीं धन नीधनवन्तां ॥
 भूख पियास अनहित हित कीन्हां, हेत मोर तोर करि लीन्हां ॥
 पंच स्वाद ले कीन्हां बंधू, बंधे करम ओ आहि अबंधू ॥
 अवर जीव जंत जे आहीं, संकुट सोच बियापै ताहीं ॥
 निंदा अस्तुति मान अभिमाना, इनि भूठै जीव हत्या गिर्यानां ॥
 बहु बिधि करि संसार भुलावा, भूठै दोजगि साच लुकावा ॥
 माया मोह धन जोबनां, इनि बंधे सब लोइ ।
 भूठै भूठ बियापिया कबीर, अलख न लखई कोइ ॥
 भूठनि भूठ साच करि जानां, भूठनि मैं सब साच लुकांनां ॥
 धंध बंध कीन्ह बहुतेरा, क्रम बिबर्जित रहै न नेरा ।
 षट दरसन आश्रम षट कीन्हां, षट रस खाटि कांम रस लोन्हां ॥
 चारि बेद छह साख बखानै, बिद्या अनंत कथै को जानै ॥
 तप तीरथ कीन्हें व्रत पूजा, धरम नेम दान पुन्य दूजा ॥
 और अगम कीन्हें व्यौहारा, नहीं गमि सूझै वार न पारा ॥
 लीला करि करि भेख फिरावा, ओट बहुत कछू कहत न आवा ॥
 गहन व्यंद कछू नहीं सूझै, आपन गोप भयो आगम बूझै ॥
 भूलि परगै जीव अधिक डराई, रजनीं अंधकूप हूँ आई ॥
 माया मोह उनवै भरपूरी, दादुर दामिनि पवनां पूरी ॥
 तरिपै बरिषै अखंड धारा, रैनि भांमनीं भया अधियारा ॥
 तिहि बिबेग तजि भये अनाथा, परे निकुंज न पावै पंथा ॥
 बेद न आहि कहूं को मानै, जानि बूझि मैं भया अयानै ॥
 नट बहु रूप खेलै सब जानै, कला कर गुन ठाकुर मानै ॥
 ओ खेलै सब ही घट मांहीं, दूसर कै लेखै कछू नाहीं ॥
 जाके गुन सोई पै जानै, और को जानै पार अयानै ॥

भले रे पोच औसर जब आवा, करि सनमान पुरि जम पावा ॥
 दान पुन्य हम दिहूं निरासा, कब लग रहूँ नटार'भ काछा ॥
 फिरत फिरत सब चरन तुरानै', हरि चरित अगम कथै को जानै' ॥
 गण गंधप मुनि अंत न पावा, रह्यौ अलख जग धंधै लावा ॥
 इहि बाजी सिव बिरंचि भुलांनां, और बपुरा को क्यंचित जानां ॥
 त्राहि त्राहि इम कीन्ह पुकारा, राखि राखि साई' इहि बारा ॥
 कोटि ब्रह्मंड गहि दीन्ह फिराई, फल कर कीट जनम बहुताई ॥
 ईस्वर जोग खरा जब लीन्हां, दर्यौ ध्यान तप खंड न कीन्हां ॥
 सिध साधिक उनथै' कहु कोई, मन चित अस्थिर कहु कैसै' होई ॥
 लीला अगम कथै को पारा, बसहु समीप कि रहौ निनारा ॥

खग खोज पीछै' नहीं, तू' तत अपर'पार ।

बिन परचै का जानियै', सब भूठे अह'कार ॥

अलख निरंजन लखै न कोई, निरभै निराकार है सोई ॥
 सु'नि असथूल रूप नहीं रेखा, द्विष्टि अद्विष्टि छिप्यौ नहीं पेखा ॥
 बरन अबरन कथ्यौ नहीं जाई, सकल अतीत घट रह्यौ समाई ॥
 आदि अंति ताहि नहीं मधे, कथ्यौ न जाई आहि अकथे ॥
 अपर'पार उपजै नहीं बिनसै, जुगति न जानियै' कथिये कैसै ॥

जस कथिये तस होत नहीं, जस है तैसा सोइ ।

कहत सुनत सुख उपजै, अरु परमारथ होइ ॥

जानसि नहीं कस कथसि अयांनां, हम निरगुन तुम्ह सरगुन जानां ॥
 मति करि हीन कवन गुन आहीं, लालचि लागि आसिरै रह्यौ ॥
 गुन अरु ग्यान दोऊ हम हीनां, जैसी कुछ बुधि बिचार तस कीन्हां ॥
 हम मसकीन कछू जुगति न आवै, जे तुम्ह दरवौ तौ पुरि जन पावै ॥
 तुम्हारे चरन कवल मन राता, गुन निरगुन के तुम्ह निज दाता ॥
 जहुवां प्रगटि बजावहु जैसा, जस अनभै कथिया तिनि तैसा ॥
 बाजै अंत्र नाद धुनि होई, जे बजावै सो औरै कोई ॥

बाजी नाचै कौतिग देखा, जो नवावै सो किनहूँ न पेखा ॥

आप आप थै' जानियै', है पर नाहीं सोइ ।

कबीर सुपिनै' केर धन ज्यूं, जागत हाथि न होइ ॥

जिनि यहु सुपिनां फुर करि जानां, और सबै दुखयादि न आनां ॥

ग्यांन हीन चेतै नहीं सूता, मैं जाग्या विष हर भै भूता ॥

पारधी बांन रहै सर सांधे', विषम बांन मारै विष बांधे' ॥

काल अहेड़ो संभ सकारा, सावज ससा सकल संसारा ॥

दावानल अति जरै विकारा, माया मोह रोकि ले जारा ॥

पवन सहाइ लोभ अति भइया, जम चरचा चहुं दिसि फिरि गइया ॥

जम के चर चहुं दिसि फिरि लागे, हंस पंखेरूवा अब कहां जाइबे ॥

केस गहैं कर निस दिन रहई, जब धरि ऐंचै तब धरि चहई ॥

कठिन पासि कछू चलै न उपाई, जंम दुवारि सीभे सब जाई ॥

सोई त्रास सुनि रांम न गावै, मृगत्रिष्णां भूठी दिन धावै ॥

मृत काल किनहूँ नहीं देखा, दुख कौं सुख करि सबही लेखा ॥

सुख करि मूल न चीन्हसि अभागी, चीन्हैं बिनां रहै दुख लागी ॥

नींब काट रस नींब पियारा, यूं विष कूं अमृत कहै संसारा ॥

विष अमृत एकै करि मांनं, जिनि चीन्हयां तिनहीं सुख मांनं ॥

अछित राज दिन दिनहि सिराई, अमृत परहरि करि विष खाई ॥

जानि अजानि जिन्है विष खावा, परे लहरि पुकारै' धावा ॥

विष के खांयें का गुंन होई, जा बेद न जानै' परि सोई ॥

मुरछि मुरछि जीव जरिहै आसा, कांजी अलप बहु खीर बिनासा ॥

तिल सुख कारनि दुख अस मेरू, चौरासी लख लीया फेरू ॥

अलप सुख दुख आहि अनंता, मन मैंगल भूल्यौ मैमंता ॥

दीपक जोति रहै इक संगी, नैन नेह मांनूं परै पतंगा ॥

सुख विश्राम किनहूँ नहीं पावा, परहरि साच भूठ दिन धावा ॥

लालच लागे जनम सिरावा, अंति काल दिन आइ तुरावा ॥

जब लग है यहु निज तन सोई, तब लग चेति न देखै कोई ॥
जब निज चलि करि किया पर्यानां, भयौ अकाज तब फिरि पछितानां ॥

मृगत्रिष्णां दिन दिन ऐसी, अब मोहि कछु न सुहाइ ।

अनेक जतन करि टारिये, करम पासि नहीं जाइ ॥

रे रे मन बुधिवंत भंडारा, आप आप ही करहु बिचारा ॥

कवन सयांन कौन बौराई, किहि दुख पइये किहि दुख जाई ॥

कवन हरिख कौ विष मैं जानां, को अनहित को हित करि मानां ॥

कवन सार को आहि असारा, को अनहित को आहि पियारा ॥

कवन साच कवन है भूठा, कवन करुं को लागै मोठा ॥

किहि जरियै किहि करियं अनंदा, कवन मुक्ति कां गल के फंदा ॥

रे रे मन मोहि व्यौरि कहि, हैं तत पृछौं तोहि ।

संसै सुल सबै भई, समझाई कहि मोहि ॥

सुनि हंसा मैं कहूँ बिचारी, त्रिजुग जानि सबै अधियारी ॥

मनिषा जन्म उत्तिम जौ पावा, जानूं राम तौ सयांन कहावा ॥

नहीं चेतै तौ जनम गंमावा, पर्यौं बिहान तब फिरि पछतावा ॥

सुख करि मूल भगति जौ जानै, और सबै दुख या दिन आनै ॥

अमृत केवल राम पियारा, और सबै विष कं भंडारा ॥

हरिख आहि जौ रमियै रामां, और सबै बिसमां के कामां ॥

सार आहि संगति निरवानां, और सबै असार करि जानां ॥

अनहित आहि सकल संसारा, हित करि जानियै राम पियारा ॥

साच सोई जे थिरह रहाई, उपजै बिनसै भूठ हूँ जाई ॥

मीठा सो जो सहजै पावा, अति कलेस थै करु कहावा ॥

नां जरियै नां कीजै मैं मेरा, तहां अनंद जहां राम निहोरा ॥

मुक्ति सोज आपा पर जानै, सो पद कहा जु भरमि भुलानै ॥

प्रांननाथ जग जीवनां, दुरलभ राम पियार ।

सुत सरीर धन प्रग्रह कबीर, जीये रे तर्वर पंख बसियार ॥

रे रे जीय अपनां दुख न संभारा, जिहिं दुख व्याप्या सब संसारा ॥
 माया मोह भूलै सब लोई, क्यंचित लाभ मानिक दायी खोई ॥
 मैं मेरी करि बहुत बिगूता, जननीं उदर जन्म का सूता ॥
 बहुतै रूप भेष बहु कीन्हां, जुरा मरन क्रोध तन खीनां ॥
 उपजै बिनसै जोनि फिराई, सुख कर मूल न पावै चाही ॥
 दुख संताप कलेस बहु पावै, सो न मिलै जे जरत बुझावै ॥
 जिहि हित जीव राखिहै भाई, सो अनहित हूँ जाइ बिलाई ॥
 मोर तोर करि जरे अपारा, मृग त्रिष्णां भूठी संसारा ॥
 माया मोह भूठ रह्यौ लागी, का भयौ इहां का हैहै आगी ॥
 कछु कछु चेति देखि जीव अबही, मनिषा जनम न पावै कबही ॥
 सार आहि जे संग पियारा, जब चेतै तब ही उजियारा ॥
 त्रिजुग जोनि जे आहि अचेता, मनिषा जनम भयौ चित चेता ॥
 आतमां मुरछि मुरछि जरि जाई, पिछले दुख कहतां न सिराई ॥
 सोई त्रास जे जानै हंसा, तौ अजहूं न जीव करै संतोसा ॥
 भौसार अति वार न पारा, ता तिरबे का करहु विचारा ॥
 जा जल की आदि अंति नहो जानियै, ताकौ डर काहे न मानियै ॥
 को बोहिथ को खेवट आही, जिहिं तिरिये सो लीजै चाही ॥
 समझि विचारि जीव जब देखा, यहु संसार सुपन करि लेखा ॥
 भई बुधि कछू ग्यांन निहारा, आप आप ही किया विचारा ॥
 आपण मैं जे रह्यौ समाई, नेडै दूरि कथ्यौ नहीं जाई ॥
 ताके चीन्है परचौ पावा, भई समझि तासूं मन लावा ॥

भाव भगति हित बोहिथा, सतगुर खेवनहार ।

अलप उदिक तब जांणियं, जब गोपदखुर बिस्तार ॥ ३ ॥

[दुपदी रमैणी]

भया दयाल बिषहर जरि जागा, गहगहान प्रेम बहु लागा ॥
 भया अनंद जीव भये उल्हासा, मिले राम मनि पृगी आसा ॥

मास असाढ़ रवि धरनि जरावै, जरत जरत जल आइ बुझावै ॥
 रुति सुभाइ जिमीं सब जागी, अमृत धार होइ भर लागी ॥
 जिमीं मांहिं उठी हरियाई, बिरहनि पीव मिले जन जाई ॥
 मनिकां मनि कै भये उठाहा, कारनि कौन बिसारी नाहा ॥
 खेल तुम्हारा मरन भया मोरा, चौरासी लख कीन्हां फेरा ॥
 सेवग सुत जे होइ अनिआई, गुन औगुन सब तुम्ह समाई ॥
 अपने औगुन कहूँ न पारा, इहै अभाग जे तुम्ह न संभारा ॥
 दरबो नहीं कांइ तुम्ह नाहा, तुम्ह बिछुरै मैं बहु दुख चाहा ॥
 मेघ न बरिखै जांहिं उदासा, तऊ न सारंग सागर आसा ॥
 जलहर भरयो ताहि नहीं भावै, कै मरि जाइ कै उहै पियावै ॥
 मिलहु रांम मनि पुरवहु आसा, तुम्ह बिछुरां मैं सकल निरासा ॥
 मैं रनिरासी जव निध्य पाई, रांम नाम जीव जाग्या जाई ॥
 नलनीं कै ज्यू नीर अधारा, खिर बिछुरां थै रवि प्रजारा ॥
 रांम बिनां जीव बहुत दुख पावै, मन पतंग जगि अधिक जरावै ॥
 माघ मास रुति कवलि तुसारा, भयौ बसंत तब वाग संभारा ॥
 अपने रंगि सब कोइ राता, मधुकर बास नेहि मैमंता ॥
 बन कोकिला नाद गहगहानां, रुति बसंत सब कै मनि मानां ॥
 बिरहन्य रजनीं जुग प्रति भइया, बिन पीव मिलें कलप टलि गइया ॥
 आतमां चेति समझि जीव जाई, बाजी भूठ रांम निधि पाई ॥
 भया दयाल निति बाजहिं बाजा, सहजै रांम नाम मन राजा ॥

जरत जरत जल पाइया, सुख सागर कर मूल ।

गुर प्रसादि कबीर कहि, भागी संसै सुल ॥

रांम नाम निज पाया सारा, अविरथा भूठ सकल संसारा ॥
 हरि एतंग मैं जाति पतंगा, जबकु केहरि कै ज्यू संग ॥
 क्यंचिति हूँ सुपिनै निधि पाई, नहीं सोभा कौं धरौं लुकाई ॥
 हिरदै न समाइ जानियै नहीं पारा, लागै लोभ न और हकारा ॥

सुमिरत हूँ अपनैँ उनमानां, क्यंचित जोग रांम में जानां ॥
 मुखां साध का जानियैँ असाधा, क्यंचित जोग रांम में लाधा ॥
 कुबिज होइ अमृत फल बंछ्या, पहुँचा तब मनि पूगी इच्छ्या ।
 नियर थैँ दूरि दूरि थैँ नियरा, रांम चरित न जानियैँ जियरा ॥
 सीत थैँ अगनि फुनि होई, रबि थैँ ससि ससि थैँ रबि सोई ॥
 सीत थैँ अगनि परजरई, थल थैँ निधि निधि थैँ थल करई ॥
 बज्र थैँ तिण खिण भीतरि होई, तिण थैँ कुलिस करै फुनि सोई ॥
 गिरवर छार छार गिरि होई, अविगति गति जानैँ नहीं कोई ॥
 जिहि दुरमति डौल्यौ संसारा, परे असूझि वार नहीं पारा ॥
 बिख अमृत एकै करि लीन्हां, जिनि चीन्हां सुख तिहकूँ हरि दोन्हां ।
 सुख दुख जिनि चोन्हां नहीं जानां, ग्रासे काल सोग रुति मानां ॥
 होइ पतंग दीपक में परई, भूठै स्वादि लागि जीव जरई ॥
 कर गहि दीपक परहि जु कूपा, यहु अचिरज हम देखि अनूपा ॥
 ग्यांनहीन ओछी मति बाधा, मुखां साध करतूति असाधा ॥
 दरसन समि कछू साधन होई, गुर समान पूजिये सिध सोई ॥
 भेष कहा जे बुधि बिसुधा, बिन परचै जग बूड़नि बूड़ा ॥
 जदपि रबि कहिये सुर आही, भूठै रबि लीन्हां सुर चाही ॥
 कबहूँ हुतासन होइ जरावै, कबहूँ अखंड धार बरिषावै ॥
 कबहूँ सीत काल करि राखा, तिहूँ प्रकार बहुत दुख देखा ।
 ताकूँ सेवि मूढ़ सुख पावै, दैारै लाभ कूँ मूल गवावै ॥
 अछित राज दिने दिन होई, दिवस सिराइ जनम गये खोई ॥
 मृत काल किनहूँ नहीं देखा, माया मोह धन अगम अलेखा ॥
 भूठै भूठ रह्यौ उरभाई, साचा अलख जग लख्या न जाई ॥
 साचै नियरै भूठै दूरी, बिष कूँ कहै सजीवनि मूरी ॥
 कश्यौ न जाइ नियरै अरु दूरी, सकल अतीत रह्या घट पूरी ॥
 जहां देखौं तहां रांम समानां, तुम्ह बिन ठैार और नहीं आनां ॥

मास असाढ़ रवि धरनि जरावै, जरत जरत जल भाइ बुझावै ॥
 रुति सुभाइ जिमीं सब जागी, अमृत धार होइ भर लागी ॥
 जिमीं माहिं उठी हरियाई, बिरहनि पीव मिले जन जाई ॥
 मनिकां मनि कै भये उडाहा, कारनि कौन बिसारी नाहा ॥
 खेल तुम्हारा मरन भया मोरा, चौरासी लख कीन्हां फेरा ॥
 सेवग सुत जे होइ अनिआई, गुन औगुन सब तुम्ह समाई ॥
 अपने औगुन कहूँ न पारा, इहै अभाग जे तुम्ह न संभारा ॥
 दरबो नहीं कांइ तुम्ह नाहा, तुम्ह बिछुरै मैं बहु दुख चाहा ॥
 मेघ न बरिखै जाहिं उदासा, तऊ न सारंग सागर आसा ॥
 जलहर भरयो ताहि नहीं भावै, कै मरि जाइ कै उहै पियावै ॥
 मिलहु राम मनि पुरवहु आसा, तुम्ह बिछुरां मैं सकल निरासा ॥
 मैं रनिरासी जब निध्य पाई, राम नाम जीव जाग्या जाई ॥
 नलनों कै ज्युं नीर अधारा, खि र बिछुरां थै रवि प्रजारा ॥
 राम बिनां जीव बहुत दुख पावै, मन पतंग जगि अधिक जरावै ॥
 माघ मास रुति कवलि तुसारा, भयो बसंत तब वाग संभारा ॥
 अपने रंगि सब कोइ राता, मधुकर बास नेहि मैमंता ॥
 बन कोकिला नाद गहगहानां, रुति बसंत सब कै मनि मानां ॥
 बिरहन्य रजनों जुग प्रति भइया, बिन पीव मिले कलप टलि गइया ॥
 आतमां चेति समझि जीव जाई, बाजी भूठ राम निधि पाई ॥
 भया दयाल निति बाजहिं बाजा, सहजै राम नाम मन राजा ॥

जरत जरत जल पाइया, सुख सागर कर मूल ।

गुर प्रसादि कबीर कहि, भागी संसै सुल ॥

राम नाम निज पाया सारा, अविरथा भूठ सकल संसारा ॥
 हरि एतंग मैं जाति पतंगा, जबकु केहरि कै ज्युं संगी ॥
 क्यंचिति हूँ सुपिनै निधि पाई, नहीं सोभा कौं धरौं लुकाई ॥
 हिरदै न समाइ जानियै नहीं पारा, लागै लोभ न और हकारा ॥

सुमिरत हूँ अपनैँ उनमानां, क्यंचित जोग रांम में जानां ॥
 मुखां साध का जानियैँ असाधा, क्यंचित जोग रांम में लाधा ॥
 कुबिज होइ अमृत फल बंछया, पहुँचा तब मनि पूगी इच्छया ।
 नियर थैँ दूरि दूरि थैँ नियरा, रांम चरित न जानियैँ जियरा ॥
 सीत थैँ अगनि फुनि होई, रबि थैँ ससि ससि थैँ रबि सोई ॥
 सीत थैँ अगनि परजरई, थल थैँ निधि निधि थैँ थल करई ॥
 बज्र थैँ तिण खिण भीतरि होई, तिण थैँ कुलिस करै फुनि सोई ॥
 गिरवर छार छार गिरि होई, अविगति गति जानैँ नहीं कोई ॥
 जिहि दुरमति डौल्यौ संसारा, परे असूझि वार नहीं पारा ॥
 बिख अमृत एकै करि लीन्हां, जिनि चीन्हां सुख तिहकूँ हरि दीन्हां ।
 सुख दुख जिनि चीन्हां नहीं जानां, ग्रासे काल सोग रुति मानां ॥
 होइ पतंग दीपक में परई, भूठै स्वादि लागि जीव जरई ॥
 कर गहि दीपक परहि जु कूपा, यहु अचिरज हम देखि अनूपा ॥
 ग्यांनहीन ओछी मति बाधा, मुखां साध करतूति असाधा ॥
 दरसन समि कछू साधन होई, गुर समान पूजिये सिध सोई ॥
 भेष कहा जे बुधि बिसुधा, बिन परचै जग बूड़नि बूड़ा ॥
 जदपि रबि कहिये सुर आही, भूठै रबि लीन्हां सुर चाही ॥
 कबहूँ हुतासन होइ जरावै, कबहूँ अखंड धार बरिषावै ॥
 कबहूँ सीत काल करि राखा, तिहूँ प्रकार बहुत दुख देखा ।
 ताकूँ सेवि मूढ़ सुख पावै, दैरै लाभ कूँ मूल गवावै ॥
 अछित राज दिने दिन होई, दिवस सिराइ जनम गये खोई ॥
 मृत काल किनहूँ नहीं देखा, माया मोह धन अगम अलेखा ॥
 भूठै भूठ रह्यौ उरभाई, साचा अलख जग लख्या न जाई ॥
 साचै नियरै भूठै दूरी, बिष कूँ कहै सजीवनि मूरी ॥
 कश्यौ न जाइ नियरै अरु दूरी, सकल अतीत रह्या घट पूरी ॥
 जहां देखौं तहां रांम समानां, तुम्ह बिन ठैर और नहीं आनां ॥

जदपि रह्या सकल घट पूरी, भाव बिनां अग्नि-अंतरि दूरी ।
लोभ पाप दोऊ जरैं निरासा, भूठै भूठि लागि रही आसा ॥
जहुवां ह्वै निज प्रगट बजावा, सुख संतोष तहां हम पावा ॥
नित उठि जस कीन्ह परकासा, पावकरहै जैसें काष्ट निवासा ॥
बिनां जुगति कैसें मथिया जाई, काष्टै पावक रह्या समाइ ॥
कष्टे कष्ट अग्नि पर जरई, जारै दार अग्नि समि करई ॥
ज्यूं रांम कहै ते रांमैं होई, दुख कलेस घालै सब खोई ॥
नन्म के कलि विष जाहिं बिलाई, भरम करम का कछु न बसाई ॥
भरम करम दोऊ बरतै लोई, इनका चरित न जानै कोई ॥
इन दोऊ संसार भुलावा, इनके लागे ग्यांन गंवावा ॥
इनका मरम पै सोई विचारी, सदा अनंद लै लीन मुरारी ॥
ग्यांन द्विष्टि निज पेखै जोई, इनका चरित जानै पै सोई ॥
ज्यूं रजनीं रज देखत अंधियारी, उसे भुवंगम बिन उजियारी ॥
तारे अग्नित गुनहिं अपारा, तऊ कछु नहीं होत अधारा ॥
भूठ देखि जीव अधिक डराई, बिनां भवंगम डसी दुनियाई ॥
भूठै भूठ लागि रही आसा, जेठ मास जैसें कुरंग पियासा ॥
इक त्रिषावत दह दिसि फिर आवै, भूठै लागा नीर न पावै ॥
इक त्रिषावत अरु जाइ जराई, भूठी आस लागि मरि जाई ॥
नीभर नीर जानि परहरिया, करम के बांधे लालच करिया ॥
कहै मोर कछु आहि न वाही, भरम करम दोऊ मति गवाई ॥
भरम करम दोऊ मति परहरिया, भूठै नाऊ साच ले धरिया ॥
रजनीं गत भई रवि परकासा, भरम करम धूं कोर बिनासा ॥
रवि प्रकास तारे गुन खीनां, आचार व्यौहार सब भये मलीनां ॥
विष के दाधे विष नहीं भावै, जरत जरत सुखसागर पावै ॥
अनिल भूठ दिन धावै आसा, अंध दुरगंध सहै दुख त्रासा ॥
इक त्रिषावत दुसरै रवि तपई, दह दिसि ज्वाला चहुं दिसि जराई ॥

करि सनमुखि जब ग्यांन बिचारी; सनमुखि परिया अगनि मंभारी।
 गछत गछत जब आगै' आवा, बित उनमानि ठिबुवा इक पावा ॥
 सीतल सरीर तन रह्या समाई, तहां छाड़ि कत दाभै जाई ॥
 यूं मन बारुनि भया हंमारा, दाधा दुख कलेस संसारा ॥
 जरत फिरे चौरासी लेखा, सुख कर मूल किनहूँ नहीं देखा ॥
 जाके' छाड़े' भये अनाथा, भूलि परै नहीं पावै पंथा ॥
 अछै अभि-अंतरि नियरै दूरी, बिन चीन्हयां क्यूं पाइये मूरी ॥
 जा बिन हंस बहुत दुख पावा, जरत जरत गुरि रांम मिलावा ॥
 मिल्या रांम रह्या सहजि समाई, खिन बिछुरयां जीव उरभै जाई ॥
 जा मिलियां तै' कीजै बधाई, परमानंद रै'नि दिन गाई ॥
 सखी सहेली लोन्ह बुलाई, रुति परमानंद भेटियै जाई ॥
 सखी सहेली करहि अनंदू, हित करि भेटे परमानंदू ॥
 चली सखी जहु'वां निज रांमां, भये उछाह छाड़े सब कांमां ॥
 जानू' कि मोरै सरस बसंता, मै बलि जाऊ तोरि भगव'ता ॥
 भगति हेत गावै लैलीनां, ज्युं बन नाद कांकिला कीन्हां ॥
 बाजै' संख सबद धुनि बेनां, तन मन चित हरि गोविंद लीनां ॥
 चल अचल पांडन पंगुरनी, मधुकरि ज्युं लेहि अघरनीं ॥
 सावज सीह रहे सब मांची, चंद अरु सूर रहे रथ खांची ॥
 गण गंधप मुनि जोवै' देवा, आरति करि करि बिनवै' सेवा ॥
 बासि गयंद्र ब्रह्मा करै' आसा, हंम क्यूं चित दुल'भ रांम दासा ॥
 भगति हेत रांम गुन गावै', सुर नर मुनि दुरलभ पद पावै' ॥
 पुनिम बिमल ससि मास बसंता, दरसन जोति मिले भगव'ता ॥
 चंदन बिलनी बिरहनि धारा, यूं पृजिये प्रांनपति रांम पियारा ॥
 भाव भगति पूजा अरु पाती, आतमरांम मिजे बहु भांती ॥
 रांम रांम रांम रुचि मानै', सदा अनंद रांम ल्यौ जानै' ॥
 पाया सुख सागर कर मूला, सो सुख नहीं कहूं सम तूला ॥

सुख समाधि सुख भया हमारा, मिल्या न बेगर होइ ।

जिहि लाधा सो जानि है, राम कबीर और न जानै कोइ ॥४॥

[अष्टपदी रमैणी]

कंकु कंकु तीरथ व्रत लपटानां, कंकु कंकु केवल राम निज जानां ॥

अजरा अमर एक अस्थानां, ताका मरम काहू बिरलै जानां ॥

अवरन जोति सकल उजियारा, द्विष्टि समान दास निस्तारा ॥

जे नहीं उपज्या धरनि सरीरा, ताकै पथिन सींच्या नीरा ॥

जा नहीं लागे सूरजि के बांनां, सो मोहि आनि देहु को दांनां ॥

जब नहीं होते पवन नहीं पानीं, जब नहीं होती सिष्टि उपानीं ॥

जब नहीं होते प्यंढ न बासा, तब नहां होते धरनि अकासा ॥

जब नहीं होते गरभ न मूला, तब नहीं होते कली न फूला ॥

जब नहीं होते सबद न स्वादं, तब नहीं होते बिया न बादं ॥

जब नहीं होते गुरु न चेला, गम अगमै पंथ अकेला ॥

अब गति की गति क्या कहूँ, जस कर गांव न नांव ।

गुन बिहूँन का पेखिये, काकर धरिय नांव ॥

आदम आदि सुधि नहीं पाई, मां मां हवा कहाँ थै आई ॥

जब नहीं होते राम खुदाई, साखा मूल आदि नहीं भाई ॥

जब नहीं होते तुरक न हिंदू, माका उदर पिता का व्यंदू ॥

जब नहीं होते गाय कमाई, तब बिसमला किनि फुरमाई ॥

भूले फिरै दोन हूँ धावै, ता साहिब का पंथ न पावै ॥

संजोगै करि गुंण धरया, बिजोगै गुण जाइ ।

जिभ्या स्वारथि आपणै, कीजै बहुत उपाइ ॥

जिनि कलमां कलि माहि पठावा, कुदरति खोजि तिन्हूँ नहीं पावा ॥

कर्म करीम भये कर्तूता, वेद कुरान भयं दोऊ रीता ॥

कृतम सोजु गरभ अवतरिया, कृतम सो जु नाव जस धरिया ।

कृतम सुनित्य और जनेऊ, हिंदू तुरक न जानै भेऊ ॥
मन मुसले की जुगति न जानै, मति भूलै द्वै दीन बखानै ॥

पांणी पवन संजोग करि, कीया है उतपाति ॥

सुनि मैं सबद समाइगा, तब कासनि कहिये जाति ॥
तुरकी धरम बहुत हम खोजा, बहु बजगार करै ए बोधा ॥
गाफिल गरब करै अधिकारी, स्वारथ अरथि बधै ए गार्ई ॥
जाकौ दूध धाड़ करि पीजै, ता माता कौ बध क्यूं कीजै ॥
लहुरै थकै दुहि पीया खीरो, ताका अहमक भखै सरीरो ॥

बेअकली अकलि न जानहीं, भूले फिरै ए लोइ ।

दिल दरिया दोदार बिन, भिस्त कहां थै होइ ॥

पंडित भूले पढ़ि गुन्य वेदा, आप न पावै नानां भेदा ॥
संभया तरपन अरु षट करमां, लागि रहे इनकै आशरमां ॥
गायत्री जुग चारि पढ़ाई, पूछौ जाइ मुक्ति किनि पाई ॥
सब मैं राम रहै ल्यौ सींचा, इन थै और कहा को नोंचा ॥
अति गुन गरब करै अधिकारी, अधिकै गरबि न होइ भलाई ॥
जाकौ ठाकुर गरब प्रहारी, सो क्यूं सकई गरब सहारी ॥

कुल अभिमान बिचार तजि, खोजौ पद निरबांन ॥

अंकुर बीज नसाइगा, तब मिलै बिदेही थान ॥

खत्री करै खत्रिया धरमो, तिनकूं होय सवाया करमो ॥
जीवहि मारि जीव प्रतिपारै, देखत जनम आपनौं हारै ॥
पंच सुभाव जु मेटै काया, सब तजि करम भजै राम राया ॥
खत्री सों जु कुटंब सूं सूझै, पंचं मेटि एक कूं बूझै ॥
जो आवध गुर ग्यान लखावा, गहि कर वाल धूप धरि धावा ॥
हेला करै निसानै घाऊ, भूझ परै तहां मनमथ राऊ ॥

मनमथ मरै न जीवई, जीवण मरण न होइ ।

सुनि सनेही राम बिन, गये अपनपौ खोइ ॥

अरु भूले षट दरसन भाई, पाखंड भेष रहे लपटाई ॥
 जैन बोध अरु साकत सैनां, चार बाक चतुरंग बिहूनां ॥
 जैन जीव की सुधि न जानै, पाती तोरि देहुरै आनै ॥
 होनां मवरा चंपक फूला, तामैं जीव बसै कर तूना ॥
 अरु प्रियमों का रोम उपारै, देखत जीव कोटि संघारै ॥
 मनमथ करम करै अस राला, कलपत बिंद धसै तिहि द्वारा ॥
 ताकी हत्या होइ अदभूता, षट दरसन मैं जैन बिगूता ॥

ग्यान अमर पद बाहिरा, नेड़ा ही तैं दूरि ।

जिनि जान्यां तिनि निकटि है, राम रह्या सकल भरपूरि ॥
 आपन करता भये कुलाला, बहु बिधि सिष्टि रची दर हाला ॥
 बिधनां कुंभ कीये द्वै थानां, प्रतिबिंबता मांहि समानां ॥
 बहुत जतन करि बांनक बांनां, सौंज मिलाय जीव तहां ठानां ॥
 जठर अगनि दो कीं परजाली, ता मैं आप करै प्रतिपाली ॥
 भीतर थैं जब बाहरि आवा, सिव सकती द्वै नांव धरावा ॥
 भूलै भरमि परै जिनि कोई, हिंदू तुरक भूठ कुल दोई ॥
 घर का सुत जे होइ अयांनां, ताकै संगि क्यूं जाइ सयांनां ॥
 साची बात कहै जे वासौं, सो फिरि कहै दिवांनां तासूं ॥
 गोप भिन है एकै दूधा, कासूं कहिये बांम्हन सूदा ॥

जिनि यहु चित्र बनाइया, सो साचा सुतधार ।

कहै कबीर ते जन भले, जे चित्रवत लेहि बिचार ॥ ५ ॥

[बारहपदी रमैणी]

पहली मन मैं सुमिरौं सोई, ता सम तुलि अवर नहीं कोई ॥
 कोई न पूजै वासूं प्रांनां, आदि अंति वो किनहू न जानां ॥
 रूप सरूप न आवै बोला, हरु गरु कछु जाइ न तोला ॥
 भूख न त्रिषा धूप नहीं छाहीं, सुख दुख रहित रहै सब मांहि ॥

अविगत अपरंपार ब्रह्म, ग्याँन रूप सब ठाँम ।

बहु बिचार करि देखिया, कोई न सारिख राँम ॥

जो त्रिभवन पति ओहै ऐसा, ताका रूप कहौ धौँ कैसा ॥

सेवग जन सेवा कै ताई', बहुत भाँति करि सेवि गुसाई ॥

तैसी सेवा चाहौ लाई, जा सेवा बिन रह्या न जाई ॥

सेव करंतां जो दुख भाई, सो दुख सुख बरि गिनहु सवाई ॥

सेव करंतां सो सुख पावा, तिन्य सुख दुख दोऊ बिसरावा ॥

सेवग सेव भुलानियां, पंथ कुपंथ न जान ।

सेवग सो सेवा करै, जिहि सेवा भल मान ॥

जिहि जग की तस की तस के ही, आपै आप आयिहै एही ॥

कोई न लखई वाका भेऊ, भेऊ होइ तौ पावै भेऊ ॥

बावै न दाहिनै आगै न पीछू, अरध न उरध रूप नहीं कीछू ॥

माय न बाप आव नहीं जावा, नां वहु जण्यां न को वहि जावा ॥

वो है तैसा वोही जानै, ओही आहि आहि नहीं आनै ॥

नैनां बैन अगोचरी, श्रवनां करनीं सार ।

बोलन कै सुख कारनै, कहिये सिरजनहार ॥

सिरजनहार नाँउ धूँ तेरा, भौसागर तिरिबे कूँ भेरा ॥

जे यहु भेरा राँम न करता, तौ आपै आप आवटि जग मरता ॥

राँम गुसाई' मिहर जु कीन्हां, भेरा साजि संत कौं दीन्हां ॥

दुख खंडण मही मंडणां, भगति मुक्ति बिश्राँम ।

बिधि करि भेरा साजिया, धरया राँम का नाँम ॥

जिनि यहु भेरा दिढ़ करि गहिया, गये पार तिन्हैं सुख लहिया ॥

दुमनां हूँ जिनि चित्त डुलावा, कर छिटके थै थाह न पावा ॥

इक.डूबे अरु रहे उरवारा, ते जगि जरे न राखणहारा ॥

राखन की कछु जुगति न कीन्हीं, राखणहार न पाया चीन्हीं ॥

जिनि चीन्हां ते निरमल श्रंगा, जे अचीन्ह ते भये पतंगा ॥

रांम नांम ल्यौ लाइ करि, चित चेतनि ह्वै जागि ।

कहै कबीर ते ऊबरे, जे रहे रांम ल्यौ लागि ॥

अरचित अविगत है निरधारा, जांण्यां जाइ न वार न पारा ॥

लोक बेद थै अछै नियारा, छाड़ि रह्यौ सबही संसारा ॥

जसकर गांउ न ठांउ न खेरा, कैसें गुन बरनूं मैं तेरा ॥

नहीं तहां रूप रेख गुन बांन्यां, ऐसा साहिब है अकुलानां ॥

नहीं सो ज्वांन न बिरध नहीं बारा, आपै आप आपनपौ तारा ॥

कहै कबीर बिचारि करि, जिनि को लावै भंग ।

सेवौ तन मन लाइ करि, रांम रह्या सरबंग ॥

नहीं सो दूरि नहीं सो नियरा, नहीं सो तात नहीं सो सियरा ॥

पुरिष न नारि करै नहीं क्रोरा, धांम न धांम न व्यापै पीरा ॥

नदी न नाव धरनि नहीं धीरा, नहीं सो काच नहीं सो हीरा ॥

कहै कबीर बिचारि करि, तासूं लावो हेत ।

वरन बिबरजत ह्वै रह्या, नां सो स्यांम न सेत ॥

नां वो बारा व्याह बराता, पीत पितंबर स्यांम न राता ॥

तीरथ व्रत न आवै जाता, मन नहीं मोनि बचन नहीं बाता ॥

नाद न बिंद गरथ नहीं गाथा, पवन न पांथीं संग न साथ्या ॥

कहै कबीर बिचारि करि, ताकै हाथि न नाहि ।

सो साहिब किनि सेविये, जाकै धूप न छांह ॥

ता साहिब कै लागौ साथ्या, दुख सुख मेटि रह्यौ अनाथा ॥

नां जसरथ धरि औतरि आवा, नां लंका का राव संतावा ॥

देवै कूख न औतरि आवा, नां जसवै ले गोद खिलावा ॥

ना वो ग्वालन कै संग फिरिया, गोबरधन ले न कर धरिया ॥

बांवन होय नहीं बलि छलिया, धरनीं बेद लेन उधरिया ॥

गंडक सालिग रांम न कोला, मछ कछ ह्वै जलहि न डोला ॥

बट्टो बैस्ये ध्यानि नहीं लावा, परसराम ह्वै खत्रो न संतावा ॥

द्वारामती सरीर न छाड़ा, जगननाथ ले प्यंड न गाड़ा ॥

कहै कबीर बिचारि करि, ये ऊले ब्याहार ।

याही थै जे अगम है, सो बरति रहया संसारि ॥

नां तिस सबदन स्वादन सोहा, नां तिहि मात पिता नहीं मोहा ॥

नां तिहि सास ससुर नहीं सारा, नां तिहि रोज न रोवनहारा ॥

नां तिहि सूतिग पातिग जातिग, नां तिहि माइ न देव कथा पिक ॥

नां तिहि ब्रिध बधावा बाजै, नां तिहि गीत नाद नहीं साजै ॥

नां तिहि जाति पांत्य कुल लीका, नां तिहि छोति पवित्र नहीं सींचा ॥

कहै कबीर बिचारि करि, वो है पद निरबान ।

सति ले मन मैं राखिये, जहां न दूजी आन ॥

नां सो आवै नां सो जाई, ताकै बंध पिता नहीं माई ॥

चार बिचार कछू नहीं वाकै, उनमनि लागि रहै जे ताकै ॥

को है आदि कवन का कहिये, कवन रहनि वाका ह्वै रहिये ॥

कहै कबीर बिचारि करि, जिनि को खोजै दूरि ।

ध्यान धरौ मन सुध करि, राम रहया भरपूरि ॥

नाद बिंद रंक इक खेला, आपै गुरु आप ही चेला ॥

आपै मंत्र आपै मंत्रेला, आपै पूजै आप पूजेला ॥

आपै गावै आप बजावै, अपनां कीया आप ही पावै ॥

आपै धूप दीप आरती, अपनां आप लगावै जाती ॥

कहै कबीर बिचारि करि, भूठा लोही चाम ।

जो या देही रहित है, सो है रमिता राम ॥

[चौपदी रमैणी]

अंकार आदि है मूला, राजा परजा एकहि सूला ॥

हम तुम्ह मांहीं एकै लोहू, एकै प्राण जीवन है मोहू ॥

एकही बास रहै दस मासा, सुतग पातग एकै आसा ॥

एकहि जननीं जन्यां संसारा, कौन ग्यांन थै भये निनारा ॥

ग्यान न पायौ बावरे, धरी अविद्या मैड ।

सतगुर मिल्या न मुक्ति फल, तायै खाई बैड ॥

बालक हूँ भग द्वारे आवा, भग भुगतन कूँ पुरिष कहावा ॥

ग्यान न सुमिरगौ निरगुण सारा, विष थै बिरचि न किया बिचारा ॥

भाव भगति सूँ हरि न अराधा, जनम मरन की मिटी न साधा ॥

साध न मिटी जनम की, मरन तुरांनां आइ ।

मन क्रम बचन न हरि भज्या, अंकुर बीज नसाइ ॥

तिण चरि सुरही उदिक जु पीया, द्वारै दूध बछ कूँ दाया ॥

बछा चूखत उपजी न दया, बछा बांधि बिछोही मया ॥

ताका दूध आप दुहि पीया, ग्यान बिचार कछू नहीं कीया ॥

जे कुछ लोगनि सोई कीया, माला मंत्र बादि ही लीया ॥

पीया दूध रुध्र हूँ आया, मुई गाइ तब दोष लगाया ॥

बाकस ले चमरां कूँ दीन्हों, तुचा रंगाइ करौती कीन्हों ॥

ले रुकरौती बैठे संगी, ये देखौ पांडे के रंगा ॥

तिहि रुकरौती पांणी पीया, यहु कुछ पांडे अचिरज कीया ॥

अचिरज कीया लोक मैं, पीया सुहागल नीर ।

इंद्री स्वारथि सब कीया, बंध्यां भरम सरीर ॥

एकै पवन एकही पांणी, करी रसोई न्यारी जानों ॥

माटी सूँ माटी ले पोती, लागी कहै कहाँ धूँ छोती ॥

धरती लीपि पवित्र कीन्हों, छोति उपाय लीक बिचि दीन्हों ॥

याका हम सूँ कहौ बिचारा, क्यूँ भव तिरिहौ इहि आचारा ॥

ए पाखंड जीव के भरमां, मानि अमांनि जीव के करमां ॥

करि आचार जु ब्रह्म संतावा, नांव बिनां संतोष न पावा ॥

सालिग राम सिला करि पूजा, तुलसी तोड़ि भया नर दूजा ॥

ठाकुर ले पाटै पौढावा, भोग लगाइ अरु आपै खावा ॥

साच सील का चौका दीजै, भाव भगति की सेवा कीजै ॥

भाव भगति की सेवा मांनै, सतगुर प्रगट कहै नहीं छांनै ॥
 अनभै उपजि न मन ठहराई, परकीरति मिलि मन न समाई ॥
 जब लग भाव भगति नहीं करिहौ, तब लग भवसागर क्यूं तिरिहौ ॥
 भाव भगति बिसवास बिन, कटै न संसै सूल ।
 कहै कबीर हरि भगति बिन, मूकति नहीं रे मूल ॥

परिशिष्ट

अर्थात्

श्रीग्रंथसाहब में दिए हुए पदों में से कबीरदास के
उन पदों का संग्रह जो इस ग्रंथावली
में नहीं आए हैं ।

परिशिष्ट

(१) साखी

आठ जाम चौसठि घरी तुअ निरखत रहै जीउ ।
नीचे लोइन क्यों करौ सब घट देखौ पोउ ॥ १ ॥
ऊँच भवन कनक कामिनी सिखरि धजा फहराइ ।
ताते भली मधुकरी संत संग गुन गाइ ॥ २ ॥
अंबर घन हरु छाइया बरषि भरे सर ताल ।
चातक ज्यों तरसत रहै तिनको कौन हवाल ॥ ३ ॥
अल्लह की कर बंदगी जिह सिमरत दुख जाइ ।
दिल महि साँई परगटै बुझै बलंती नाइ ॥ ४ ॥
अवरह कौ उपदेसते मुख में परिहै रेनु ।
रासि विरानी राखते खाया घर का खेतु ॥ ५ ॥
कबीर आई मुझहि पहि अनिक करे करि भेसु ।
हम राखे गुरु आपने उन कीनो आदेसु ॥ ६ ॥
आखी करे माटुके पल पल गई बिहाइ ।
मनु जंजाल न छोड़ई जम दिया दमामा आइ ॥ ७ ॥
आसा करियै राम की अवरै आस निरास ।
नरक परहि ते मानई जो हरि नाम उदास ॥ ८ ॥
कबीर इहु तनु जाइगा सकहु त लेहु बहोरि ।
नागे पाँवहु ते गये जिनके लाख करोरि ॥ ९ ॥
कबीर इहु तनु जाइगा कवनै मारग लाइ ।
कै संगति करि साध की कै हरि के गुन गाइ ॥ १० ॥

एक घड़ी आधी घड़ी आधी हूं ते आध ।
 भगतन सेटी गोसटे जो कीने सो लाभ ॥ ११ ॥
 एक मरंते दुइ मुये होइ मरंतेहि चारि ।
 चारि मरंतेहि छहि मुये चारि पुरुष दुइ नारि ॥ १२ ॥
 ऐसा एक आधु जो जीवत मृतक होइ ।
 निरभै होइ कै गुन रवै जत पैखौ तत सोइ ॥ १३ ॥
 कबीर ऐसा को नहीं इह तन देवै फूकि ।
 अंधा लोगुन जानई रह्यो कबीरा कूकि ॥ १४ ॥
 ऐसा जंतु इक देखिया जैसी देखी लाख ।
 दीसै चंचल बहु गुना मति-हीना नापाक ॥ १५ ॥
 कबीर ऐसा बीजु बोइ बारह मास फलंत ।
 सीतल छाया गहिर फल पंखो कोल करंत ॥ १६ ॥
 ऐसा सत गुरु जे मिलै तुट्टा करे पसाउ ।
 मुकति दुआरा मोकला सहजे आवौ जाउ ॥ १७ ॥
 कबीर ऐसी होइ परी मन को भावतु कीन ।
 मरने ते क्या डरपना जब हाथ सिंधौरा लीन ॥ १८ ॥
 कंचन के कुंडल बने ऊपर लाल जड़ाउ ।
 दीसहि दाधे कान ज्यों जिन मन नाहीं नाउ ॥ १९ ॥
 कबीर कसौटी राम की भूठा टिका न कोइ ।
 राम कसौटी सो सहै जो मरि जीवा होइ ॥ २० ॥
 कबीर कस्तूरी भया भवर भये सब दास ।
 ज्यों ज्यों भगति कबीर की त्यों त्यों राम निवास ॥ २१ ॥
 कागद केरी ओबरी मसु के कर्म कपाट ।
 पाहन बोरी पिरथमी पंडित पाड़ी बाट ॥ २२ ॥
 काम परे हरि सिमिरियै ऐसा सिमरौ नित्त ।
 अमरापुर बासा करहु हरि गया बहोरै विस्त ॥ २३ ॥

काया कजली बन भया मन कुंजर मयमंतु ।
 अंक सुज्ञान रतन है खेवट बिरला संतु ॥ २४ ॥
 काया काची कारवी, काची केवल धातु ।
 साबतु रख हित राम तनु नाहि त बिनठी बात ॥ २५ ॥
 कारन बपुरा क्या करै जौ राम न करै सहाइ ।
 जिह जिह डाली पग धरै सोई मुरि मुरि जाइ ॥ २६ ॥
 कबीर कारन सो भयो जो कीनो करतार ।
 तिसु बिनु दूसर को नहीं एकै सिरजनुहार ॥ २७ ॥
 कालि करंता अबहि करु अब करता सुइ ताल ।
 पाछै कछू न होइगा जौ सिर पर आवै काल ॥ २८ ॥
 कीचड़ आटा गिरि परया किछू न आयो हाथ ।
 पोसत पोसत चाबिया सोई निबह्या साथ ॥ २९ ॥
 कबीर कूकरु भौकता कुरंग पिछै उठि धाइ ।
 कर्म सति गुरु पाइया जिन हौ लिया छड़ाइ ॥ ३० ॥
 कबीर कोठी काठ की दह दिसि लागी आगि ।
 पंडित पंडित जल मुये मूरख उबरे भागि ॥ ३१ ॥
 कोठे मंडप हेतु करि काहे मरहु सवारि ।
 कारज साढ़े तीन हथ घनी त पौने चारि ॥ ३२ ॥
 कौड़ी कौड़ी जोरि कै जोरे लाख करोरि ।
 चलती बार न कछु मिल्यो लई लँगोटी तोरि ॥ ३३ ॥
 खिंथा जलि कोइला भई खापर फूटम फूट ।
 जोगी बपुड़ा खेलियो आसनि रही बिभूति ॥ ३४ ॥
 खूब खाना खीचरी जामै अमृत लोन ।
 हेरा रोटी कारने गला कटावै कौन ॥ ३५ ॥
 गंगा तीर जु घर करहि पीवहि निर्मल नीर ।
 बिनु हरि भगत न मुक्ति होइ यों कहि रमे कबीर ॥ ३६ ॥

कबीर राति होवहि कारिया कारे ऊभे जंतु ।
 लै फाहे उठि धावते सिजानि मारे भगवंतु ॥ ३७ ॥
 कबीर गरबु न कीजियै चाम लपेटे हाड़ ।
 हैवर ऊपर छत्र तर ते फुन धरनी गाड़ ॥ ३८ ॥
 कबीर गरबु न कीजियै ऊँचा देखि अवासु ।
 आजु कालि भुइ लेटना ऊपरि जामै घासु ॥ ३९ ॥
 कबीर गरबु न कीजियै रंकु न हसियै कोइ ।
 अजहु सुनाउ समुद्र महि क्या जानै क्या होइ ॥ ४० ॥
 कबीर गरबु न कीजियै देही देखि सुरंग ।
 आजु कालि तजि जाहुगे ज्यों काँचुरी भुअंग ॥ ४१ ॥
 गहगच पर्यो कुटंब कै कंठै रहि गयो राम ।
 आइ परे धर्म राइ के बीचहि धूमा धाम ॥ ४२ ॥
 कबीर गागर जल भरी आजु कालि जैहै फूटि ।
 गुरु जु न चेतहि आपुनो अधमाभ लो जाहिगे लूटि ॥ ४३ ॥
 गुरु लागा तब जानिये मिटै मोह तन ताप ।
 हरष सोग दाभै नहीं तब हरि आपहि आप ॥ ४४ ॥
 कबीर घाणी पीड़ते सति गुरु लिये छुड़ाइ ।
 परा पूरबली भावनी परगत होई आइ ॥ ४५ ॥
 चकई जौ निसि बीछुरै आइ मिले परभाति ।
 जो नर बिछुरै राम स्यों ना दिन मिले न राति ॥ ४६ ॥
 चतुराई नहिं अति घनी हरि जपि हिरदै माहि ।
 सूरी ऊपरि खेलना गिरै त ठाहरि नाहि ॥ ४७ ॥
 चरन कमल की मौज को कहि कैसे उनमान ।
 कहिवे कौ सोभा नहीं देखा ही परवान ॥ ४८ ॥
 कबीर चावल कारने तुखकौ मुहली लाइ ।
 संग कुसंगी बैसते तब पूछै धर्मराइ ॥ ४९ ॥

चुगै चितारै भी चुगै चुगि चुगि चितारै ।
 जैसे बच रहि कुंज मन माया ममता रे ॥ ५० ॥
 चोट सहेली सेल की लागत लेइ उसास ।
 चोट सहारै सबद की तासु गुरु मैं दास ॥ ५१ ॥
 जग काजल की कोठरी अंध परे तिस मांहि ।
 हौं बलिहारी तिन्न की पैसि जु नीकसि जाहि ॥ ५२ ॥
 जग बांध्यो जिह जेवरी तिह मत बंधहु कबोर ।
 जैहहि आटा लोन ज्यों सोन समान शरीर ॥ ५३ ॥
 जग में चेत्यो जानि कै जग में रह्यो समाइ ।
 जिन हरि नाम न चेतियो बादहि जनमे आहि ॥ ५४ ॥
 कबीर जहं जहं हौं फिरयो कौतक ठाओ ठाई ।
 इक राम सनेही बाहरा ऊजरु मेरे भाई ॥ ५५ ॥
 कबीर जाको खोजते पायो सोई ठौर ।
 सोई फिरि कै तू भया जाको कहता और ॥ ५६ ॥
 जाति जुलहा क्या करै हिरदै बसे गुपाल ।
 कबीर रमइया कंठ मिलु चूकहि सब जंजाल ॥ ५७ ॥
 कबीर जा दिन हौं मुआ पाछै भया अनंदु ।
 मोहि मिल्यो प्रभु आपना संगी भजहि गोबिंदु ॥ ५८ ॥
 जिह दर आवत जातहु हटकै नाही कोइ ।
 सो दर कैसे छोड़ियै जौ दर ऐसा होइ ॥ ५९ ॥
 जीय जो मारहि जोरु करि कहते हहि जु हलाल ।
 दफतर दई जब काढ़िहै होइगा कौन हवाल ॥ ६० ॥
 कबीर जेते पाप किये राखे तलै दुराइ ।
 परगट भये निदान सब जब पूछै धर्मराइ ॥ ६१ ॥
 जैसी उपजी पेड़ ते जौ तैसी निबहै ओड़ि ।
 हीरो किसका बापुरा पुजहि न रतन करोड़ि ॥ ६२ ॥

जौ मैं चितवौ ना करै क्या मेरे चितवे होइ ।
 अपना चितव्या हरि करै जो मेरे चित्त न होइ ॥ ६३ ॥
 जोर किया सो जुलम है लेइ जवाब खुदाइ ।
 दफतर लेखा नीकसै मार मुहै मुह खाइ ॥ ६४ ॥
 जो हम जंत्र बजावते टूटि गई सब तार ।
 जंत्र बिचारा क्या करै चले बजावनहार ॥ ६५ ॥
 जौ गृह कर हित धर्म करु नाहिं त करु बैरागु ।
 बैरागी बंधन करै ताको बड़ा अभागु ॥ ६६ ॥
 जौ तुहि साध पिरम्म की सीस काटि करि गोइ ।
 खेलत खेलत हाल करि जो किछु होइ त होइ ॥ ६७ ॥
 जौ तुहि साध पिरम्म की पाके सेती खेलु ।
 काची सरसो पेलि कै ना खलि भई न तेलु ॥ ६८ ॥
 कबीर भंखु न भंखियै तुम्हरौ कह्यो न होइ ।
 कर्म करीम जु करि रहे मेदि न साकै कोइ ॥ ६९ ॥
 टालै टालै दिन गया ब्याजु बढ़तौ जाइ ।
 ना हरि भज्यो ना खत फट्यो काल पहुंचो आइ ॥ ७० ॥
 ठाकुर पूजहि मोल ले मन हठ तीरथ जाहि ।
 देखा देखो स्वाँग धरि भूले भटका खाहि ॥ ७१ ॥
 कबीर डगमग क्या करहि कहा डुलावहि जीउ ।
 सर्व सूख की नाइ को राम नाम रस पीउ ॥ ७२ ॥
 डूबहिगो रे बापुरे बहु लोगन की कानि ।
 पारोसी के जो हुआ तू अपने भी जानि ॥ ७३ ॥
 डूबा था पै उब्वरयो गुन की लहरि भबकि ।
 जब देख्यो बेड़ा जरंजरात तब उतरि परयो हौं फरकि ॥ ७४ ॥
 तरवर रूपी रामु है फल रूपी बैरागु ।
 छाया रूपी साधु है जिन तजिया बाहु बिबाहु ॥ ७५ ॥

कबीर तासों प्रीति करि जाको ठाकुर राम ।
 पंडित राजे भूपती आवहि कौने काम ॥ ७६ ॥
 तूंतूं करता तूं हुआ मुझ में रही न हूं ।
 जब आपा पर का मिटि गया जित देखैं तित तूं ॥ ७७ ॥
 थूनी पाई थिति भई सति गुरु बंधी धीर ।
 कबीर हीरा बनजिया मानसरोवर तीर ॥ ७८ ॥
 कबीर थोड़े जल माछुली भाँवर मेल्यो जाल ।
 इहटौ घनै न छूटिसहि फिरि करि समुद सम्हालि ॥ ७९ ॥
 कबीर देखि कै किह कहौ कहे न को पतिआइ ।
 हरि जैसा तैसा उही रहौ हरखि गुन गाइ ॥ ८० ॥
 देखि देखि जग हूँ ढिया कहूं न पाया ठौर ।
 जिन हरि का नाम न चेतियो कहा भुलाने और ॥ ८१ ॥
 कबीर धरती साध की तसकर बैसहि गाहि ।
 धरती भार न व्यापई उनकौ लाहू लाहि ॥ ८२ ॥
 कबीर नयनी काठ की क्या दिखलावहि लोइ ।
 हिरदै राम न चेतही इह नयनी क्या होइ ॥ ८३ ॥
 जा घर साध न सेवियहि हरि की सेवा नाहि ।
 ते घर मरहट सारखे भूत बसहि तिन माहि ॥ ८४ ॥
 ना मोहि छानि न छापरी ना मोहि घर नहीं गाउ ।
 मति हरि पूछै कौन है मेरे जाति न नाउ ॥ ८५ ॥
 निर्मल बूँद अकास की लीनी भूमि मिलाइ ।
 अनिक सियाने पच गये ना निरवारी जाइ ॥ ८६ ॥
 नृप-नारी क्यों निंदियै क्यों हेरि चेरी कौ मान ।
 ओह माँगु सवारै विषै कौ ओहु सिमरै हरिनाम ॥ ८७ ॥
 नैन निहारौ तुझकौ सबन सुनहु तुव नाउ ।
 बैन उचारहु तुव नाम जी चरन कमल रिद ठाउ ॥ ८८ ॥

परदेसी कै घाघरै चहु दिसि लागी आगि ।
 खिथा जल कुइला भई तागे आँच न लागि ॥ ८६ ॥
 परभाते तारे खिसहि त्यां इहु खिसै सरीरु ।
 पै दुइ अक्खर ना खिसहि सो गहि रह्यो कबोरु ॥ ८७ ॥
 पाटन ते ऊजरु भला राम भगत जिह ठाइ ।
 राम सनेही बाहरा जमपुर मेरे भाइ ॥ ८८ ॥
 पापी भगति न पावई हरि पूजा न सुहाइ ।
 माखी चंदन परहरै जह बिगंध तह जाइ ॥ ८९ ॥
 कबीर पारस चंदनै तिन है एक सुगंध ।
 तिहि मिलि तेउ ऊतम भए लोह काठ निरगंध ॥ ९० ॥
 पालि समुद सरवर भरा पी न सकै कोइ नीरु ।
 भाग बड़े ते पाइयो तू भरि भरि पीउ कबोरु ॥ ९१ ॥
 कबीर प्रीति इकस्यो किए आनंद बढ़ा जाइ ।
 भावै लाँवे केस कर भावै घररि मुडाइ ॥ ९२ ॥
 कबीर फल लागे फलनि पाकन लागे आँव ।
 जाइ पहुँचै खसम कौ जौ बीचि न खाई काँव ॥ ९३ ॥
 बाम्हन गुरु है जगत का भगतन का गुरु नाहि ।
 अरभि उरभि कै पच मुआ चारहु बेदहु माहि ॥ ९४ ॥
 कबीर बेड़ा जरजरा फूटे छेक हजार ।
 हरये हरये तिरि गये डूबे जिन सिर भार ॥ ९५ ॥
 भली भई जौ भौ परया दिसा गई सब भूलि ।
 ओरा गरि पानी भया जाइ मिल्यो ठलि कूलि ॥ ९६ ॥
 कबीर भली मधूकरी नाना बिधि को नाजु ।
 दावा काहू को नहीं बड़ो देश बड़ राजु ॥ ९७ ॥
 भाँग माछुली सुरापान जो जो प्राणी खाहि ।
 तीरथ बरत नेम किये ते सबै रसातल जाहि ॥ ९८ ॥

भार पराई सिर चरै चलियो चाहै बाट ।
 अपने भारहि ना डरै आगै औघट घाट ॥१०२॥
 कबीर मन निर्मल भया जैसा गंगा नीर ।
 पाछै लागो हरि फिरहि कहत कबीर कबीर ॥१०३॥
 कबीर मन पंखी भयो उड़ि उड़ि दह दिसि जाइ ।
 जो जैसी संगति मिलै सो तैसो फल खाइ ॥१०४॥
 कबीर मन मूढ्या नही केस मुड़ाये काइ ।
 जो किछु किया सो मन किया मुंडामुंड अजाइ ॥१०५॥
 मया तजी तौ क्या भया जौ मानु तज्या नहि जाइ ।
 मान मुनी मुनिबर गले मानु सबै कौ खाइ ॥१०६॥
 कबीर महदी करि घालिया आपु पिसाइ पिसाइ ।
 तैसेइ बात न पूछियै कबहु न लाई पाइ ॥१०७॥
 माई मूढ़हु तिह गुरु जाते भरमु न जाइ ।
 आप डुबे चहु बेद महि चले दिये बहाइ ॥१०८॥
 माटी के हम पूतरे मानस राख्यो नाउ ।
 चारि दिवस के पाहुने बड़ बड़ रूधहि ठाउ ॥१०९॥
 मानस जनम दुर्लभ है होइ न बारै बारि ।
 जौ बन फल पाके भुइ गिरहि बहुरि न लागै डारि ॥११०॥
 कबीर माया डोलनी पवन भुकोलनहार ।
 संतहु माखन खाइया छाछि पियै संसार ॥१११॥
 कबीर माया डोलनी पवन बहै हिवधार ।
 जिन बिलोया तिन पाइया अवन बिलोवनहार ॥११२॥
 कबीर माया चोरटी मुसि मुसि लावै हाटि ।
 एकु कबीरा नाम सै जिन कीनी बारह बाटि ॥११३॥
 मारी मरौ कुसंग की केले निकटि जु बेरि ।
 उह भूलै उह चीरियै साकत संगु न हेरि ॥११४॥

मारे बहुत पुकारिया पीर पुकारै और ।
 लागी चोट मरम्म की रह्यो कबीरा ठौर ॥११५॥
 मुकति दुआरा संकुरा राई दसए भाइ ।
 मन तौ मैगल होइ रह्यो निकस्यो क्यों कै जाइ ॥११६॥
 मुल्ला मुनारे क्या चढ़हि साई न बहरा होइ ।
 जां कारन तू बाँग देहि दिल ही भीतरि जोइ ॥११७॥
 मुहि मरने का चाउ है मरैं तौ हरि कै द्वार ।
 मत हरि पूछै कौ है परा हमारै बार ॥११८॥
 कबीर मेरी जाति कौ सब कोइ हँसनेहार ।
 बलिहारी इसु जाति कौ जिह जपियो सिरजनहार ॥११९॥
 कबीर मेरी बुद्धि कौ जमु न करै तिसकार ।
 जिन यह जमुआ सिरजिया सु जपिया परविदगार ॥१२०॥
 कबीर मेरी सिमरनी रसना ऊपरि रामु ।
 आदि जगादि सगल भगत ताको सुख विस्वामु ॥१२१॥
 यम का ठेंगा बुरा है ओह नहिं सहिया जाइ ।
 एक जु साधु मोहि मिल्यो तिन लीया अंचल लाइ ॥१२२॥
 कबीर यह चेतानी मत सह सारहि जाइ ।
 पाछै भोग जु भोगवै तिनको गुड़ लै खाइ ॥१२३॥
 रस को गाढ़ो चूसियै गुन को मरिखै रोइ ।
 अवगुन धारे मानसै भलो न कहियै कोइ ॥१२४॥
 कबीर राम न चेतियो जरा पहुँच्यो आइ ।
 लागी मंदर द्वारि ते अब क्या काह्या जाइ ॥१२५॥
 कबीर राम न चेतियो फिरिया लालच माहि ।
 पाप करंता मरि गया औध पुजी खिन माहि ॥१२६॥
 कबीर राम न छोड़ियै तन धन जाइ त जाउ ।
 चरन कमल चित बेधिया रामहि नामि समाउ ॥१२७॥

कबीर राम न ध्याइयो मोटी लागी खोरि ।
 काया हाडो काठ की ना ओह चढै बहोरि ॥१२८॥
 राम कहन महि भेदु है तामहि एकु बिचारु ।
 सोई राम सबै कहहिं सोई कौतकहारु ॥१२९॥
 कबीर राम मै राम कहु कहिबे माहि बिबेक ।
 एक अनेकै मिलि गया एक समाना एक ॥१३०॥
 रामरतन मुख कोथरी पारख आगै खेलि ।
 कोइ आइ मिलैगो गाहकी लेगो महँगे मोलि ॥१३१॥
 लागी प्रीति सुजान स्यो बरजै लोगु अजानु ।
 तास्यो टूटी क्यों बनै जाके जीय परानु ॥१३२॥
 बांसु बढ़ाई बूढ़िया यों मत डूबहु कोइ ।
 चंदन कै निकटे बसे बासु सुगंध न होइ ॥१३३॥
 कबीर बिकारह चितवते भूठे करते आस ।
 मनोरथ कोइ न पुरियो चाले ऊठि निरास ॥१३४॥
 बिरहु भुअंगसु मन बसै मत्तु न मानै कोइ ।
 राम बियोगो ना जियै जियै त बौरा होइ ॥१३५॥
 बैदु कहै हैं ही भला दारु मेरै बस्सि ।
 इह तौ वस्तु गोपाल की जब भावै ले खस्सि ॥१३६॥
 वैष्णव की कूकरि भली साकत की बुरी माइ ।
 ओह सुनहि हर नाम जस उह पाप विसाहन जाइ ॥१३७॥
 वैष्णव हुआ त क्या भया माला मेली चारि ।
 बाहर कंचनवा रहा भीतरि भरी भँगारि ॥१३८॥
 कबीर संसा दूरि करु कागह हेरु बिहाउ ।
 बावन अक्खर सोधि कै हरि चरनों चितु लाउ ॥१३९॥
 संगति करियै साध की अंति करै निर्बाहु ।
 साकत संगु न कीजियै जाते होइ बिनाहु ॥१४०॥

कबीर संगति साध की दिन दिन दूना हेतु ।
 साकत कारी काबरी धोए होइ न सेतु ॥ १४१ ॥
 संत की गैल न छाड़ियै मारगि लागा जाउ ।
 पेखत ही पुन्रोत होइ भेटत जपियै नाउ ॥ १४२ ॥
 संतन की भुगिया भली भठि कुसत्तो गाउ ।
 आगि लगै तिह धौल हरि जिह नार्हीं हरि को नाउ ॥ १४३ ॥
 संत मुये क्या रोइयै जो अपने गृह जाय ।
 रोवहु साकत बापुरे जु हाटै हाट बिकाय ॥ १४४ ॥
 कबीर सति गुरु सुरमे बाह्या बान जु एकु ।
 लागत ही भुइ गिरि परया परा कलेजे छेकु ॥ १४५ ॥
 कबीर सब जग हौं फिरयो मांदलु कंध चढ़ाइ ।
 कोई काहू को नहीं सब देखी ठोक बजाइ ॥ १४६ ॥
 कबीर सब ते हम बुरे हम तजि भलो सब कोइ ।
 जिन ऐसा करि बूझिया मीतु हमारा सोइ ॥ १४७ ॥
 कबीर समुंद न छोड़ियै जौ अति खारो होइ ।
 पोखरि पोखरि दूँढ़ते भली न कहियै कोइ ॥ १४८ ॥
 कबीर सेवा कौ दुइ भले एक संतु इकु रामु ।
 राम जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु ॥ १४९ ॥
 साँचा सति गुरु मैं मिल्या सबदु जु बाह्या एक ।
 लागत ही भुइ मिलि गया परया कलेजे छेकु ॥ १५० ॥
 कबीर साकत ऐसा है जैसी लसन की खानि ।
 कोनै बैठे खाइयै परगट होइ निदान ॥ १५१ ॥
 साकत संगु न कीजियै दूरहि जइये भागि ।
 बासन कारो परसियै तउ कछु लागै दागु ॥ १५२ ॥
 साँचा सतिगुरु क्या करै जौ सिक्खा माही चूक ।
 अंधे एक न लागई ज्यो बाँसु बजाइयै फूँक ॥ १५३ ॥

साधू की संगति रहै जौ की भूसी खाउ ।
 होनहार सो होइहै साकत संगि न जाउ ॥ १५४ ॥
 साधु को मिलने जाइये साथ न लीजै कोइ ।
 पाछे पाउँ न दीजियै आगै होइ सो होइ ॥ १५५ ॥
 साधू संग परापति लिखिया होइ लिखाट ।
 मुक्ति पदारथ पाइयै ठाकन अवघट घाट ॥ १५६ ॥
 सारी सिरजनहार की जाने नाहों कोइ ।
 कै जानै आपन धनी कै दासु दिवानी होइ ॥ १५७ ॥
 सिखि साखा बहुते किये कंसो कियो न मीतु ।
 चले थे हरि मिलन कौ बीचै अटको चीतु ॥ १५८ ॥
 सुपने हू बरड़ाइकै जिह मुख निकसै राम ।
 ताके पा की पनही मेरे तन को चाम ॥ १५९ ॥
 सुरग नरक ते मैं रह्यो सति गुरु के परसादि ।
 चरन कमल की मौज महि रहै अंति अरु आदि ॥ १६० ॥
 कबीर सूख न एह जुग करहि जु बहुतै मीत ।
 जो चित राखहि एक स्यों ते सुख पावहि नीत ॥ १६१ ॥
 कबीर सूरज चाँद कै उदय भई सब देह ।
 गुरु गोविंद के बिन मिले पलटि भई सब खेह ॥ १६२ ॥
 कबीर सोई कुल भली जा कुल हरि को दासु ।
 जिह कुल दासु न उपजै सो कुल ढाकु पलासु ॥ १६३ ॥
 कबीर सोई मारिये जिहि मूये सुख होइ ।
 भलो भलो सब कोइ कहै बुरो न माने कोइ ॥ १६४ ॥
 कबीर सोइ मुख धनि है जा मुख कहियै राम ।
 देही किसकी बापुरी पवित्र होइगो ग्राम ॥ १६५ ॥
 हंस उड़्यो तनु गाड़ियो सोभाई सैनाह ।
 अजहू जीउ न छाड़ई रंकाई नैनाह ॥ १६६ ॥

हज काबे हैं जाइया आगे मिल्या खुदाइ ।
 साईं मुझ स्यो लर परया तुझै किन फुरमाई गाइ ॥ १६७ ॥
 हरदी पीर तनु हरे चून चिन्ह न रहाइ ।
 बलिहारी इह प्रीति कौ जिह जाति बरन कुल जाइ ॥ १६८ ॥
 हरि का सिमरन छाड़िकै पाल्यो बहुत कुटुंबु ।
 धंधा करता रहि गया भाई रहा न बंधु ॥ १६९ ॥
 हरि का सिमरन छाड़िकै राति जगावन जाइ ।
 सर्पनि होइकै औतरे जाये अपने खाइ ॥ १७० ॥
 हरि का सिमरन छाड़िकै अहोई राखे नारि ।
 गढ़ही होइ कै औतरै भारु सदै मन चारि ॥ १७१ ॥
 हरि का सिमरन जो करै सो सुखिया संसारि ।
 इत उत कतहु न डोलई जस राखै सिरजनहारि ॥ १७२ ॥
 हाड़ जरे ज्यों लाकरी केस जरे ज्यों घासु ।
 इहु जग जरता देखिकै भयो कबीर उदासु ॥ १७३ ॥
 है गै बाहन सघन धन छत्रपती की नारि ।
 तासु पटतर ना पुजै हरि जन की पनहारि ॥ १७४ ॥
 है गै बाहन सघन धन लाख धजा फहराइ ।
 या सुख तै भिक्खा भली जो हरि सिमरत दिन जाइ ॥ १७५ ॥
 जहां ज्ञान तहँ धर्म है जहां भूठ तहँ पाप ।
 जहां लोभ तहँ काल है जहां खिमा तहँ आप ॥ १७६ ॥
 कबीरा तुही कबीरू तू तेरो नाउ कबीर ।
 राम रतन तब पाइयै जौ पहिले तजहि सरीर ॥ १७७ ॥
 कबीरा धूर सकल कै पुरिया बांधो देह ।
 दिवस चारि को पेखना अंत खेह की खेह ॥ १७८ ॥
 कबीरा हमरा कोइ नहीं हम किसहू के नाहि ।
 जिन यहु रचन रचाइया तिसही माहि समाहि ॥ १७९ ॥

कोहै लरका बेचई लरकी बेचै कोइ ।
 सांझा करे कबीर स्यों हरि संग बनज करेइ ॥ १८० ॥
 जहँ अनभौ तहँ भै नहीं जहँ भौ तहँ हरि नाहि ।
 कह्यो कबीर बिचारिकै संत सुनहु मन माहि ॥ १८१ ॥
 जोरी किये जुलम है कहता नाउ हलाल ।
 दफतर लेखा माँगिये तब होइगो कौन हवाल ॥ १८२ ॥
 दूँढत डोले अंध गति अरु चीनत नाहीं संत ।
 कहि नामा क्यों पाइयै बिन भगतहँ भगवंत ॥ १८३ ॥
 नीचे लोइन कर रहौ जे साजन घट मांहि ।
 सब रस खेलो पीय सौं किसी लखावौ नाहि ॥ १८४ ॥
 बूढ़ा बंश कबीर का उपज्यो पूत कमाल ।
 हरि का सिमरन छाड़िकै घर ले आया माल ॥ १८५ ॥
 मारग मोती बोथरे अंधा निकस्यो आइ ।
 जोति बिना जगदीश की जगत उलंघे जाइ ॥ १८६ ॥
 राम पदारथ पाइ कै कबिरा गाँठि न खोल ।
 नहीं पहन नहीं पारखू नहीं गाहक नहीं मोल ॥ १८७ ॥
 सेख सबूरी बाहरा क्या हज काबै जाइ ।
 जाका दिल साबत नहीं ताको कहाँ खुदाइ ॥ १८८ ॥
 सुनु सखी पिउ महि जिउ बसै जिय महि बसै कि पीउ ।
 जीउ पीउ बूझौ नहीं घट महि जीउ कि पीउ ॥ १८९ ॥
 हरि है खांडु रे तुमहि बिखरी हाथों चुनी न जाइ ।
 कहि कबीर गुरु भली बुझाई कीटी होइ के खाइ ॥ १९० ॥
 गगन दमामा बाजिया परयो निसानै घाउ ।
 खेत जु मारयो सूरमा अब जूझन को दाउ ॥ १९१ ॥
 सूर सो पहिचानियै जु लरै दीन के हेत ।
 पुरजा पुरजा कटि मरै कबहुँ न छाड़ै खेत ॥ १९२ ॥

(२) पदावली

अंतरि मैल जे तीरथ न्हावै तिसु बैकुंठ न जाना ।
 लोक पतीणे कछू न होवै नाही राम अयाना ॥
 पूजहु राम एकु ही देवा । साचा नावण गुरु की सेवा ॥
 जल कै मज्जन जे गति होवै नित नित मेडुक न्हावहि ।
 जैसे मेडुक तैसे ओइ नर फिरि फिरि जोनी आवहि ॥
 मनहु कठोर मरै बानारस नरक न बाँच्या जाई ।
 हरि का संत मरै हांडवैत सगली सैन तराई ॥
 दिन सुरैनि वेद नही सासतर तहां बसै निरंकारा ।
 कहि कबीर नर तिसहि धियावहु बावरिया संसारा ॥ १ ॥
 अंधकार सुख कबहिं न सोइहै । राजा रंक दोऊ मिलि रोइहै ॥
 जो पै रसना राम न कहिबो । उपजत बिनसत रोवत रहिबो ॥
 जस देखिय तरवर की छाया । प्राण गये कहु काकी माया ॥
 जस जंती महि जीव समाना । मुये मर्म को काकर जाना ॥
 हंसा सरवर काल सरीर । राम रसाइन पीउ रे कबीर ॥ २ ॥
 अग्नि न दहै पवन नही मगनै तस्कर नेरि न आवै ।
 राम नाम धन करि संचौनी सो धन कतही न जावै ॥
 हमरा धन माधव गोविन्द धरनीधर इहै सार धन कहियै ।
 जो सुख प्रभु गोबिंद की सेवा सो सुख राज न लहियै ॥
 इसु धन कारण सिव सनकादिक खोजत भये उदासी ।
 मन मकुंद जिह्वा नारायन परै न जम की फाँसी ॥
 निज धन ज्ञान भगति गुरु दीनी तासु सुमति मन लागी ।
 जलत अंग थंभि मन धावत भरम बंधन भौ भागी ॥
 कहै कबीर मदन के माते हिरदै देखु बिचारी ।
 तुम घर लाख कोटि अस्व हस्तो हम घर एक मुरारी ॥ ३ ॥

अचरज एक सुनहु रे पंडिया अब किल्लु कहन न जाई ।
 सुर नर गन गंधर्व जिन मोहे त्रिभुवन मेखलि लाई ॥
 राजा राम अनहद किंगुरी बाजै । जाकी दृष्टि नाद लव लागै ॥
 भाठी गगन सिडिया अरु चुंडिया कनक कलस इक पाया ।
 तिस महि धार चुए अति निर्मल रस महि रस न चुआया ॥
 एक जु बात अनूप बनी है पवन पियाला साजिया ।
 तीन भवन महि एको जोगी कहहु कवन है राजा ॥
 ऐसे ज्ञान प्रगट्या पुरुषोत्तम कहु कबीर रंगराता ।
 और दुनी सब भरमि भुलानी मन राम रसाइन माता ॥ ४ ॥

अनभौ कि नैन देखिया बैरागो अड़े ।

बिनु भय अनभौ होइ बणा हंबै ॥

सहुह दूरि देखै ताभौं पवै बैरागा अड़े ।

हुकमै बूझै न निर्भऊ होइ न बणा हंबै ॥

हरि पाखंड न कीजई बैरागी अड़े ।

पाखंडि रता सब लोक बड़ा हंबै ॥

तृष्णा पास न छोड़ई बैरागा अड़े ।

ममता जाल्या पिंड बणा हंबै ॥

चिन्ता जाल तन जालिया बैरागो अड़े ।

जे मन मिरतक होइ बणा हंबै ॥

सत गुरु बिन बैराग न होवई बैरागी अड़े ।

जे लोचै सब कोई बणा हंबै ॥

कर्म होवै सति गुरु मिलै बैरागो अड़े ।

सहजे पावै सोइ बणा हंबै ॥

कहु कबीर इक बेनती बैरागी अड़े ।

मौकौ भव जल पारि उतारि बड़ा हंबै ॥ ५ ॥

अब मोकौ भये राजा राम सहाई ।
 जनम मरन कटि परम गति पाई ॥
 साधू संगति दियो रलाइ ।
 पंच दूत ते लियो छड़ाइ ॥
 अमृत नाम जपौ जप रसना ।
 अमोल दास करि लीनो अपना ॥
 सति गुरु कीनो पर उपकारु ।
 काढि लीन सागर संसारु ॥
 चरन कमल स्यो लागी प्रीति ।
 गोबिंद बसै निता नित चीति ॥
 माया तपति बुझ्या अंग्यारु ।
 मन संतोष नाम आधारु ॥
 जल थल पूरि रहे प्रभु स्वामी ।
 जत पेखैं तत अंतर्यामी ॥
 अपनी भगति आपही दढ़ाई ।
 पूरब लिखतु गिल्या मेरे भाई ॥
 जिसु कृपा करै तिसु पूरन साज ।
 कबीर को स्वामी गरीब निवाज ॥६॥

अब मोहि जलत राम जल पाइया । राम उदक तन जलत बुझाइया ॥
 मन मारन कारन बन जाइयै । सो जल बिन भगवंत न पाइयै ॥
 जेहि पावक सुर नर है जारे । राम उदक जन जलत उबारे ॥
 भवसागर सुखसागर माहीं । पीब रहे जल निखुटत नाहीं ॥
 कहि कबीर भजु सारिंगपानी । राम उदक मेरी तिषा बुझानी ॥७॥
 अमल सिरानो लेखा देना । आये कठिन दूत जम लेना ॥
 क्या तै खटिया कहा गवाया । चलहु सिताब दिवान बुलाया ॥
 चलु दरहाल दिवान बुलाया । हरि फुर्मान दरगह का आया ॥

करौ अरदास गाव किछु बाकी । लेउ निबेर आज की राती ॥
 किछु भी खर्च तुम्हारा सारौ । सुबह निवाज सराइ गुजारौ ॥
 साध संग जाकौ हरि रँग लागा । धन धन सो जन पुरुष सभागा ॥
 ईत ऊत जन सदा सुहेले । जन्म पदारथ जीति अमोले ॥
 जागत सोया जन्म गँवाया । माल धन जोरया भया पराया ॥
 कहु कबीर तेई नर भूले । खसम बिसारि माटी संग रूले ॥ ८ ॥
 अल्लह एकु मसीति बसतु है अवर मुलकु किसु केरा ।
 हिंदू मूरति नाम निवासी दुहमति तत्तु न हेरा ॥
 अल्लह राम जीव तेरी नाई । तू करीमह राम तिसाई ॥
 दक्खन देस हरी का बासा पच्छिम अल्लह मुकामा ।
 दिल महि खोजि दिलै दिल खोजहु एही ठौर मुकामा ॥
 ब्रह्म न ज्ञास करहि चौबीसा काजी महरम जाना ।
 ग्यारह मास पास कै राखे एकै माहि निधाना ॥
 कहा उडीसे मज्जन क्रियां क्या ममीत सिर नाथें ।
 दिल महि कपट निवाज गुजारै क्या हज कावै जायें ॥
 एते औरत मरदा साजे ये सब रूप तुमारे ।
 कबीर पूंगरा राम अल्लह का सब गुरु पीर हमारे ॥
 कहत कबीर सुनहु नर नरवै परहु एक की सरना ।
 केवल नाम जपहु रे प्राणी तबहो निहचै तरना ॥ ९ ॥
 अवतरि आई कहा तुम कीना । राम को नाम न कबहूँ लीना ॥
 राम न जपहु कवन मति लागे । मरि जैबे कौ क्या करहु अभागे ॥
 दुख सुख करिकै कुटंब जिवाया । मरती बार इकसर दुख पाया ॥
 कंठ गहन तब कर न पुकारा । कहि कबीर आगे ते न समारा ॥ १० ॥
 अवर मुये क्या सोग करीजै । तौ कीजै जौ आपन जीजै ॥
 मैं न मरों मरिबो संसारा । अब मोहि मिल्यो है जियावनहारा ॥
 या देही परमल महकंदा । ता सुख बिसरे परमानंदा ॥

कुअटा एकु पंच पनिहारी । दूटी लाजु भरै मतिहारी ॥

कहु कबीर इकु बुद्धि बिचारी । ना ऊ कुअटा ना पनिहारी ॥ ११ ॥

अव्वल अल्लह नूर उपाया कुदरत के सब बंदे ।

एक नूर ते सब जग उपज्या कौन भले को मंदे ॥

लोगा भरमि न भूलहु भाई ।

खालिकु खलक खलक महि खालिकु पूर रह्यो सब ठाई ॥

माटी एक अनेक भाँति करि साजी साजनहारै ।

ना कछु पोच माटी के भाँणे न कछु पोच कुँभारै ॥

सब महि सच्चा एको सोई तिसका किया सब किछु होई ।

हुकम पछानै सु एको जानै बंदा कहियै सोई ॥

अल्लह अलख न जाई लखिया गुरु गुड़ दीना मीठा ।

कहि कबीर मेरी संका नासी सर्व निरंजन डोठा ॥ १२ ॥

अस्थायर जंगम कीट पतंगा । अनेक जनम कीये बहुरंगा ॥

ऐसे घर हम बहुत बसाये । जब हम राम गर्भ होइ आये ॥

जोगी जती तपी ब्रह्मचारी । कबहु राजा छत्रपति कबहु भेखारी ॥

साकत मरहि संत सब जीवहि । राम रसायन रसना पीवहि ॥

कहु कबीर प्रभु किरपा कीजै । हारि परै अब पूरा दीजै ॥ १३ ॥

अहि निसि एक नाम जो जागै । कंतक सिद्ध भये लव लागै ॥

साधक सिद्ध सकल मुनि हारे । एक नाम कलपतरु तारे ॥

जो हरि हरे सु होहि न आना । कहि कबीर राम नाम पछाना ॥ १४ ॥

आकास गगन पाताल गगन है चहु दिसि गगन रहाइले ।

आनँद मूल सदा पुरुषोत्तम घट बिनसै गगन न जाइलै ॥

मोहिं बैराग भयो । इह जीउ आइ कहाँ गयो ॥

पंच तत्व मिलि काया कीनी तत्व कहा ते कीन रे ।

कर्मबद्ध तुम जीउ कहत है कर्महि किन जीउ दान रे ॥

हरि महि तनु है तनु महि हरि है सर्व निरंतर सोइ रे ।
 कहि कबीर राम नाम न छोड़ौ सहजे होइ सु होइ रे ॥ १५ ॥
 आगम दुर्गम गढ़ रचियो बास । जामहि जोति करै परगास ॥
 बिजली चमकै होइ अनंद । जिह पैड़े प्रभु बाल गुबिंद ॥
 इहु जीउ राम नाम लव लागै । जरा मरन छूटे भ्रम भागै ॥
 अबरन बरन स्यों मन ही प्रोति । हैं महि गावन गावहि गीति ॥
 अनहद सबद होत भुनकार । जिह पैड़े प्रभु श्रीगोपाल ॥
 खंडल मंडल मंडल मंडा । त्रिय अस्थान तीनि तिय खंडा ॥
 अगम अगोचर रह्या अभ्यंत । पार न पावै कौ धरनीधर मंत ॥
 कदली पुहुप धूप परगास । रज पंकज महि लियो निवास ॥
 द्वादस दल अभ्यंतर मंत । जह पैड़े श्रीकमलाकंत ॥
 अरध उरध मुख लागे कास । सुन्न मंडल महि करि परगासु ॥
 ऊहां सूरज नाहों चंद । आदि निरंजन करै अनंद ॥
 सो ब्रह्मांडि पिंड सो जानु । मान सरोवर करि स्नानु ॥
 सोहं सो जाकहु है जाप । जाको लिपत न होइ पुन अरु पाप ॥
 अबरन बरन घाम नहि छाम । अबरन पाइयै गुरु की साम ॥
 टारी न टरै आवै न जाइ । सुन्न सहज महि रह्यो समाइ ॥
 मन मद्धे जाने जे कोइ । जे बोलै सो आपै होइ ॥
 जोति मंत्रि मनि अस्थिर करै । कहि कबीर सो प्रानी तरै ॥ १६ ॥
 आपे पावक आपे पवना । जारै खसम त राखै कवना ॥
 राम जपतु तनु जरि किन जाइ । राम नाम चित रह्या समाइ ॥
 काको जरै काहि होइ हानि । नटवर खेलै सारिंगपानि ॥
 कहु कबीर अक्खर दुइ भाखि । होइगा खसम त लेइगा राखि ॥ १७ ॥
 आस पास धन तुरसी का बिरवा माँझ बनारस गाँऊ रे ।
 वाका सरूप देखि मोही ग्वारनि मोकौ छोड़ि न आउ न जाहु रे ॥
 तोहि चरन मन लागो । सारिंगधर सो मिलै जो बड़ भागो ॥

बृंदावन मन हरन मनाहर कृष्ण चरावत गाऊ रे ।
 जाका ठाकुर तुही सारिंगधर मोहि कबीरा नाऊ रे ॥ १८ ॥
 इंद्रलोक सिव लोकै जैवो । ओछे तप कर बाहरि ऐवो ॥
 क्या मांगों किछु थिरु नार्हीं । राम नाम राखु मन माहीं ॥
 सोभा राज बिभव बड़ि पाई । अंत न काहू संग सहाई ॥
 पुत्र कलत्र लछमी माया । इनते कहु कौने सुख पाया ॥
 कहत कबीर अवर नहिं कामा । हमरे मन धन राम को नामा ॥ १९ ॥
 इक तु पतरि भरि उरकट कुरकट इक तु पतरि भरि पानी ।
 आस पास पंच जोगिया बैठे बीच नकट देरानी ॥
 नकटी को ठनगन बाडाहूँ किनहि बिबेकी काटी तूँ ॥
 सकल माहि नकटी का बासा सकल मारिऔ हेरी ।
 सकलिआ की हैं बहिन भानजी जिनहि बरी तिसु चेरी ॥
 हमरो भर्ता बड़ो बिबेकी आपे संत कहावै ।
 ओहु हमारे माथै काइमु और हमरै निकट न आवै ॥
 नाकहु काटी कानहु काटी काटिकूटि कै डारी ।
 कहु कबीर संतन की बैरनि तीनि लोक की प्यारी ॥ २० ॥
 इन माया जगदीस गुसाईं तुमरे चरन बिसारे ।
 किंचित प्रीति न उपजै जन कौ जन कहा करे बेचारे ॥
 धृग तन धृग धन धृग इह माया धृग धृग मति बुधि फन्ना ।
 इस माया कौ दृढ़ करि राखहु बाँधे आप बचनो ॥
 क्या खेंती क्या लेवा देवी परपंच भूठ गुमाना ।
 कहि कबीर ते अंत बिगूते आया काल निदाना ॥ २१ ॥
 इसु तन मन मध्ये मदन चोर । जिन ज्ञानरतन हरि लीन मोर ॥
 मैं अनाथ प्रभु कहाँ काहि । की कौन बिगूतो मैं को आहि ॥
 माधव दारुन दुःख सह्यो न जाइ । मेरो चपल बुद्धि स्यों कहा बसाइ ॥
 सनक सनेदन सिव सुकादि । नाभि कमल जाने ब्रह्मादि ॥

कविजन जोगो जटाधारि । सब आपन औसर चले सारि ॥
तू अथाह मोहि थाह नाहि । प्रभु दीनानाथ दुख कहैं काहि ॥
मेरो जनम मरन दुख आथि धीर । सुखसागर गुन रव कबीर ॥२२॥

इहु धन मेरे हरि को नाउ । गाँठि न बाँधौ बेचि न खाँउ ॥
नाँउ मेरे खेती नाँउ मेरी बारी । भगति करौं जन सरन तुमारी ॥
नाँउ मेरे माया नाँउ मेरे पूँजी । तुमहि छोड़ि जानौ नहि दूजी ।
नाँउ मेरे बंधिय नाँउ मेरे भाई । नाँउ मेरे संगी अंति होइ सखाई ॥
माया महि जिसु रखै उदास । कहि कबीर हैं ताको दास ॥२३॥

उदक समुंद सलल की साख्या नदी तरंग समावहिंगे ।
सुन्नहि सुन्न मिल्या समदर्सी पवन रूप होइ जावहिंगे ॥

बहुरि हम काहि आवहिंगे ।

आवन जाना हुकम तिसै का हुकमै बुझि समावहिंगे ॥
जब चूकै पंच धातु की रचना ऐसे भर्म चुकावहिंगे ।
दर्सन छोड़ भए समदर्सी एको नाम धियावहिंगे ।
जित हम लाए तितही लागे तैसे करम कमावहिंगे ।
हरि जी कृपा करै जौ अपनी तौ गुरु के सबद कमावहिंगे ॥
जीवत मरहु मरहु फुनि जीवहु पुनरपि जन्म न होई ।
कहु कबीर जो नाम समाने सुन्न रह्या लव सोई ॥ २४ ॥
उपजै निपजै निपजिस भाई । नयनहु देखत इहु जग जाई ॥
लाज न मरहु कहौ घर मेरा । अंत की बार नहीं कछु तेरा ॥
अनेक यतन कर काया पाली । मरती बार अगनि संग जाली ॥
चोवा चंदन मर्दन अंगा । सो तनु जलै काठ कै संगी ॥
कहु कबीर सुनहु रे गुनिया । बिनसैगो रूप देखै सब दुनिया ॥२५॥

उलटत पवन चक्र पट भेदे सुरति सुन्न अनुरागी ।

आवै न जाइ मरै न जीवै तासु खोज बैरागी ॥

मेरो मन मनही उलटि समाना ।
 गुरु परसादि अकल भई अवरै ना तरु था बेगाना ॥
 निवरै दूरि दूरि फुनि निवरै जिन जैसा करि मान्या ।
 अलउती का जैसे भया बरेडा जिन पिया तिन जान्या ॥
 तेरी निर्गुण कथा काहि स्यों कहिये ऐसा कोइ विवेकी ।
 कहु कबीर जिन दिया पलीता तिनतै सीभल देखी ॥ २६ ॥
 उलटि जात कुल दोऊ बिसारी । सुन्न सहज महि बुनत हमारी ॥
 हमरा भगारा रहा न कोऊ : पंडित मुल्ला छाड़ै दोऊ ॥
 बुनि बुनि आप आप पहिरावौ । जहँ नहौ आप तहाँ हँ गावौ ॥
 पंडित मुल्ला जो लिखि दीया । छाड़ि चले हम कछू न लीया ॥
 रिदै खलासु निरखि ले मीरा । आपु खोजि खोजि मिलै कबीरा ॥ २७ ॥
 जस्तुति निंदा दोऊ बिबरजित तजहु मानु अभिमाना ।
 लोहा कंचन सम करि जानहि ते मूरति भगवाना ॥
 तेरा जन एक आध कोई ।
 काम क्रोध लोभ मोह बिबरजित हरिपद चीन्है सोई ॥
 रजगुण तमगुण सतगुण कहियै इह तेरी सब माया ।
 चौथे पद को जो नर चीन्है तिनहि परम पद पाया ॥
 तीरथ बरत नेम सुचि संजम सदा रहै निहकामा ।
 त्रिस्ता अरु माया भ्रम चूका चितवत आतमरामा ॥
 जिह मंदिर दीपक परिगास्या अंधकार तह नासा ।
 निरभौ पूरि रहे भ्रम भागा कहि कबीर जनदासा ॥ २८ ॥
 ऋद्धि सिद्धि जाकौ फुरी तब काहू स्यों क्या काज ।
 तेरे कहिने की गति क्या कहैं मैं बोलत ही बड़ लाज ॥
 राम जिह पाया राम । ते भबहि न बारै बार ॥
 भूठा जग डहकै घना दिन दुइ वर्तन की आस ।
 राम उदक जिह जन पिया तिह बहुरि न भई पियास ॥

गुरु प्रसादि जिहि बूझिया आसा ते भया निरास ।
 सब सचुन दरि आइया जौ आतम भया उदास ॥
 राम नाम रस चाखिया हरि नामा हरितारि ।
 बहु कबीर कंचन भया भ्रम गया समुद्रै पारि ॥ २६ ॥
 एक कोट पंचसिक दारा पंचे माँगहि हाला ।
 जिमि नाही मैं किसी की बोई ऐसा देन दुखाला ॥
 हरि के लोगा मोकौ नीति डसै पटवारा ।
 ऊपर भुजा करि मैं गुरु पहि पुकारा तिन है लिया उबारी ॥
 नव डाढी दम मुंमफ धावहि रइयति बसन न देही ।
 डोरी पूरी मापहि नाही बहु बिष्टाला लेही ॥
 बहतरी घर इक पुरुष समाया उन दीया नाम लिखाई ।
 धर्मराय का दफतर सोध्या बाकी रिज मन काई ॥
 संता कौ मति कोई निदहु संत राम है एको ।
 कहु कबीर मैं सो गुरु पाया जाका नाउ बिबेको ॥ ३० ॥
 एक ज्योति एका मिली किम्बा होइ महोइ ।
 जितु घटना मन उपजै फूटि मरै जन सोइ ॥
 सावल सुंदर रामय्या मेरा मन लागा तोहि ॥
 साधु मिलै सिधि पाइयै कियेहु योग कि भोग ।
 दुहु मिलि कारज उपजै राम नाम संजोग ॥
 लोग जानै इहु गीत है इहु तौ ब्रह्म विचार ।
 ज्यो कासी उपदेस होइ मानस मरती बार ॥
 कोई गावै को सुनै हरि नामा चितु लाइ ।
 कहु कबीर संसा नहीं अंत परम गति पाइ ॥ ३१ ॥
 एक खान कै घर गावण ॥
 जननी जानत सुत बड़ा होत है ।
 इतना कुन जानै जि दिन दिन अवध घटत है ॥

मोर मोर करि अधिक लाडु धरि पेखत ही जमराउ हसै ।
 ऐसा तै जगु भरम भुलाया । कैसे बूझे जब मोह्या है माया ॥
 कहत कबीर छोड़ि विषया रस इतु संगति निहचौ मरना ।
 रमय्या जपहु प्राणी अनत जीवण वाणी इन विधि भवसागर तरना ॥
 जांति सुभावै ता लागै भाउ । भर्म भुलावा बिचहु जाइ ॥
 उपजै सहज ज्ञान मति जागै । गुरु प्रसादि अंतर लव लागै ॥
 इतु संगति नाहीं मरणा । हुकम पछाणि ता खस मै मिलणा ॥३२॥
 ऐसो अचरज देख्यो कबीर । दधि कै भोलै विरोलै नीर ॥
 हरी अंगूरी गदहा चरै । नित उठि हासै हीगै मरै ॥
 माता भैसा अम्मुहा जाइ । कुदि कुदि चरै रसातल पाइ ॥
 कहु कबीर परगट भई खेड । ले ले कौ चूधे नित भेड ॥
 राम रमत मति परगटि आई । कहु कबीर गुरु सोभी पाई ॥३३॥
 ऐसो इहु संसार पेखना रहन न कोऊ पैहै रे ।
 सूधे सूधे रेंगि चलहु तुम नतर कुधका दिवैहै रे ॥
 बारे बूढ़े तरुने भैया सबहु जम ले जैहै रे ।
 मानस वपुरा मूसा कीनौ मीच बिलैया खैहै रे ॥
 धनवंता अरु निर्धन मनई ताकी कछू न कानी रे ।
 राजा परजा सम करि मारै ऐसो काल बड़ानी रे ॥
 हरि के सेवक जो हरि भाये तिनकी कथा निरारी रे ।
 आवहि न जाहि न कबहूँ मरते पारब्रह्म संगारी रे ॥
 पुत्र कलत्र लच्छमी माया इहै तजहु जिय जानी रे ।
 कहत कबीर सुनहु रे संतहु मिलिहै सारंगपानी रे ॥ ३४ ॥
 ओई जु दीसहि अंबरि तारे । किन ओइ चीते चीतन हारे ॥
 कहुरे पंडित अंबर कास्यो लागा । बूझै बूझनहार सभागा ॥
 सूरज चंद करहिं उजियारा । सब महि पसरया ब्रह्म पसारया ।
 कहु कबीर जानैगा सोई । हिरदै राम मुखि रामै होई ॥ ३५ ॥

कंचन स्यो पाइयै नही तोलि । मन दे राम लिया है मोलि ॥
 अब मोहि राम अपना करि जान्या । सहज सुभाइ मेरा मन मान्या ॥
 ब्रह्म कथि कथि अंत न पाया । राम भगति बैठे घर आया ॥
 कहु कबीर चंचल मति त्यागी । केवल राम भक्ति निज भागी ॥३६॥
 कत नहीं ठौर मूल कत लावौ । खोजत तनु महि ठौर न पावौ ॥
 लागी होइ सो जानै पीर । राम भगत अनियाले तीर ॥
 एक भाइ देखौ सब नारी । क्या जाना सह कौन पियारी ॥
 कहु कबीर जाके मस्तक भाग । सब परिहरि ताको मिले सुहाग ॥३७॥
 करवतु भला न करवट तेरी । लागु गले सुन बिनती मेरी ॥
 हाँ बारी मुख फेरि पियारे । करवट दे मोकौ काहे कौ मारे ॥
 जौ तन चीरहि अंग न मोरौ । पिंड परै तौ प्रीति न तोरौ ॥
 हम तुम बीच भयो नहीं कोई । तुमहि सुकंत नारि हम सोई ॥
 कहत कबीर सुनहु रे लोई । अब तुमरी परतीति न होई ॥ ३८ ॥
 कहा खान कौ सिमृति सुनाये । कहा साकत पहि हरि गुन गाये ॥
 राम राम राम रमे रमि रहियै । साकत स्यों भूलि नहीं कहियै ॥
 कौआ कहा कपूर चराये । कह बिसियर कौ दूध पिआये ॥
 सत संगति मिलि बिबेक बुधि होई । पारस परस लोहा कंचन सोई ॥
 साकत खान सब करै कहाया । जो धुरि लिख्या सु करम कमाया ॥
 अमिरत लै लै नीम सिचाई । कहत कबीर वाको सहज न जाई ॥३९॥

काम क्रोध तृष्णा के लीने गति नहि एकै जानी ।

फूटी आँखें कछू न सूझै बूढ़ि मुये विनु पानी ॥

चलत कत टेढ़े टेढ़े टेढ़े ।

अस्थि चर्म बिष्टा के मूंदे दुरगंधहि के बेदे ॥

राम न जपहु कौन भ्रम भूले तुमते काल न दूरे ।

अनेक जतन करि इह तन राखहु रहै अवस्था पूरे ॥

आपन कीया कछू न होवै क्या को करै परानी ।
 जाति सुभावै सति गुरु भेटै एको नाम बखानी ॥
 बलुवा के घरुआ मैं बसते फुलवत देह अयाने ।
 कहु कबीर जिह राम न चेल्यो बूढ़े बहुत सयाने ॥ ४० ॥
 काया कलालनि लादनि मेलौ गुरु का सबद गुड़ कीनु रे ।
 त्रिल्ला काम क्रोध मद मतसर काटि काटि कसु दीनु रे ॥
 कोई हेरै संत सहज सुख अंतरि जाकौ जप तप देउ दलाली रे ।
 एक बूढ़ भरि तन मन देवो जो मद देख कलाली रे ॥
 भवन चतुरदस भाटी कीनी ब्रह्म अग्नि तन जारी रे ।
 मुद्रा मदक सहज धुनि लागी सुखमन पोचनहारी रे ॥
 तीरथ वरत नेम सुचि संजम रवि ससि गहनै देउ रे ।
 सुरति पियास सुधारसु अमृत एहु महारसु पेउ रे ॥
 निरभर धार चुआँ अति निर्मल इह रस मनुआ रातो रे ।
 कहि कबीर सगले मद छूछे इहै महारस साचो रे ॥ ४१ ॥
 कालवृत की हस्तनी मन बैरा रे चलत रच्यो जगदीस ।
 काम सुजाइ गज वसि परे मन बैरा रे अंकसु सहियो सीस ॥
 विषय बाचु हरि राचु सम भुमन बैरा रे ।
 निर्भय होइ न हरि भजे मन बैरा रे गह्यो न राम जहाज ॥
 मर्कट मुष्टी अनाज की मन बैरा रे लीनी हाथ पसारि ।
 छूटन को संसा परया मन बैरा रे नाच्यो घर घर बारि ॥
 ज्यो नलनी सुअटा गह्यो मन बैरा रे माया इहु व्योहारु ।
 जैसा रंग कसुंम का मन बैरा रे त्यो पसरयो पासारु ॥
 न्हावन कौ तीरथ घने मन बैरा रे पूजन कौ बहु देव ।
 कहु कबीर छूट न नहीं मन बैरा रे छूट न हरि की सेव ॥ ४२ ॥
 काहू दीने पाट पटम्बर काहू पलघ निवारा ।
 काहू गरी गोदरी नाही काहू खान परारा ॥

अहि रख बाहु न कीजै रं मन । सुकृत करि करि लीजै रे मन ॥

कुमारै एक जु माटी गूंधी बहु विधि बानी लाई ।

काहू महि मोती मुकताहल काहू व्याधि लगाई ॥

सूमहि धन राखन कौ दीया मुगध कहै धन मेरा ।

जम का डंड मूंड महि लागै खिन महि करै निबेरा ॥

हरि जन ऊतम भगत सदावै आज्ञा मन सुख पाई ।

जो तिसु भावै सति करि मानै भाणा मंत्र बसाई ॥

कहै कबीर सुनहु रे संतहु मेरी मेरी भूठो ।

चिरगट फारि चटारा लै गयो तरी तागरी छूटी ॥ ४३ ॥

किनही बनज्या कांसा ताबा किनहों लौंग सुपारी ।

संतहु बनज्या नाम गोविंद का ऐसी खेप हमारी ॥

हरि के नाम के व्यापारी ।

हीरा हाथ चढ़्या निर्मोलक छूटि गई संसारी ॥

सांचे लाए तो सच लागे सांचे के व्यापारी ।

सांची वस्तु के भार चलाए पहुँचे जाइ भंडारी ॥

आपहि रतन जवाहर मानिक आपै है पासारी ।

आपै है दस दिसि आप चलावै निहचल है व्यापारी ॥

मन करि बैल सुरति करि पैडा ज्ञान गोनि भरि डारी ।

कहत कबीर सुनहु रे संतहु निबही खेप हमारी ॥ ४४ ॥

कियो सिंगार मिलन के ताई । हरि न मिले जग जीवन गुसाई ॥

हरि मेरो पिर है हरि की बहुरिया । राम बड़े मैं तनरु लहुरिया ॥

धनि पिय एकै संग बसेरा । सेज एक पै मिलन दुहेरा ॥

धन सुहागनि जो पिय भावै । कहि कबीर फिर जनमि न आवै ॥ ४५ ॥

कूटन सोइ जु मन को कूटै । मन कूटै तो जम ते छूटै ॥

कुटि कुटि मन कसवही लावै । सो कूटनि मुक्ति बहु पावै ॥

कूटन किसै कहहु संसार । सकल बोलन के माहि बिचार ॥

नाचन सोइ जु मन स्यों नाचै । भूठ न पतियै परचै साचै ॥
 इसु मन आगे पूरै ताल । इसु नाचन के मन रखवाल ॥
 बाजारी सो बजारहि सोधै । पाँच पलोतह कौ परबोधै ॥
 नव नायक की भगति पछाने । सो बाजारी हम गुरु माने ॥
 तस्कर सोइ जिता तित करै । इन्द्रो कै जतनि नाम ऊचरै ॥
 कहु कबीर हम ऐसे लक्खन । धन्न गुरुदेव अति रूख बिचक्खन ॥४६॥
 कोऊ हरि समान नहीं राजा ।

ए भूपति सब दिवस चारि के भूठे करत दिवाजा ॥
 तेरो जन होइ सोइ कत डोलै तीनि भवन पर छाजा ।
 हाथ पसारि सकै को जन कौ बोलि सकै न अंदाजा ॥
 चेति अचेति मूढ़ मन मेरे बाजे अनहद वाजा ।
 कहि कबीर संसा भ्रम चूको ध्रु प्रह्लाद निवाजा ॥ ४७ ॥
 कोटि सूर जाकै परगास । कोटि महादेव अरु कबिलास ॥
 दुर्गा कोटि जाकै मर्दन करै । ब्रह्मा कोटि वेद उच्चरै ॥
 जौ जाचौ तौ कंवल राम । आन देव स्यो नाहों काम ॥
 कोटि चंद्र में करहि चराक । सुरते तीसौ जेवहि पाक ॥
 नव ग्रह कोटि ठाढ़े दरबार । धर्म कोटि जाके प्रतिहार ॥
 पवन कोटि चौबारे फिरहि । वासक कोटि सेज विस्तरहि ॥
 समुंद कोटि जाके पानीहार । रोमावलि कोटि अठारहि भार ॥
 कोटि कुबेर भरहि भंडार । कोटिक लखमी करै सिंगार ॥
 कोटिक पाप पुन्र बहु हिराहि । इंद्र कोटि जाके सेवा करहि ॥
 छप्पन कोटि जाके प्रतिहार । नगरी नगरी खियत अपार ॥
 लट लूटी बरतै विकराल । कोटि कला खेलै गोपाल ॥
 कोटि जग जाकै दरवार । गंधर्व कोटि करहि जयकार ॥
 विद्या कोटि सबै गुन कहै । ताऊ पारब्रह्म का अंत न लहै ॥
 बावन कोटि जाकै रोमावली । रावन सैना जह ते छली ॥

सहस्र कोटि बहु कहत पुरान । दुर्योधन का मथिया मान ॥
 कंदर्प कोटि जाकै लवै न धरहि । अंतर अंतरि मनसा हरहि ॥
 कहि कबीर सुनि सारंगपान । देहि अभयपद मानौ दान ॥ ४८ ॥
 कोरी को काहू मरम न जाना । सब जग आन तनायो ताना ॥
 जब तुम सुनि ले बेद पुराना । तब हम इतन कुप सरयो ताना ॥
 धरनि अकास की करगह बनाई । चंद सुरज दुइ साथ चलाई ॥
 पाई जोरि बात इक कीनी तह ताती मन माना ।
 जोलाहे घर अपना चीना घट ही राम पछाना ॥
 कहत कबीर कारगह तोरी । सूतै सूत मिलाये कोरी ॥ ४९ ॥
 कौन काज सिरजे जग भीतरि जनमि कौन फल पाया ।
 भव निधि तरन तारन चिंतामनि इक निमप न इहु मन लाया ॥
 गोविंद हम ऐसे अपराधी ।
 जिन प्रभु जीउ पिंड था दियो तिसकी भाव भगति नहिं साधी ॥
 परधन परतन परतिय निंदा पर अपवाद न छूटै ।
 आवागमन होत है फुनि फुनि इहु पर संग न छूटै ॥
 जिह घर कथा होत हरि संतन इक निमेष न कीनो मैं फेरा ।
 लंपट चोर धूत मतवारे तिन सँगि सदा बसेरा ॥
 काम क्रोध माया मद मत्सर ए सम्पै मो माही ।
 दया धर्म ओ गुरु की सेवा ए सुपनंतरि नाही ॥
 दोन दयाल कृपाल दमोदर भगति बल्लभ भैहारी ।
 कहत कबीर भीर जनि राखहु हरि सेवा करौ तुमारी ॥ ५० ॥
 कौन को पूत पिता को काकौ । कौन मेरे को देख संतापो ॥
 हरि ठग जग कौ ठगौरी लाई । हरि के वियोग कैसे जियो मेरी माई ॥
 कौन को पुरुष कौन की नारी । या तत लेहु सरीर बिचारी ॥
 कहि कबीर ठग स्यों मन मान्या । गई ठगौरी ठग पहि चान्या ॥ ५१ ॥
 क्या जप क्या तप क्या व्रत पूजा । जाकै रिदै भाव है दूजा ॥

रे जन मन माधव स्यों लाइयै । चतुराई न चतुर्भुज पाइयै ॥
 परिहरि लोभ अरु लोकाचार । परिहरि काम क्रोध अहंकार ॥
 कर्म करत बद्धे अहंमेव । मिल पाथर की करही सेव ॥
 कहु कबीर भगत कर पाया । भोले भाइ मिले रघुराया ॥ ५२ ॥
 क्या पढ़िये क्या गुनियै । क्या बंद पुराना सुनियै ॥
 पढ़े सुनै क्या होई । जौ सहज न मिलियो सोई ॥
 हरि का नाम न जपसि गवारा । क्या सोचहि बारंबारा ॥
 अंधियारे दीपक चहियै । इक वस्तु अगोचर लहियै ॥
 वस्तु अगोचर पाई । घट दीपक रह्या समाई ॥
 कहि कबीर अब जान्या । जब जान्या तौ मन मान्या ॥
 मन माने लोग न पतीजै । न पतीजै तौ क्या कीजै ॥ ५३ ॥
 खसम मरे तौ नारी न रोवै । उस रखवारा औरो होवै ॥
 रखवारे का होइ बिनास । आगै नरक ईहा भोग बिलास ॥
 एक सुहागनि जगत पियारी । सगले जीय जंत कीना नारी ॥
 सोहागनि गल सोहै हार । संत को विष विगसै संसार ॥
 करि सिंगार बहै पखियारी । संत की ठिठकी फिरै बिचारी ॥
 संत भागि ओह पाछै परै । गुरु परसादी मारहु डरै ॥
 साकत की ओह पिंड पराइणि । हमकौ दृष्टि परै त्रिखि डाइणि ॥
 हम तिसका बहु जान्या भेव । जबहु कृपाल मिले गुरु देव ॥
 कहु कबीर अब बाहर परी । संसारै कै अंचल लरी ॥ ५४ ॥
 गंग गुसाइन गहिर गंभीर । जंजीर बांधि करि खरे कबीर ॥
 मन न डिगै तन काहे को डराइ । चरन कमल चित रह्यो समाइ ॥
 गंगा की लहरि मेरी दुटी जंजीर । मृगछाला पर बैठे कबीर ॥
 कहि कबीर कोऊ संग न साथ । जल थल राखन है रघुनाथ ॥ ५५ ॥
 गंगा के संग सलिता बिगरी । सो सलिता गंगा होइ निबरी ॥
 बिगरयो कबीरा राम दुहाई । साचु भयो अन कतहि न जाई ॥

चन्दन कै संगि तरवर बिगरयो । सो तरवर चन्दन है निबरयो ॥
 पारस के सँग ताँबा बिगरयो । सो ताँबा कंचन है मिबरयो ॥
 संतन संग कबीरा बिगरयो । सो कबीर राम है निबरयो ॥ ५६ ॥

गगन नगरि इक बूँद न वधैं नाद कहा जु समाना ।
 पारब्रह्म परमेसरु माधव परम हंस ले सिधाना ॥
 बाबा बोलते ते कहा गये । देही के संगि रहते ।
 सुरति माहि जो निरते करते कथा वार्त्ता कहते ॥
 बजावन-हारो कहाँ गयो जिन इहु मंदर कीना ।
 साखी सबद सुरति नहीं उपजै खिंच तेज सब लीना ॥
 स्रवनन बिकल भये संगि तेरे इंद्रो का बल थाका ।
 चरन रहे कर ढरक परे हैं मुखहु न निकसै बाता ॥
 थाके पंचदूत सब तस्कर आप आपणे भ्रमते ।
 थाका मन कुंजर उर थाका तेज सूत धरि रमते ॥
 मिरतक भये दसै बंद छूटे मित्र भाई सब छोरे ।
 कहत कबीरा जो हरि ध्यावै जीवत बंधन तोरे ॥ ५७ ॥

गगन रसाल चुए मेरी भाठी । संचि महारस तन भया काठी ॥
 वाकौ कहियै सहज मतवारा । पीवत राम रस ज्ञान बिचारा ॥
 सहज कलालनि जौ मिलि आई । आनंदि माते अनदिन जाई ॥
 चीन्हत चोत निरंजन लाया । कहु कबीर तौ अनुभव पाया ॥ ५८ ॥

गज नव गज दस गज इक्कीस पुरी आये कत नाई ।
 साठ सूत नव खंड बहत्तर पाटु लगो अधिकारी ॥
 गई बुनावन माहो । घर छोड़्यो जाइ जुलाहो ॥
 गजी न मिनियै तोलि न तुलियै पाँच न सेर अढ़ाई ।
 जौ करि पाचन बेगि न पावै भगरू करै घर आई ॥
 दिन की बैठ खसम की बरकस इह बेला कत आई ।
 छूटे कूंडे भीगै पुरिया चल्यो जुलाहो रिसाई ॥

छोछो नली तंतु नहीं निकसै नतर रही उरभाही ।
 छोड़ि पसारई हारहु बपुरो कहु कबीर समुभाही ॥ ५६ ॥

गज साढे तै तै धोतिया तिहरे पाइनि तगा ।
 गली जिना जपमालिया लोटे हथिनि बग्गा ॥

ओइ हरि के संतन आखि यहि बानारसि के ठग्गा ॥
 ऐसे संत न मोकौ भावहि । डाला स्यों पेड़ा गटकावहि ॥

बासन मानि चरावहि ऊपर काठी धोइ जलावहि ।
 बसुधा खेदि करहि दुइ चूल्हे सारे माणस खावहि ॥

ओई पापी सदा फिरहि अपराधी मुखहु अपरस कहावहि ।
 सदा सदा फिरहि अभिमानी सकल कुटंब डुबावहि ॥

जित को लाया तितही लागा तैसै करम कमावै ।
 कहु कबीर जिसु सति गुरु भेटै पुनरपि जनमि न आवै ॥ ६० ॥

गर्भ वास महि कुल नहिं जाती । ब्रह्म बिंद ते सब उत्पत्ती ॥
 कहुरे पंडित बामन कब के होये । बामन कहि कहि जनम मति खोये ॥

जौ तू ब्राह्मण ब्राह्मणी जाया । तौ आन बाट काहे नहीं आया ॥
 तुम कत ब्राह्मण हम कत शूद्र । हम कत लोहू तुम कत दूध ॥

कहु कबीर जो ब्रह्म बिचारै । सो ब्राह्मण कहियत है हमारे ॥ ६१ ॥

गुड़ करि ज्ञान ध्यान करि महुवा भाठी मन धारा ।
 सुषमन नारी सहज समानी पीवै पीवन हारा ॥

अवधू मेरा मम मतबारा ।
 उन्मद चढ़ा रस चारुवा त्रिभवन भया उजियारा ॥

दुइ पुर जोरि रसाई भाठी पीठ महा रस भारी ।
 काम क्रोध दुइ किये जले ता छूटि गई संसारी ॥

प्रगट प्रगास ज्ञान गुरु गम्भित सति गुरु ते सुधि पाई ।
 दास कबीर तासु मदमाता उचकि न कबहू जाई ॥ ६२ ॥

गुरु चरण लागि हम बिनवत पूछत कह जीव पाया ।
 कौन काज जग उपजै बिनसै कहहु मोहि ममभाया ॥
 देव करहु दया मोहि मारग लावहु जितु भव बंधन दूटै ।
 जनम मरण दुख फेड़ कर्म सुख जीय जनम ते छूटै ॥
 माया फांस बंधन ही कारै अरु मन सुनि न लूके ।
 आपा पद निर्वाण न चोन्हा इन विधि अभिउ न चूके ॥
 कही न उपजै उपजी जाणै भाव प्रभाव विहृणा ।
 उदय अस्त की मन बुधि नासी तौ सदा सहजि लव लीया ॥
 ज्यो प्रतिबिंब बिंध कौ मिलिहै उदक कुंभ बिगराना ।
 कहु कबीर ऐसा गुण भ्रम भागा तौ मन सुन्न समाना ॥६३॥

गुरु सेवा ते भगति कमाई । तब इह मानस देही पाई ॥
 इस देही कौ सिमरहि देव । सो देही भुज हरि की सेव ॥
 भजहु गुबिंद भूलि मत जाहु । मानस जनम का रही चाहु ॥
 जब लग जरा रोग नहि आया । जब लग काल गसी नहि काया ॥
 जब लग बिकल भई नहों बानी । भजि लेहि रे मन सारंगपानी ॥
 अब न भजसि भजसि कब भाई । आवै अंत न भजिआ जाई ॥
 जो किछु करहि सोई अवि सारु । फिर पछताहु न पावहु पारु ॥
 सो सेवक जो लाया सेव । तिनही पाये निरंजन देव ॥
 गुरु मिलि ताके खुले कपाट । बहुरि न आवै योनी बाट ॥
 इही तेरा अवसर इह तेरी बार । घट भीतर तू देखु बिचारि ॥
 कहत कबीर जीति कै हारि । बहु विधि कह्यो पुकारि पुकारि ॥६४॥

गृह तजि बन खंड जाइयै चुनि खाइयै कंदा ।
 अजहु बिकार न छोड़ि पापी मन मंदा ॥
 क्यों छूटों कैसे तरौ भव निधि जल भारी ।
 राखु राखु मेरे बीठुला जन सरनि तुमारी ॥

विषय विषय की वासना तजिय न जाई ।

अनिक यत्न करि राखियै फिरि फिरि लपटाई ॥

जरा जावन जोबन गया कछु किया न नीका ।

इह जीया निर्मोल को कौड़ी लगि मीका ॥

कहु कबीर मेरे माधवा तू सर्वव्यापी ।

तुम सम सरि नाहीं दयाल मो सम सरि पापी ॥ ६५ ॥

गृह सोभा जाकै रे नाहि । आवत पहिया खूधे जाहि ॥

वाकै अंतर नहीं संतोष । विन सोहागनि लागै दोष ॥

इन सोहागनि महा पवीत । तपे तपीसर डालै चीत ॥

सोहागनि किरपन की पूती । सेवक तजि जग तस्यो सूती ॥

साधू कै ठाढी दरबारि । सरनि तेरी मोकौ निस्तारि ॥

सोहागनि है अति सुंदरी । पगनेवर छनक छन हरी ॥

जौ लग प्रान तऊ लग संगे । नाहिन चली बेगि उठि नंगे ॥

सोहागनि भवन त्रै लीया । दस अष्ट पुराण तीरथ रस कीया ॥

ब्रह्मा विष्णु महेसर बेधे । बड़े भूपति राजे है छेधे ॥

सोहागनि उर वारि न पारि । पाँच नारद कै संग बिधवारि ॥

पाँच नारद को मिटवे फूटे । कहु कबीर गुरु किरपा छूटे ॥ ६६ ॥

चंद सूरज दुइ जोति सरूप । जोती अंतरि ब्रह्म अनूप ॥

करु रे ज्ञानी ब्रह्म बिचारु । जोती अंतरि धरि आप सारु ॥

हीरा देखि हीरै करौ आदेस । कहै कबीर निरंजन अलखु ॥ ६७ ॥

चरन कमल जाकै रिदै बसै सो जन क्यों डोलै देव ।

मानौ सब सुख नवनिधि ताके सहजि सहजि जस बोलै देव ॥

तब इह मति जौ सब महि पेखै कुटिल गांठि जब खोलै देव ।

बारंबार माया ते अटकै लै नरु जा मन तोलै देव ॥

जहँ उह जाइ तहाँ सुख पावै माया तासु न भोलै देव ।

कहि कबीर मेरा मन मान्या राम प्रीति की ओलै देव ॥ ६८ ॥

चार पाव दुइ सिंग गुंग मुख तब कैसे गुन गैहै ।
 ऊठत बैठत ठेगा परिहै तब कत मूढ लुकै है ॥
 हरि बिन बैल बिराने हैहै ।
 फाटे नाक न टूटै का धन कोदौ को भुस खैहै ॥
 सारो दिन डोलत बन महिया अजहु न पैट अघैहै ।
 जन भगतन को कहे न मानो कीयो अपनो पैहै ॥
 दुख सुख करत महा भ्रम बूझौ अनिक योनि भरमैहै ।
 रतन जनम खोयो प्रभु बिसरयो इह अवसर कत पैहै ॥
 भ्रमत फिरत तेलक के कपि ज्यों गति बिनु रैन बिहैहै ।
 कहत कबीर राम नाम बिनु मूंड धुनै पछितैहै ॥६८॥
 चारि दिन अपनी नौबति चले वजाइ ।
 इतन कु खटिया गठिया मटिया संगि न कछु लै जाइ ॥
 देहरी बैठी मेहरी रोवै हारे लौ संग माइ ।
 मरदट लगि सब लोग कुटुंब मिलि हंस इकेला जाइ ॥
 बैसु तबै वितबै पुर पाटन बहुरि न देखै आई ।
 कहत कबीर राम की न सिमरहु जन्म अकारथ जाई ॥ ७० ॥
 चोवा चंदन मर्दन अंगा । सो तन जलै काठ कै संग ॥
 इसु तन धन की कौन बड़ाई । धरनि परै उरवारि न जाई ॥
 रात जि सेवहि दिन करहि काम । इक खिन लेहि न हरि को नाम ॥
 हाथि त डोर मुख खायो नंबोर । मरती बार कसि बाँध्यो चोर ॥
 गुरु मति रहि रसि हरि गुन गावै । रामै राम रमत सुख पावै ॥
 किरपा करि कै नाम हढ़ाई । हरि हरि वास सुगंध बसाई ॥
 कहत कबीर चेत रे अंधा । सत्य राम भूठा सब धंधा ॥ ७१ ॥
 जग जीवन ऐसा सुपने जैसा जीवन सुपन समान ।
 साचु करि हम गाँठ दीनी छोड़ि परम निधान ।
 बाबा माया मोह हितु कीन । जिन ज्ञान रतन हिरि लीन ॥

नयन देखि पतंग उरभै पसु न देखै आगि ।
 काल-फास न मुगध चेतै कनिक कामिनि लागि ॥
 करि बिचारि बिकार परिहरि तरन तारन सोइ ।
 कहि कबीर जग जीवन ऐसा दुतिया नहीं कोइ ॥ ७२ ॥

जन्म मरन का भ्रम गया गोविंद लिव लागी ।
 जीवत सुनि समानिया गुरु साखी जागी ॥
 कासी ते धुनि ऊपजै धुनि कासी जाई ।
 कासी फूटी पंडिता धुनि कहाँ समाई ॥
 त्रिकुटी संधि में पेखिया घटहू घट जागी ।
 ऐसी बुद्धि समाचरी घट माहिं तियागी ॥
 आप आप ते जानिया तेज तेज समाना ।
 कहु कबीर अब जानिया गोविंद मन माना ॥ ७३ ॥

जब जरियै तब होइ भसम तन रहै किरम दल खाई ।
 काची गागरि नीर परतु है या तन की इहै बडाई ॥
 काहे भया फिरतौ फूला फूला ।

जब दस मास उरध मुख रहता सो दिन कैसे भूला ॥
 ज्यों मधु मक्खी त्यों सठोरि रसु जोरि जोरि धन कीया ।
 मरती बार लेहु लेहु करियै भूत रहन क्यों दीया ॥
 देहुरी लौं वरी नारि संग भई आगै सजन सुहेला ।
 मरघट लौं सब लागे कुटुंब भयो आगे हंस अकेला ॥
 कहत कबीर सुनहु रे प्राणी परे काल ग्रस कूआ ।
 भूठी माया आप बंधाया ज्यों नलनी भ्रमि सूआ ॥ ७४ ॥

जब लग तेल दीवे मुख बाती तब सूझै सब कोई ।
 तेल जलै बाती ठहरानी सूना मंदर होई ॥
 रे बौरे तुहि घरी न राखै कोई । तूं राम नाम जपि सोई ॥

काकी मात पिता कहु काको कौन पुरुष की जोई ।
 घट फूटे कोऊ बात न पृछै काढहु काढहु होई ॥
 देहुरी बैठी माता रौवै खटिया ले गये भाई ।
 लट छिटकाये तिरिया रोवै हंस इकेला जाई ॥
 कहत कबीर सुनहु रे संतहु भैसागर कै ताई ।
 इस बंदे सिर जुलम होत है जम नहीं घटै गुसाई ॥ ७५ ॥
 जब लग मेरी मेरी करै । तब लग काज एक नहि सरै ॥
 जब मेरी मेरी मिटि जाई । तब प्रभु काज सवारहि आई ॥
 ऐसा ज्ञान बिचारु मना । हरि किन सिमरहु दुःखभंजना ॥
 जब लगि सिंघ रहै बन माहि । तब लग बन फूलई नाहि ॥
 जब ही स्यार सिंघ कौ खाइ । फूल रही सगली वनराइ ॥
 जीतो बूडै हारो तरै । गुरु परसादि पार उतरै ॥
 दास कबीर कहै समझाइ । केवल राम रहहु लिव लाइ ॥ ७६ ॥
 जब हम एको एक करि जानिया । तब लोग काहे दुख मानिया ॥
 हम अपतह अपनी पति खोई । हमरै खोज परहु मति कोई ॥
 हम मंदे मंदे मन माही । साँभ पाति काहु स्यों नाहीं ॥
 पति मा अपति ताकी नहीं लाज । तब जानहु गे जब उघरै गो पाज ॥
 कहु कबीर पति हरि पखानु । सरब त्यागि भजु केवल रामु ॥ ७७ ॥
 जल महि मीन माया के वेधे । दीपक पतंग माया के छेदे ॥
 काम माया कुंचर कौ ज्यापै । भुअंगम भृंग माया माहि खापै ॥
 माया ऐसी मोहनी भाई । जेते जीय तेते डहकाई ॥
 पंखी मृग माया महि राते । साकर मांखी अधिक संतापे ॥
 तुरे उष्ट माया महि भेला । सिध चौरासी माया महि खेला ॥
 छिय जती माया के बन्दा । नवै नाथु सूरज अरु चंदा ॥
 तपे रखीसर माया महि सूता । माया महि काल अरु पंच दूता ॥
 स्वान स्याल माया महि राता । बंतर चीते अरु सिंघाता ॥

माजार गाडर अरु लूबरा । बिरख मूल माया महि परा ॥

मया अन्तर भीने देव । सागर इन्द्रा अरु धरतेव ॥

कहि कबीर जिसु उदर तिसु माया । तब छूटै जब साधू पाया ॥७८॥

जल है सूतक थल है सूतक सूतक ओपति होई ।

जनमे सूतक मुए फुनि सूतक सूतक परज बिगोई ॥

कहुरे पंडिया कौन पवीता । ऐसा ज्ञान जपहु मेरे भीता ॥

नैनहु सूतक बैनहु सूतक सूतक स्रवनी होई ।

ऊठत बैठत सूतक लागै सूतक परै रसोई ॥

फांसन की विधि सब कोऊ जानै छूटन की इकु कोई ।

कहि कबीर राम रिदै विचारै सूतक तिनै न होई ॥ ७९ ॥

जहँ किछु अह्रा तहँ किछु नाही पंच तत्त्व तह नाहीं ।

इड़ा पिंगला सुषमन बंदे ये अबगुन कत जाहीं ॥

तागा तूटा गगन बिनसि गया तेरा बोलत कहा समाई ।

एह संसा मोको अनदिन व्यापै मोको कौन कहै समझाई ॥

जह ब्रह्मंड पिंड तह नाही रचनहार तह नाही ।

जोड़नहारो सदा अतीता इह कहियै किसु माही ॥

जोड़ी जुड़ै न तोड़ी तूटै जब लग होइ बिनासी ।

काको ठाकुर काको सेवक को काहू के जासी ॥

कहु कबीर लिव लागि रही है जहाँ बसै दिन राती ।

बाका मर्म बोही पर जानै ओहु तो सदा अविनासी ॥ ८० ॥

जाके निगम दूध के ठाटा । समुंद विलोवन को माटा ॥

ताकी होहु विलोवनहारी । क्यों मेटैगी छाछि तुम्हारी ॥

चेरी तू राम न करसि भतारा । जग जीवन प्रान अधारा ॥

तेरे गलहि तौक पग बेरी । तू घर घर रमिए फेरी ॥

तू अजहु न चेतसि चेरी । तू जेम बपुरी है हेरी ॥

प्रभु करन करावन हारी । क्या चेरी हाथ बिचारी ॥

सोई सोई जागी । जितु लाई तितु लागी ॥
 चेरी तै सुमति कहाँ ते पाई । जाके भ्रम की लीक मिटाई ॥
 सुरसु कबीरै जान्या । मेरो गुरु प्रसाद मन मान्या ॥ ८१ ॥
 जाके हरि सा ठाकुर भाई । मुक्ति अनन्त पुकारन जाई ॥
 अब कहु राम भरोसा तोरा । तब काहू का कौन निहोरा ॥
 तीनि लोक जाके हहि भार । सो काहे न करै प्रतिपार ॥
 कहु कबीर इक बुद्धि विचारी । क्या बस जौ विष दे महतारी ॥ ८२ ॥

जिन गढ़ कोटि किए कंचन के छोड़ गया सो रावन ।
 काहे कीजत है मन भावन ॥
 जब जम आइ कोस ते पकरै तह हरि को नाम छड़ावन ॥
 काल अकाल खसम का कीना इहु परपंच बधावन ।
 कहि कबीर ते अंते मुक्ते जिन हि दै राम रसायन ॥ ८३ ॥

जिह मुख वेद गायत्री निकसे सो क्यों ब्रह्मन बिसरु करै ।
 जाके पाय जगत सब लागै सो क्यों पंडित हरि न कहै ॥
 काहे मेरे ब्राह्मन हरि न कहहि । रामु न बोलहि पांडेदोजक भरहि ॥
 आपन ऊच नीच घरि भोजन हठे करम करि उदर भरहि ।
 चौदस अमावस रचि रचि मांगहि कर दैपक लै कूप परहि ॥
 तूं ब्रह्मन मैं कासी का जुलहा मोहि तोहि बरावरि कैसे कै बनहि ।
 हमरे राम नाम कहि उबरे वेद भरोसे पांडे डूब मरहि ॥ ८४ ॥

जिह कुल पूत न ज्ञान विचारी । विधवा कस न भई महतारी ॥
 जिह नर राम भगति नहीं साथी । जनमत कस न मुयो अपराधी ॥
 मुचमुच गर्भ गये कीन बचिया । बुड़ भुज रूप जीवे जग सभिया ॥
 कहु कबीर जैसे सुंदर स्वरूप । नाम बिना जैसे कुबज कुरूप ॥ ८५ ॥
 जिह मरनै सब जगत तरास्या । सो मरना गुरु सबद प्रगास्या ॥
 अब कैसे मरौ मरन मन मान्या । मर मर जाते जिन राम न जान्या ॥

मरनौ मरन कहै सब कोई । सहजे मरै अमर होइ सोई ॥
 कहु कबीर मन भया अनंदा । गया भरम रहा परमानंदा ॥८६॥
 जिह सिमरनि होइ मुक्ति दुवार । जाहि बैकुंठ नहो संसारि ॥
 निर्भव कै घर बजावहि तूर । अनहद बजहि सदा भरपूर ॥
 ऐसा सिमरन कर मन माहि । बिनु सिमरन मुक्ति कत नाहि ॥
 जिह सिमरन बाही ननकारु । मुक्ति करै उतरै बहुभारु ॥
 नमस्कार करि हिरदय मांहि । फिर फिर तेरा आवन नाहिं ॥
 जिह सिमरन करहि तू केल । दीपक बाँधि धरयो तिन तेल ॥
 सो दीपक अमर कु संसारि । काम क्रोध विष काढिले मार ॥
 जिह सिमरन तेरी गति होइ । सो सुमिरन रखु कंठ पिरोइ ॥
 सो सिमरन करि नहीं राखु उतारि । गुरु परसादी उतरहि पार ॥
 जिह सिमरन नाही तुहि कान । मंदर सोवहि पटंबरि तानि ॥
 सेज सुखाली बिगसै जीउ । सो सिमरन तू अनहद पीउ ॥
 जिह सिमरन तेरी जाइ बलाई । जिह सिमरन तुझ पोहै न माई ॥
 सिमरि सिमरि हरि हरि मन गाइयै । इह सिमरन सति गुरु ते पाइयै ॥
 सदा सदा सिमरि दिन राति । ऊठत बैठत सासि गिरासि ॥
 जागु सोई सिमरन रस भोग । हरि सिमरन पाइयै संजोग ॥
 जिह सिमरन नाहो तुझ भाऊ । सो सिमरन राम नाम अधारु ॥
 कहि कबीर जाकानहीं अंतु । तिसके आगे तंतु न मंतु ॥८७॥
 जिहि मुखि पाँचौ अमृत खाये । तिहि मुख देखत लूकट लाये ॥
 इक दुख राम राइ काटहु मेरा । अग्नि दहै अरु गरभ बसेरा ॥
 काया बिगूति बहु बिधि माती । को जारे को गड़ले माटी ॥
 कहु कबीर हरि चरण दिखावहु । पाछे ते जम कों न पठावहु ॥८८॥
 जिह सिर रचि रचि बाँधत पाग । सो सिर चुंस सबारहि काग ॥
 इसु तन धन कौ क्या गर्बीय्या । राम नाम काहे न दृढ़ीया ॥
 कहत कबीर सुनहु मन मेरे । इही हवाल होहिंगे तेरे ॥ ८९ ॥

जीवत पितर न माने कोऊ मुएं सराद्ध कराही ।
 पितर भी बपुरे कहु क्यो पावहि कौआ कूकर खाही ॥
 भोंकौ कुसल बतावहु कोई ।
 कुसल कुसल करते जग विनसै कुसल भी कैसे होई ॥
 माटी के करि देवी देवा तिसु आगे जीउ देही ।
 ऐसे पितर तुम्हारे कहियहि आपन कहा न लेही ॥
 सरजीव काटहि निर्जीव पूजहि अंत काल कौ भारी ।
 राम नाम की गति नहीं जानी भय डूबे संसारी ।
 देवी देवा पूजहि डोलहि पारब्रह्म नहीं जाना ।
 कहत कबीर अकुल नहीं चेत्या बिषया स्यों लपटाना ॥ ६० ॥
 जीवत मरै मरै फुनि जीवै ऐसे सुनि समाया ।
 अंजन माहि निरंजन रहियै बहुरि न भव जल पाया ॥
 मेरे राम ऐसा खीर विलोड्यै ।
 गुरु मति मनुवा अस्थिर राखहु इन विधि अमृत पिओइयै ॥
 गुरु कै बाणि बजर कलछेदी प्रगट्या पद परगासा ।
 शक्ति अधेर जेवड़ी भ्रम चूका निहचल सिव घर बासा ॥
 तिन बिनु बाणै धनुष चढ़ाइयै इहु जग बेध्या भाई ।
 दह दिसि बूढ़ी पवन झुलावै डोरि रही लिव लाई ॥
 उनमन मनुवा सुनि समाना दुविधा दुर्मति भागी ।
 कहु कबीर अनुभौ इकु देख्या राम नाम लिव लागी ॥ ६१ ॥
 जो जन भाव भगति कछु जानै ताको अचरज काहो ।
 बिनु जल जल महि पैसि न निकसै तौ ढरि मिल्या जुलाहो ॥
 हरि के लोग मैं तौ मति का भोरा ।
 जौ तन कासी तजहि कबीरा रामहि कहा निहोरा ।
 कहतु कबीर सुनहु रे लोई भरम न भूलहु कोई ।
 क्या कासी क्या ऊसर मगहर राम रिदय जौ होई ॥ ६२ ॥

मरनौ मरन कहै सब कोई । सहजे मरै अमर होइ सोई ॥
 कहु कबीर मन भया अनंदा । गया भरम रहा परमानंदा ॥८६॥
 जिह सिमरनि होइ मुक्ति दुवार । जाहि बैकुंठ नहो संसारि ॥
 निर्भव कै घर बजावहि तूर । अनहद बजहि सदा भरपूर ॥
 ऐसा सिमरन कर मन माहि । बिनु सिमरन मुक्ति कत नाहि ॥
 जिह सिमरन बाही ननकारु । मुक्ति करै उतरै बहुभारु ॥
 नमस्कार करि हिरदय माहि । फिर फिर तेरा आवन नाहि ॥
 जिह सिमरन करहि तू केल । दीपक बांधि धरयो तिन तेल ॥
 सो दीपक अमर कु संसारि । काम क्रोध विष काढिले मार ॥
 जिह सिमरन तेरी गति होइ । सो सुमिरन रखु कंठ पिरोंइ ॥
 सो सिमरन करि नहीं राखु उतारि । गुरु परसादी उतरहि पार ॥
 जिह सिमरन नाही तुहि कान । मंदर सोवहि पटंबरि तानि ॥
 सेज सुखाली बिगसै जीउ । सो सिमरन तू अनहद पीउ ॥
 जिह सिमरन तेरी जाइ बलाई । जिह सिमरन तुझ पोहै न माई ॥
 सिमरि सिमरि हरि हरि मन गाइयै । इह सिमरन सति गुरु ते पाइयै ॥
 सदा सदा सिमरि दिन राति । ऊठत बैठत सासि गिरासि ॥
 जागु सोई सिमरन रस भोग । हरि सिमरन पाइयै संजोग ॥
 जिह सिमरन नाहो तुझ भाऊ । सो सिमरन राम नाम अधारु ॥
 कहि कबीर जाकानहीं अंतु । तिसके आगे तंतु न मंतु ॥८७॥
 जिहि मुखि पाँचौ अमृत खाये । तिहि मुख देखत लूकट लाये ॥
 इक दुख राम राइ काटहु मेरा । अग्नि दहै अरु गरभ बसेरा ॥
 काया बिगूति बहु बिधि माती । को जारे को गड़ले माटी ॥
 कहु कबीर हरि चरण दिखावहु । पाछे ते जम कों न पठावहु ॥८८॥
 जिह सिर रचि रचि बाँधत पाग । सो सिर चुंस सवारहि काग ॥
 इसु तन धन कौ क्या गर्बीया । राम नाम काहे न दृढ़ीया ॥
 कहत कबीर सुनहु मन मेरे । इही हवाल होहिगे तेरे ॥ ८९ ॥

जीवत पितर न माने कोऊ मुएं सराद्ध कराही ।
 पितर भी बपुरे कहु क्यो पावहि कौआ कूकर खाही ॥
 भोंकौ कुसल बतावहु कोई ।
 कुसल कुसल करते जग विनसै कुसल भी कैसे होई ॥
 माटी के करि देवी देवा तिसु आगे जीउ देही ।
 ऐसे पितर तुम्हारे कहियहि आपन कहा न लेही ॥
 सरजीव काटहि निर्जीव पूजहि अंत काल कौ भारी ।
 राम नाम की गति नहीं जानी भय डूबे संसारी ।
 देवी देवा पूजहि डोलहि पारब्रह्म नहीं जाना ।
 कहत कबीर अकुल नहीं चेत्या बिषया स्यों लपटाना ॥ ६० ॥
 जीवत मरै मरै फुनि जीवै ऐसे सुनि समाया ।
 अंजन माहि निरंजन रहियै बहुरि न भव जल पाया ॥
 मेरे राम ऐसा खीर बिलोइयै ।
 गुरु मति मनुवा अस्थिर राखहु इन विधि अमृत पिओइयै ॥
 गुरु कै बाणि बजर कलछेदी प्रगट्या पद परगासा ।
 शक्ति अधेर जेवड़ी भ्रम चूका निहचल सिव घर बासा ॥
 तिन बिनु बाणै धनुष चढ़ाइयै इहु जग बेध्या भाई ।
 दह दिसि बूड़ी पवन झुलावै डोरि रही लिव लाई ॥
 उनमन मनुवा सुनि समाना दुविधा दुर्मति भागी ।
 कहु कबीर अनुभौ इकु देख्या राम नाम लिव लागी ॥ ६१ ॥
 जो जन भाव भगति कछु जानै ताको अचरज काहो ।
 बिनु जल जल महि पैसि न निकसै तौ ढरि मिल्या जुलाहो ॥
 हरि के लोग मैं तौ मति का भोरा ।
 जौ तन कासी तजहि कबीरा रामहि कहा निहोरा ॥
 कहतु कबीर सुनहु रे लोई भरम न भूलहु कोई ।
 क्या कासी क्या ऊसर मगहर राम रिदय जौ होई ॥ ६२ ॥

जेते जतन करत ते डूबे भव सागर नहीं तारयौ रे ।
 कर्म धर्म करते बहु संजम अहं बुद्धि मन जारयौ रे ॥
 साँस ग्रास को दातो ठाकुर सो क्यों मनहु बिसारयो रे ।
 हीरा लाल अमोल जनम है कौड़ी बदलै हारयो रे ॥
 वृष्णा वृषा भूख भ्रमि लागी हिरदै नाहिं बिचारयो रे ।
 उनमत मान हिरयो मन माही गुरु का सबद न धारयो रे ॥
 स्वाद लुभत इंद्र रस प्रेरयो मद रस लैत बिकारयो रे ।
 कर्म भाग संतन संगाने काष्ठ लोह उद्धारयो रे ॥
 धावत जोनि जनम भ्रमि थाके अब दुख करि हम हारयो रे ।
 कहि कबीर गुरु मिलत महा रस प्रेम भगति निस्तारयो रे ॥६३॥
 जेह बाभु न जीया जाई । जौ मिलै ता घाल अघाई ॥
 सद जीवन भलो कहाही । मुए बिन जीवन नाही ॥
 अब क्या कथियै ज्ञान बिचारा । निज निखत गत व्योहारा ॥
 घसि कुंकम चंदन गारया । बिन नयनहु जगत निहारया ॥
 पूत पिता इक जाया । बिन ठाहर नगर बनाया ॥
 जाचक जन दाता पाया । सो दिया न जाई खायया ॥
 छोडया जाइ न मूका । औरन पहि जाना चूका ॥
 जो जीवन मरना जानै । सो पंच सैल सुख मानै ॥
 कबीरै सो धन पाया । हरि भेटत आप मिटाया ॥ ६४ ॥
 जैसे मन्दर महि बल हरना ठाहरै । नाम बिना कैसे पार उतरै ॥
 कुंभ बिना जल ना टिकावै । साधू बिन ऐसे अवगत जावै ॥
 जारौ तिसै जु राम न चेतै । तन मन रमत रहै महि खेतै ॥
 जैसे हलहर बिना जिमी नहि बोझ्यै । सूत बिना कैसे मणी परोझ्यै ॥
 घुंडी बिन क्या गंठि चढ़ाझ्यै । साधू बिन तैसे अवगत जाझ्यै ॥
 जैसे मात पिता बिन बाल न होई । बिंब बिना कैसे कपरे धोई ॥
 घोर बिना कैसे असवार । साधू बिन नाहों दरवार ॥

जैसे बाजे बिन नहीं लीजै फेरी । खसम दुहागनि तजिहौ हेरी ॥
कहै कबीर ऐकै करि करना । गुरु मुखि होई बहुरि नही मरना ॥८५॥

जोइ खसम है जाया ।

पूत बाप खेलाया । बिन रसना खीर पिलाया ॥
देखहु लोगा कलि को भाऊ । सुति मुकलाई अपनी माऊ ॥
पग्गा बिन हुरिया मारता । बदनै बिन खिन खिन हासता ॥
निद्रा बिन नरु पै सोवै । बिनु बासन खीर बिलोवै ॥
बिनु अस्थन गऊ लबेरी । पैड़े बिनु बाट घनेरी ॥
बिन सत गुरु बाट न पाई । कहु कबीर समझाई ॥ ८६ ॥
जो जन लेहि खसम का नाउ । तिनकै सद बलिहारै जाउ ॥
सो निर्मल निर्मल हरि गुन गावै । सो भाई मेरै मन भावै ॥
जिहि घर राम रह्या भरपूरि । तिनकी पग पंकज हम धूरि ॥
जाति जुलाहा मति का धीरु । सहजि सहजि गुन रमै कबीरु ॥ ८७ ॥
जो जन परमिति परमनु जाना । बातन ही बैकुंठ समाना ॥
ना जानौ बैकुंठ कहाही । जान न सब कहहित हाही ।
कहन कहावन नहि पतियैहै । तो मन मानै जातेहु मैं जइहै ॥
जब लग मन बैकुंठकी आस । तब लगि होहि नही चरन निवास ॥
कहु कबीर इह कहियै काहि । साध संगति बैकुंठै आहि ॥८८॥
जो पाथर कौ कहिते देव । ताकी विरथा होवै सेव ॥
जो पाथर की पाई पाई । तिस की घाल अजाई जाई ॥
ठाकुर हमरा सद बोलंता । सर्व जिया कौ प्रभु दान देता ॥
अंतर देव न जानै अंधु । भ्रम का मोह्या पावै फंधु ॥
न पाथर बोलै ना किछु देइ । फोकट कर्म निहफल है सेइ ॥
जे मिरतक के चंदन चढ़ावै । उसते कहहु कौन फल पावै ॥
जो मिरतक को विष्टा मांहि रुलाई । तो मिरतक का क्या घटि

कहत कबीर हैं करहुँ पुकार । समझि देखु साकत गावार ॥
 दूजै भाइ बहुत घर गाले । राम भगत है सदा सुखाले ॥ ८८ ॥

जो मैं रूप किये बहुतेरे अब फुनि रूप न होई ।
 तागा तंत साज सब थाका राम नाम वसि होई ॥
 अब मोहि नाचनो न आवै । मेरा मन मंदरिया न बजावै ॥
 काम क्रोध काया लै जारी तृष्णा गागरि फूटी ।
 काम चालना भया है पुराना गया भ्रम सब छूटी ॥
 सर्व भूत एकै करि जान्या चूके बाद विबादा ।
 कहि कबीर मैं पूरा पाया भये राम परसादा ॥ १०० ॥

जौ तुम मौकौ दूरि करत है तौ तुम मुक्ति बतावहु ।
 एक अनेक होइ रह्यो सकल महि अब कैसे भर्मावहुमे ॥
 राम मोकौ तारि कहाँ लै जैहै ।
 सोधौ मुक्ति कहादेउ कैसी करि प्रसाद मोहि पाइहै ॥
 तारन तरन कबै लगि कहियै जब लग तत्व न जान्या ।
 अब तौ विमल भए घट ही महि कहि कबीर मन मान्या ॥ १०१ ॥

ज्यों कपि के कर मुष्टि चनन की लुबिध न त्यागि दयो ।
 जो जो कर्म किये लालच स्यों ते फिर गरहि परयो ॥
 भगति बिनु बिरथे जनम गयो ।
 साध संगति भगवान भजन बिन कही न सच्च रह्यो ॥
 ज्यों उद्यान कुसुम परफुल्लित किनहि न घ्राउ लयो ।
 तैसे भ्रमत अनेक जोनि महि फिरि फिरि काल हयो ॥
 या धन जोबन अरु सुत दारा पेखन कौ जु दयो ।
 तिनही माहि अटक जो उरभें इंद्रो प्रेरि लयो ॥
 औध अनल तन तिन को मंदर चहु दिसि ठाठ ठयो ।
 कहि कबीर भव सागर तरन कौ मैं सति गुरु ओट लयो ॥ १०२ ॥

ज्यों जल छोड़ि बाहर भयो मीना । पूरव जनम हैं तप का हीना ॥
 अब कहु राम कवन गति मेरी । तजीले बनारस मति भई थोरी ॥
 सकल जनम सिवपुरी गवाया । मरती बार मगहर उठि आया ॥
 बहुत वर्ष तप कीया कासी । मरन भया मगहर की बासी ॥
 कासी मगहर सम बोचारी । ओछी भगति कैसे उतरसि पारी ॥
 कह गुरु गजि सिव सब को जानै । मुआ कबीर रमत श्री रामै ॥१०३॥
 ज्योति की जाति जाति की ज्योती । तितु लागे कँचुआ फल मोती ॥
 कौन सुथर जो निभौ कहियै । भव भजि जाइ अभय है रहियै ॥
 तट तीरथ नहिं मन पतियाइ । चार अचार रहे डर भाइ ॥
 पाप पुण्य दुइ एक समान । निज घर पारस तजहु गुन आन ॥१०४॥

टेढ़ी बाग टेढ़े चले लागे वीरे खान ।
 भाव भगत स्यों काज न कछुए मेरो काम दीवान ॥
 राम बिसारयो है अभिमानी ।
 कनक कामिनी महा सुंदरी पेखि पेखि सचु मानी ॥
 लालच भूठ विकार महा मद इह बिधि औध बिहानि ।
 कहि कबीर अंत की बेर आई लागे काल निदानि ॥ १०५ ॥

डंडा मुंद्रा खिथा आवारी । भ्रम कै भाइ भवै भेषधारी ॥
 आसन पवन दूरि करि बवरे । छोड़ि कपट नित हरि भज बवरे ॥
 जिह तू याचहि सो त्रिभुवन भोगी । कहि कबीर कैसो जग जोगी ॥१०६॥
 तन रैनी मन पुनरपि करिहौ पाचौ तत्त्व बराती ।
 राम राइ स्यों भाँवरि लैहो आतम तिह रँगराती ॥
 गाउ गाउ री दुलहनी मंगलचारा ।
 मेरे गृह आये राजा राम भतारा ॥
 नाभि कमल महि बेदी रचि ले ब्रह्म ज्ञान उचारा ।
 राम राइ स्यों दूल्हो पायो अस बड़ भाग हमारा ॥

सुर नर मुनि जन कौतक आयं कोटि तैतीसो जाना ।
 कहि कबीर मोहि ब्याहि चले हैं पुरुष एक भगवाना ॥१०७॥
 तरवर एक अनन्त डार शाखा पुहुप पत्र रस भरिया ।
 इह अमृत की बाड़ी है रे तिन हरि पूरै करिया ॥
 जानी जानी रे राजा राम की कहानी ।
 अन्तर ज्योति राम परगासा गुरु मुख बिरहैं जानी ॥
 भवर एक पुहुप रस बीधा वार हले उर धरिया ।
 सोरह मध्ये पवन भूकोरयो आकासे फर फरिया ॥
 सहज सुन्न इक बिरवा उपज्या धरती जलहर सोख्या ।
 कहि कबीर हैं ताका सेवक जिनका इहु बिरवा देख्या ॥१०८॥
 तूटे तागे निखुरी पानि । द्वार ऊपर झिलिकावहि कान ॥
 कूच बिचारे फूए फाल । या मुंडिया सिर चढ़िबो काल ॥
 इहु मुंडिया सगलो द्रव खोई । आवत जात ना कसर होई ॥
 तुरी नारि की छोड़ी बाता । राम नाम वाका मन राता ॥
 लरिकी लरिकन खैबो नाहि । मुंडिया अनदिन धाये जाहि ॥
 इक दुइ मन्दर इक दोइ बाट । हमकौ साथरु उनकौ खाट ॥
 मूंड पलोसि कमर बधि पोथी । हमकौ भावन उनकौ रोटी ॥
 मुंडिया मुंडिया हूए एक । ए मुंडिया बूडत की टेक ॥
 सुनि अंबली लोई बेपीर । इन मुंडियन भजि सरन कबोर ॥१०९॥
 तू मेरो मेरु परबत सुवामी श्रेष्ठ गही मैं तेरी ।
 ना तुम डोलहु ना हम गिरते रखि लीनी हरि मेरी ॥
 अब तब जब कब तूही तूही । हम तुअ परसाद सुखी सदही ॥
 तोरे भरोसे मगहर बसियो । मेरे तन की तपति बुझाई ॥
 पहिले दर्सन मगहर पायो । फुनि कासी बसे आई ॥
 जैसा मगहर तैसी कासी हम एकै करि जानी ।
 हम निर्धन ज्यो इह धन पाया मरते फूटि गुमानी ॥

करे गुमान चुभहि तिसु सूला कोउ काढ़न कौ नाहीं ।
 अजै सुचोभ कौ बिलल बिलाते नरके घोर पचाही ॥
 कौन नरक क्या स्वर्ग विचारा संतन दोऊ रादे ।
 हम काहू की काणि न कढ़ते अपने गुरु परसादे ॥
 अब तौ जाइ चढ़े सिंघासन मिलिहै सारंगपानी ।
 राम कबीरा एक भये हैं कोइ न सकै पछानी ॥ ११० ॥
 थरहर कंपै बाला जीउ । ना जानौ क्या करसी पीउ ॥
 रैनि गई मति दिन भी जाइ । भवर गये बग बैठे आइ ॥
 काचै करवै रहै न पानी । हंस चल्या काया कुम्हलानी ॥
 कारी कन्या जैसे करत सिंगारा । क्यो रलिया मानै बाभ भतारा ॥
 काग उड़ावत भुजा पिरानी । कहि कबीर इह कथा सिरानी ॥ १११ ॥
 थाके नयन स्रवण सुनि थाके थाकी सुंदरि काया ।
 जरा हाक दो सब मति थाकी एक न थाकसि माया ॥
 बावरे तै ज्ञान विचार न पाया । विरथा जनम गँवाया ॥
 तब लगि प्रानी तिसे सरेबहु जव लगि घट मही साँसा ।
 जे घट जाइत भाव न जासी हरि के चरन निवासा ॥
 जिसकौ सबद बसावै अंतर चूकहि तिसहि पियासा ।
 हुकमै बूमै चौपड़ि खेलै मन जिन ढाले पासा ॥
 जो जन जानि भजहि अविगति कौ तिनका कछू न नासा ।
 कहु कबीर ते जन कबहुँ न हारहि ढालि जु जानही पासा ॥ ११२ ॥
 दरमादे ठाढ़े दरबारि ।
 तुभ बिन सुरति करै को मेरी दर्सन दीजै खोलि किवार ॥
 तुम धन धनी उदार तियागी स्रवनन सुनियत सुजस तुमार ।
 माँगौ काहि रंक सब देखौ तुम ही ते मेरो निसतार ॥
 जयदेव नामा बिष्णु सुदामा तिनकौ कृपा भई है अपार ।
 कहि कबीर तुम समरथ दाते चारि पदारथ देत न बार ॥ ११३ ॥

दिन ते पहर पहर ते घरियाँ आयु घटै तनु छीजै ।
 काल अहेरी फिरहि बधिक ज्यों कहहु कौन बिधि कीजै ॥
 सो दिन आवन लागा ।
 माता पिता भाई सुत बनिता कहहु कोऊ है काका ॥
 जब लगु जोति काया महि बरतै आपा पसून बूमै ।
 लालच करै जीवन पद कारन लोचन कछून सूमै ॥
 कहत कबीर सुनहु रे प्राणी छोड़हु मन के भरमा ।
 केवल नाम जपहु रे प्राणी परहु एक की सरना ॥ ११४ ॥
 दीन बिसारयो रे दिवाने दीन बिसारयो रे ।
 पेट भरयो पसुआ ज्यों सोयो मनुष जनम है हारयो ॥
 साध संगति कबहुँ नहिं कीनी रचियो धंधै भूठ ।
 स्वान सूकर वायस जिवै भटकत चाल्यो ऊठि ॥
 आपस को दीरघ करि जानै औरन कौ लघु मान ।
 मनसा बाचा करमना मैं देखे दोजक जान ॥
 कामी क्रोधी चातुरी बाजीगर बेकाम ।
 निंदा करते जनम सिरानो कबहु न सिमरयो राम ॥
 कहि कबीर चेतै नहिं मूरख मुगध गवार ।
 राम नाम जानियो नहीं कैसे उतरसि पार ॥ ११५ ॥
 दुइ दुइ लोचन पेखा । हौं हरि बिन और न देखा ॥
 नैन रहे रंग लाई । अब बेगल कहन न जाई ॥
 हमरा भर्म गया भय भागा । जब राम नाम चितु लागा ॥
 बाजीगर डंक बजाई । सब खलक तमासे आई ॥
 बाजीगर स्वाँग सकेला । अपने रँग रवै अकेला ॥
 कथनी कहि भर्म न जाई । सब कथि कथि रही लुकाई ॥
 जाकौ गुरु मुखि आप बुझाई । ताके हिरदै रह्या समाई ॥
 गुरु किंचित किआ कीनी । सब तन मन देह हरि लीनी ॥

कहि कबीर रँगि राता । मिल्यो जग जीवन दाता ॥ ११६ ॥
 दुनिया हुसियार बेदार जागत मुसियत है रे भाई ।
 निगम हुसियार पहरुआ देखत जम ले जाई ॥
 नींबु भयो आँबु आँबु भयो नींबा केला पाका झारि ।
 नालिएर फल सेबरिया पाका मूरख मुगध गवार ॥
 हरि भयो खाँडु रे तुमहि बिखरियो हसतो चुन्यो न जाइ ।
 कहि कबीर कुल जाति पाँति तजि चींटी होइ चुनि खाई ॥ ११७ ॥
 देखो भाई ज्ञान की आई आँधी ।
 सबै उड़ानी भ्रम की टाटी रहै न माया बाँधी ॥
 दुचिते की दुइ शृनि गिरानी मोह बलेड़ा टूटा ।
 तिष्णा छानि परी धर ऊपर दुमिति भाँड़ा फूटा ॥
 आँधी पाछै जो जल वर्षे तिहि तेरा जन भोना ।
 कहि कबीर मन भया प्रगासा उदय भानु जब चीना ॥ ११८ ॥
 देइ मुहार लगाम पहिरावौ । सगल तजीनु गगन दौरावौ ॥
 अपनै बिचारै असवारी कीजै । सहज कै पावडै पग धरि लीजै ॥
 चलु रे बैकुंठ तुमहि ले तारौ । हित चित प्रेम कै चाबुक मारौ ॥
 कहत कबीर भले असवारा । बेद कतेब ते रहहि निरारा ॥ ११९ ॥
 देही गावा जीउ धर्म हत उबसहि पंच किरसाना ।
 नैनू नकटू खनू रसपति इन्द्रो कहा न माना ॥
 बाबा अब न बसहु इह गाउ ।
 घरी घरी का लेखा माँगै काइथु चेतू नाउ ॥
 धर्मराय जब लेखा माँगै बाकी निकसी भारी ।
 पंच कसनवा भागि गए लै बाध्यौ जीउ दरबारी ॥
 कहहि कबीर सुनहु रे सन्तहु खेतहि करौ निबेरा ।
 अब की बार बखसि बन्दे कौ बहुरि न भव जल फेरा ॥ १२० ॥
 धन्न गुपाल धन्न गुरु देव । धन्न अनादि भूखे कब लुटह केव ।

धन ओहि संत जिन ऐसी जानी । तिनकौ मिलिबो सारंगपानी ॥
 आदि पुरुष ते होइ अनादि । जपियै नाम अन्न कै सादि ॥
 जपियै नाम जपियै अन्न । अंभै कै संग नीका वन्न ॥
 अन्ने बाहर जो नर होवहि । तीनि भवन महि अपनो खोवहि ॥
 छोड़हि अन्न करै पाखंड । ना सोहागनि ना ओहि रंड ॥
 जग महि बकते दूधाधारी । गुप्तो खावहि बटिका सारी ॥
 अन्नै बिना न होइ सुकाल । तजियै अन्न न मिलै गुपाल ॥
 कहु कबीर हम ऐसे जान्या । धन्य अनादि ठाकुर मन मान्या ॥१२१॥
 नगन फिरत जो पाइयै जोग । वन का मिरग मुकति सब होग ॥
 क्या नागे क्या बाँधे चाम । जब नहि चीन्हसि आतम राम ॥
 मूँड मुँडायै जो सिधि पाई । मुक्ती भेड़ न गय्यो काई ॥
 बिंदु राख जो तरयै भाई । खुसरै क्यों न परम गति पाई ॥
 कहु कबीर सुनहु नर भाई । राम नाम बिन किन गति पाई ॥१२२॥
 नर मरै नर काम न आवै । पसू मरै दस काज सँवारै ॥
 अपने कर्म की गति मैं क्या जानौ । मैं क्या जानौ बाबा रे ॥
 हाड़ जले जैसे लकड़ो का तूला । केस जले जैसे घास का पूला ॥
 कहत कबीर तबही नर जागै । जम का डंड मूँड महि लागै ॥१२३॥
 नाँगे आवन नाँगे जाना । कोइ न रहिहै राजा राना ॥
 राम राजा नव निधि मेरै । संपै हेतु कलतु धन तेरै ॥
 आवत संग न जात सँगाती । कहा भयो दर बाँधे हाथी ॥
 लंका गढ़ सोने का भया । मूरख रावन क्या ले गया ॥
 कहि कबीर कुछ गुन बीचारि । चलै जुआरी दुइ हथ भारि ॥१२४॥
 नाइक एक बनजारे पाच । बरध पचीसक संग काच ।
 नव बहियाँ दस गोनि आहि । कसन बहत्तरि लागी ताहि ॥
 मोहि ऐसे बनज स्यो ही काजु । जिह घटै मूल नित बढ़ै व्याजु ॥
 सत्त सूत मिलि बनजु कीन । कर्म भावनी संग लीन ॥

तीनि जगाती करत रारि । चलो बनजारा हाथ भारि ॥
 पूँजी हिरानी बनजु दूटि । दह दिस टाँडो गयो फूटि ॥
 कहि कबीर मन सरसी काज । सहज समानो त भर्म भाजि ॥१२५॥
 ना इहु मानुष ना इहु देव । ना इहु जती कहावै सेव ॥
 ना इहु जोगी ना अवधूता । ना इसु माइ न काहू पूता ॥
 या मन्दर मह कौन बसाई । ता का अन्त न कोऊ पाई ॥
 ना इहु गिरही ना ओदासी । ना इहु राज न भीख मँगासी ॥
 ना इहु पिंड न रकनू राती । ना इहु ब्रह्मन ना इहु खाती ॥
 ना इहु तथा कहावै सेख । ना इहु जीवै न मरता देख ॥
 इसु मरते कौ जे कोऊ रोवै । जो रोवै सोई पति खोवै ॥
 गुरु प्रसादि मैं डगरो पाया । जीवन मरन दोऊ मिटवाया ॥
 कहु कबीर इहु राम की अंसु । जस कागद पर मिटै न मंसु ॥१२६॥
 ना मै जोग ध्यान चित लाया । बिन बैराग न छूटसि माया ॥
 कैसे जीवन होइ हमारा । जब न होइ राम नाम अधारा ॥
 कहु कबीर खोजौ अस मान । राम समान न देखौ आन ॥१२७॥
 निंदौ निंदौ मोकौ लोग निंदौ । निंदौ निंदौ मोकौ लोग निंदौ ॥
 निंदा जन कौ खरी पियारी । निंदा बाप निंदा महतारी ॥
 निंदा होय त बैकुंठ जाइयै । नाम पदारथ मनहि बसाइयै ॥
 रिदै सुद्ध जौ निंदा होइ । हमरे कपरे निंदक धोइ ॥
 निंदा करै सु हमरा मीत । निंदक माहि हमारा चीत ॥
 निंदक सो जो निंदा होरै । हमरा जीवन निंदक लोरै ॥
 निंदा हमरी प्रेम पिथार । निंदा हमरा करै उधार ॥
 जन कबीर कौ निंदा सार । निंदक डूबा हम उतरे पार ॥ १२८ ॥
 नित उठि कोरी गागरिआ नै लीपत जनम गयो ।
 ताना बाना कछू न सूझै हरि हरि रस लपट्यो ॥

हमरे कुल कौने राम कह्यो ।

जब की माला लई निपूते तब ते सुख न भयो ॥

सुनहु जिठानां सुनहु दिरानी अचरज एक भयो ।

सात सूत इन मुडिये खोये इहु मुडिया क्यों न मुयो ॥

सर्व सखा का एक हरि स्वामी सो गुरु नाम दयो ।

संत प्रह्लाद की पैज जिन राखी हरनाखसु नख बिदरयो ॥

घर के देव पितर की छोड़ो गुरु को सबद लयो ।

कहत कबीर सकल पाप खंडन संतह लै उधरयो ॥ १२८ ॥

निर्धन आदर कोइ न देई । लाख जतन करै ओहु चित न धरेई ॥

जौ निर्धन सरधन कै जाई । आगे बैठा पीठ फिराई ॥

जौ सरधन निर्धन कै जाई । दीया आदर लिया बुलाई ॥

निर्धन सरधन दोनो भाई । प्रभु की कला न मेटी जाई ॥

कहि कबीर निर्धन है सोई । जाकै हिरदे नाम न होई ॥ १३० ॥

पंडित जन माते पढ़ि पुरान । जोगी माते जोग ध्यान ॥

संन्यासी माते अहमेव । तपसी माते तप के भेव ॥

सब मइमाते कोऊ न जाग । संग ही चोर घर मुसन लाग ॥

जागै सुकदेव अरु अक्रूर । हणवन्त जागे धरि लंकूर ॥

संकर जागे चरन सेव । कलि जागे नामा जैदेव ॥

जागत सोवत बहु प्रकार । गुरु मुखि जागे सोइ सार ॥

इस देही के अधिक काम । कहि कबीर भजि राम नाम ॥ १३१ ॥

पंडिया कौन कुमति तुम लागे ।

बृडहुगे परवार सकल स्यो राम न जपहु अभागे ॥

बेद पुरान पढ़े का किया गुन खर चंदन जस भारा ।

राम नाम की गति नहि जानी कैसे उतरसि पारा ॥

जीय बधहु सुधर्म करि थापहु अधर्म कहौ कत भाई ।

आपस कौ मुनि वर करि थापहु काकहु कहौ कसाई ॥

मन के अन्धे आपि न बूझहु का कहि बुझावहु भाई ।
 माया कारन बिद्या बेचहु जनम अविर्था जाई ॥
 नारद बचन बिपास कहत है सुक कौ पृछहु जाई ।
 कहि कबीर रामहि रमि छूटहु नाहि त बूड़े भाई ॥ १३२* ॥
 पंथ निहारै कामनी लोचन भरी लेइ उसासा ।
 उर न भीजै पग ना खिसै हरि दर्सन की आसा ॥
 उडहु न कागा कारे । बेग मिलीजै अपने राम प्यारे ॥
 कहि कबीर जीवन पद कारन हरि की भक्ति करीजै ।
 एक अधार नाम नारायण रसना राम रवीजै ॥ १३३ ॥
 पन्द्रह तिथि सात वार । कहि कबीर उर वार न पार ॥
 साधक सिद्ध लखै जौ भेड । आपे करता आपे डेड ॥
 अम्मावस महि आस निवारौ । अन्तरयामी राम समारहु ॥
 जीवत पावहु मोख दुवारा । अनभौ सबद तत्त्व निज सार ॥
 चरन कमल गोविद रंग लागा ।
 सन्त प्रसाद भये मन निर्मल हरि कीर्तन महि अनदिन जागा ॥
 परवा प्रीतम करहु बिचार । घट महि खेलै अघट अपार ॥
 काल कल्पना कदे न खाइ । आदि पुरुष महि रहै समाइ ॥
 दुतिया दुह करि जानै अंग । माया ब्रह्म रमै सब संग ॥
 ना ओहु बढै, न घटता जाइ । अकुल निरंजन एकै भाइ ॥
 तृतीया तीने सम करि ल्यावै । आनंद मूल परम पद पावै ॥
 साध संगति उपजै विश्वास । बाहर भीतर सदा प्रगास ॥
 चौथहि चंचल मन कौ गहहु । काम क्रोध संग कबहु न बहहु ॥
 जल थल माहें आपही आप । आपै जपहु आपना जाप ॥

* एक दूसरे स्थान पर यह पद इस प्रकार आरंभ होता है “पड़ी आकबत
 कुमति तुम लागे” शेष सब ज्यों का त्यों है । मूल प्रति में जो ३६ नंबर का
 पद है (पृष्ठ १००) वह भी कुछ थोड़े से हेर फेर के साथ ऐसा ही है ।

पाँचे पंच तत्त बिस्तार । कनिक कामिनी जुग ब्योहार ॥
 प्रेम सुधा रस पीवै कोइ । जरा मरण दुख फेरि न होइ ॥
 छटि षट चक्र चहूँ दिसि धाइ । बिनु परचै नहीं थिरा रहाइ ॥
 दुविधा मेटि खिमा गहि रहहु । कर्म धर्म की सूल न सहहु ॥
 सातै सति करि बाचा जाणि । आतम राम लेहु परवाणि ॥
 छूटै संसा मिटि जाहि दुक्ख । सुन्य सरोवरि पावहु सुक्ख ॥
 अष्टमी अष्ट धातु की काया । तामहि अकुल महा निधि राया ॥
 गुरु गम ज्ञान बतावै भेद । बलटा रहै अभंग अछेद ॥
 नौमी नवै द्वार कौ साधि । बहती मनसा राखहु बांधि ॥
 लोभमोह सब वीसरी जाहु । जुग जुग जीवहु अमर फल खाहु ॥
 दसमी दह दिसि होइ अनंद । छूटै भर्म मिलै गोविंद ॥
 ज्योति स्वरूप तत्त अनूप । अमल न मल न छाह नहि धूप ॥
 एकादसी एक दिसि धावै । तौ जोनी संकट बहुरि न आवै ॥
 सीतल निर्मल भया सरीरा । दूरि बतावत पाया नीरा ॥
 बारसि बारहौ गवै सूर । अहि निसि बाजै अनहद नूर ॥
 देख्या तिहूँ लोक का पीउ । अचरज भया जीव ते सीउ ॥
 तंरसि तेरह अगम बखाणि । अर्द्ध उर्द्ध बिच सम पहिचाणि ॥
 नीच ऊँच नही मान प्रमान । व्यापक राम सकल सामान ॥
 चौदसि चौदह लोक मभारि । रोम रोम महि बसहि मुरारि ॥
 सत संतोष का धरहु धियान । कथनी कथियै ब्रह्म गियान ॥
 पून्यो पूरा चन्द अकाल । पसरहि कला सहज परगाल ॥
 आदि अंत मध्य होइरह्या बीर । सुखसागर महि रमहि कबीर १३४
 पहिला पूत पिछैरी माई । गुरु लागो चले की पाई ॥
 एक अचंभौ सुनहु तुम भाई । देखत सिंह चरावत गाई ॥
 जल की मछली तरवर व्याई । देखत कुतरा लै गई बिलाई ॥
 तलेरे वैसा ऊपर सूला । तिसकै पेड़ लगं फल फूला ॥

घोरै चरि भैस चरावन जाई । बाहर बैल गोनि घर आई ॥
 कहत कबीर जो इस पद बूझै । राम रमत तिसु सब किछू सूझै ॥ १३५ ॥
 पहिलो कुरूप कुजाति कुलक्खनी साहुरै पेड़यै बुरी ।
 अब की सरूप सुजाति सुलक्खनी सहजे उदरधरी ॥
 भली सरी मुई मेरी बहली बरी ।
 जुग जुग जीवौ मेरी अब की धरी ॥
 कहु कबीर जब लहुरी आई बड़ी का सुहाग टरयो ।
 लहुरी संग भई अब मेरै जेठी और धरयो ॥ १३६ ॥
 पाती तोरै मालिनी पाती पाती जीउ ।
 जिसु पाहन को पाती तोरै सो पाहनु निरजीउ ॥
 भूली मालिनी है एष । सति गुरु जागता है देउ ॥ ।
 ब्रह्म पाती बिन्दु डारी फूल संकर देव ।
 तीन देव प्रतख्य तोरहि करहि किसकी सेव ॥
 पाषाण गढि कै मूरति कीनी दंके छाती पाउ ।
 जे एइ मूरति साची है तो गड़गहारे खाउ ॥
 भातु पहिति और लापसी करक राका सारु ।
 भोगनु हारं भोगिया इसु मूरति के मुखछार ॥
 मालिन भूली जग भुलाना हम भुलाने नाहि* ।
 कहु कबीर हम राम राखे कृपा करि हरि राइ ॥ १३७ ॥
 पानी मैला माटी गोरी । इस माटी की पुतरो जेरी ॥
 मैं नाही कछु आहि न मोरा । तन धन सब रस गोविंद तोरा ॥
 इस माटी महि पवन समाया । झूठा परपंच जोरि चलाया ॥
 किंनहू लाख पाँच की जेरी । अंत कि बाट गगरिया फोरी ॥
 कहि कबीर इक नीवौ सारी । खिन महि बिनसि जाइ अहंकारी १३८
 पाप पुन्य दोइ बैल बिसाहे पवन पूँजी परगास्यो ।
 वृष्णा गृणि भरी घट भीतर इन बिधि टांड बिसाह्यो ॥

ऐसा नायक राम हमारा । सकल संसार कियो बंजारा ॥
 काम क्रोध दुइ भये जगाती मन तरंग बटवारा ।
 पंच तत्तु मिलि दान निवेरहि टांडा उतरयो पारा ॥
 कहत कबीर सुनहु रे संतहु अब ऐसी बनि आई ।
 घाटी चढ़त बैल इक थाका चलो गोनि छिटकाई ॥ १३६ ॥
 पिंड मुए जिउं किहू घर जाता । सबद अतीत अनाहद राता ॥
 जिन राम जान्या तिन्हों पछान्या । ज्यों गूंगे साकर मन मान्या ॥
 ऐसा ज्ञान कथै बनवारी । मन रे पवन दृढ़ सुषमन नाड़ी ॥
 सो गुरु करहु जि बहुरि न करना । सो पद रवहु जि बहुरि न रवना ॥
 सो ध्यान धरहु जि बहुरि न धरना । ऐसे मरहु जि बहुरि न मरना ॥
 उलटी गंगा जमुन मिलावौ । बिनु जल संगम मन महि नावौ ॥
 लोचा सम सरिहहु व्योहारा । तत्तु बीचारि क्या अवर बिचारा ॥
 अप तेज वायु पृथमी आकासा । ऐसी रहिन रहौ हरि पासा ॥
 कहे कबीर निरंजन ध्यावौ । तित घर जाहु जि बहुरि न आवौ ॥ १४० ॥
 पेवक दै दिन चारि है साहुरडे जाणा ।
 अंधा लोक न जाणई मूरखु एयाणा ॥
 कहु डडिया बांधै धन खड़ी । याहू घर आये मुकलाऊ आये ॥
 ओह जि दिसै खूहड़ी कौ न लाजु बहारी ।
 लाज घड़ी स्यो दूटि पड़ी उठि चली पनिहारी ॥
 साहिब होइ दयाल कृपा करे अपना कारज सवारे ।
 ता सोहागणि जानिए गुरु सबद बिचारै ॥
 किरत की बांधी सब फिरै देखहु बिचारी ।
 एसनो क्या आखियै क्या करै बिचारी ॥
 भई निरासी उठि चली चित बैंधी न धीरा ।
 हरि की चरणी लागि रहु भजु सरण कबीरा ॥ १४१ ॥
 प्रह्लाद पठाये पठन साल । संगि सखा बहु लिए बाल ॥

मोकौ कहा पढ़ावसि आल जाल । मेरी पटिया लिखि देहु श्रीगोपाल ॥
नहीं छोड़ौ रे बाबा राम नाम । मेरो और पढ़न स्यो नही काम ॥

संडै मरकै कह्यो जाइ । प्रहलाद बुलाये बेगि धाइ ॥

तू राम कहन की छोड़ु, बानि । तुझ तुरत छडाऊँ मेरो कह्यो मानि ॥
मोकौ कहा सतावहु बार बार । प्रभु भज थल गिरि किये पहार ॥
इक राम न छोड़ौ गुरुहि गारि । मोकौ घालि जारि भाखै मारि डारि ॥
काढि खड़ग कोथो रिसाइ । तुझ राखनहारो मोहि बताइ ॥
प्रभु थंभ ते निकसे कै विस्तार । हरनाखस छेद्यो नख बिदार ॥
ओइ परम पुरुष देवाधि देव । भगत हेत नरसिंघ भेव ॥
कहि कबीर को लखै न पार । प्रहलाद उबारै अनिक बार ॥ १४२ ॥

फील रबाबी बलटु पखावज कौआ ताल बजावै ।

पहरि चोलना गदहा नाचै भैसा भगति करावै ॥

राजा राम क करिया बरपे काये । किनै बूझन द्वारै खाये ॥

बैठि सिंह घर पान लगावहि घोस गल्योरे लावै ।

घर घर मुसरी मंगल गावहि कछुवा संख बजावै ॥

वंस को पूत बिआहन चलिया सुइने मंडप छाये ।

रूप कन्निया सुंदर बेधो ससै सिंह गुन गाये ॥

कहत कबीर सुनहु रे पंडित कीटी परबत खाया ।

कछुवा कहै अंगार भिलोरौ लूकी सबद सुनाया ॥ १४३ ॥

फुरमान तेरा सिरै ऊपर फिरि न करत बिचार ।

तुही दरिया तुही करिया तुझै ते निस्तार ॥

बंदे बंदगी इकतीयार । साहिब रोष धरौ कि पियार ॥

नाम तेरा आधार मेरा जिउ फूल जइहै नारि ।

कहि कबीर गुलाम घर का जीआइ भावै मारि ॥ १४४ ॥

बंधचि बंधनु पाइया । मुक्तै गुरि अनलु बुझाइया ।

जब नख सिख-इहु मनु चीना । तब अंतर मजनु कीना ॥

पवन पति उनमनि रहनु खरा । नहीं मिसु न जनमु नरा ॥
 उलटो ले सकति संहारं । फैंसीले गगन मभारं ॥
 बेधिय ले चक्र भुअंगा । भेटिय ले राइन संगी ॥
 चूकिय ले मोह मइ आसा । ससि कीनो सूर गिरासा ॥
 जब कुंभ कुभरि पुरि जीना । तब बाजे अनहद बीना ॥
 बकतै बकि सबद सुनाया । सुनतै सुनि माल बसाया ॥
 करि करता उतरसि पारं । कहै कबीरा सारं ॥ १४५ ॥
 बटुआ एक बहत्तरि आधारी एको जिसहि दुबारा ।
 नवै खंड की प्रथमी मांगै सो जोगी जनसारा ॥
 ऐसा जोगी नव निधि पावै । तल का ब्रह्म ले गगन चरावै ॥
 खिंथा ज्ञान ध्यान करि सूई सबद ताग मथि घालै ।
 पंच तत्व की करि मिरगाणी गुरु कै मारग चालै ॥
 दया फाहुरी काया करि धूई दृष्टि की अगनि जलावै ।
 तिसका भाव लए रिद अंतर चहु जुग ताड़ी लावै ॥
 सभ जोगत्तण राम नाम है जिसका पिंड पराना ।
 कहु कबीर जे किरपा धारै बेइ सचा नीसाना ॥ १४६ ॥
 बनहि बसे क्यों पाइयै जौ लौ मनहु न तजै बिकार ।
 जिह घर बन सम सरि किया ते पूरे संसार ॥
 सार सुख पाइये रामा । रंगि रबहु आतमै रामा ॥
 जटा भस्म लै लेपन किया कहा गुफा महि बास ।
 मन जीते जग जीतिया ते बिषिया ते होइ उदास ॥
 अंजन देइ सब काई टुकु चाहन माहि विडानु ।
 ग्यान अंजन जिह पाइया ते लोइन परवानु ॥
 कहि कबीर अब जानिया गुर ग्यान दिया समझाइ ।
 अंतर गति हरि भेटिया अब मेरा मन कतहु न जाइ ॥ १४७ ॥
 बहु प्रपंच करि परधन ल्यावै । सुत दारा पहि आनि लुटावै ॥

मन मेरे भूले कपट न कीजै । अंत निबेरा तेरे जीय पहि लीजै ॥
छिन छिन तन छीजै जरा जनावै । तब तेरी ओक कोई पानियो न पावै ।
कहत कबीर कोई नहीं तेरा । हिरदै राम किन जपहि सबेरा ॥१४८॥
बाती सूखी तेल निखूटा । मंदल न बाजै नट पै सूता ॥
बुझि गई अगनि न निकस्यो धूआ । रवि रखा एक अवर नहीं दूआ ॥
तूटी तंतु न बजै रबाब । भूलि विगारयो अपना काज ॥
कथनी बदनी कहन कहावन । समझ परी तो बिसरयो गावन ॥
कहत कबीर पंच जो चूरे । तिनते नाहिं परम पद दूरे ॥ १४९ ॥
बाप दिलासा मेरो कीना । सेज सुखाली मुख अमृत दाना ॥
तिसु बाप कौ क्यों मनहु बिसारी । आगे गया न बाजी हारी ॥
मुई मेरी माई है खरा सुखाला । पहिरौ नहीं दगली लगै न पाला ॥
बलि तिसु बापै जिन है जाया । पंचा ते मेरा संग चुकाया ॥
पंच भारि पावा तलि देने । हरि सिमरन मेरा मन तन भीने ॥
पिता हमारो बडु गोसाई । तिसु पिता पहि हैं क्यों करि जाई ॥
सति गुरु मिले ता मारग दिखाया । जगत पिता मेरे मन भाया ॥
है पृत तेरा तू बाप मेरा । एकै ठाहरि दुहा बसेरा ॥
कह कबीर जनि एको बूझिया । गुरु प्रसाद मैं सब कछु सूझिया ॥१५०॥
बारह बरस बालपन बीते बीस बरस कछु तपु न कियो ।
तीस बरस कछु देव न पूजा फिर पछुताना बिरध भयो ॥
मेरी मेरी करते जनम गयो । साइर सोखि भुजं बलियो ॥
सूके सरवर पालि बँधावै लूणे खेत हथ वारि करै ।
आयो चोर तुरंत ही ले गयो मेरी राखत मुगध फिरै ॥
चरन सीख कर कंपन लागे नैनी नीर असार बहै ।
जिहिवा बचन सुद्ध नहीं निकसै तब रे धरम की आस करै ॥
हरि जी कृपा करै तिव लावै लाहा हरि हरि नाम लियो ।
गुरु परसादी हरि धन पायो अंते चल दिया नालि चल्थो ॥

कहत कबीर सुनहु रे संतहु अन धन कछु ऐलै न गयो ।

आई तलब गोपाल राइ की माया मंदर छोड़ चल्थो ॥ १५१ ॥

बावन अक्षर लोक त्रय सब कछु इनही माहि ।

जे अक्षर खिरि जाहिगे ओइ अक्षर इन महि नाहि ॥

जहाँ बोल तह अक्षर आवा । जह अबोल तह मन न रहावा ॥

बोल अबोल मध्य है सोई । जस ओहु है तस लगै न कोई ॥

अलह लहौ तौ क्या कहौ कहौ तो को उपकार ।

बटक बीजि महि रवि रह्यो जाको तीनि लोकि विस्तार ॥

अलह लहंता भेद छै कछु कछु पायो भेद ।

उलटि भेद मन बेधियो पायो अभंग अछेद ॥

तुरक तरी कत जानियै हिंदू बेद पुरान ।

मन समभावन कारनै कछु यक पढियै ज्ञान ॥

ओअंकार आदि मैं जाना । लिखि और मेटै ताहि न माना ॥

ओअंकार लखै जौ कोई । सोई लिखि मेटणा न होई ॥

कक्का किरण कमल महि पावा । ससि त्रिगास सम्पट नहि आवा ॥

अरु जे तहा कुसम रस पावा । अकह कहा कहि का समभावा ॥

खख्खा इहै खेड़ि मन आवा । खोडे छाड़ि न दह दिसि धावा ॥

खसमहि जाणि खिमा करि रहै । तौ होइ निरवधौ अखै पद लहै ॥

गंगा गुरु के बचन पछाना । दूजी बात न धरई काना ॥

रहै बिहंगम कतहि न जाई । अगह गहै गहि गगन रहाई ॥

घध्वा घट घट निमसै सोई । घट फूटे घट कबहि न होई ॥

ता घट माहि घाट जौ पावा । सो घट छाँडि अवघट कत धावा ॥

डंडा निग्रह सनेह करि निरवारो संदेह ।

नाही देखि न भाजियै परम सियानप एह ॥

चच्चा रचित चित्र है भारी । तजि चित्रै चेतहु चितकारी ॥

चित्र बचित्र इहै अवभेरा । तजि चित्रै चितु राखि चितेरा ॥

छच्छा इहै छत्रपति पासा । छकि किन रहहु छाडि किन आसा ॥
 रे मन मैं तो छिन छिन समझावा । ताहि छाडि कत आप बधावा ॥
 जज्जा जौ तन जीवत जरावै । जोवन जारि जुगति सो पावै ॥
 अस जरि परजरि जरि जव रहै । तब जाइ ज्योति उजारौ लहै ॥
 भभभा उरभि सुरभि नहि जाना । रह्यो भभकि नाही परवाना ॥
 कत भकि भकि औरन समझावा । भगर किये भगरौ ही पावा ॥
 अंवा निकट जु घट रह्यो दूरि कहा तजि जाइ ।
 जा कारण जग दूँढियौ नेरौ पाया ताहि ॥
 टट्टा विकट घाट घट माही । खेलि कपाट महल किन जाही ॥
 देखि अटल टलि कतहि न जावा । रहै लपटि घट परचौ पावा ॥
 ठट्टा इहै दूरि ठग नीरा । नीठि नीठि मन कीया धोरा ॥
 जिन ठग ठग्या सकल जग खावा । सो ठग ठग्या ठौर मन आवा ॥
 डड्डा डर उपजै डर जाई । ता डर महि डर रह्या समाई ॥
 जौ डर डरै तौ फिरि डर लागै । निडर हुआ डर उर होइ भागै ॥
 ढढ्ढा ढिग दूँढहि कत आना । दूँढत ही ढहि गये पराना ॥
 चढि सुमेर दूँढि जब आवा । जिह गढ़ गढ्यो सुगढ़ महि पावा ॥
 गणा रणि रूतौ नर नेही करै । नानि बैना फुनि संचरै ॥
 धन्य जनम ताही को गणै । मारे एकहि तजि जाइ घणै ॥
 तत्ता अतर तरयौ नइ जाई । तन त्रिभुवण में रह्यो समाई ॥
 जौ त्रिभुवण तन माहि समावा । तौ तत हि तत मिल्या सचुपावा ॥
 यथा अथाह थाह नही पावा । ओहु अथाह इहु थिर न रहावा ॥
 थोडै थल थानक आरंभै । बिनुही थाहर मन्दिर थंभै ॥
 दहा देखि जु बिनसन हारा । जस अदेखि तस राखि बिचारा ॥
 दमवै द्वार कुंजी जब दीजै । तौ दयाल कौ दर्सन कीजै ॥
 धद्धा अर्द्धहि उर्द्ध निबेरा । अर्द्धहि उर्द्धह मंभि बसेरा ।
 अर्द्धह छाडि उर्द्ध जौ आवा । तौ अर्द्धहि उर्द्ध मिल्या सुख पावा ॥

नम्रा निसि दिन निरखत जाई । निरखत नयन रहे रतवाई ॥
 निरखत निरखत जब जाइ पावा । तब ले निरखहि निरख मिलावा ॥
 पप्पा अपर पार नहीं पावा । परम ज्योति स्यो परचौ लावा ॥
 पाँचो इंद्री निग्रह करई । पाप पुण्य दोऊ निरबरई ॥
 फफका बितु फूलै फल होई । ता फल फंक लखै जौ कोई ॥
 दृष्टि न परई फंक बिचारै । ता फल फंक सबै तन फारै ॥
 बम्बा बिंदहि बिंद मिलावा । बिंदहि बिंद न बिछुरन पावा ॥
 बंदौ होइ बन्दगी गहै । बंधक होइ बंधु सुधि लहै ॥
 भम्भा भेदहि भेद मिलावा । अब भौ भानि भरोसौ आवा ॥
 जो बाहर सो भीतर जान्या । भया भेद भूपति पहिचान्या ॥
 मम्मा मूल रह्या मन मानै । मर्मी होइ सो मन कौ जानै ॥
 मत कोइ मन मिलता बिलमावै । मगन भया तेसो सचुपावै ॥
 मम्मा मन स्यो काजु है मन साधे सिधि होइ ।
 मनही मन स्यो कहै कबीरा मनसा मिल्या न कोइ ॥
 इहु मन सकती इहु मन सीउ । इहु मन पंच तत्व को जीउ ।
 इहु मन ले जौ उनमनि रहै । तौ तीनि लोक की बातै कहै ॥
 थय्या जौ जानहि तौ दुर्मति हनि करि वसि काया गाउ ।
 रणि रूतौ भाजै नहीं सूर उधारौ नाउ ॥
 रारा रस निरस्स करि जान्या । होइ निरस्स सुरस पहिचान्या ॥
 इह रस छाड़े उह रस आवा । उह रस पीया इह रस नही भावा ॥
 लल्ला ऐसे लिव मन लावै । अनत न जाइ परम सचुपावै ॥
 अरु जौ तहा प्रेम लिव लावै । तौ अलह लहै लहि चरन समावै ॥
 ववा वार वार विष्णु समारि । विष्णु समारि न आवै हारि ॥
 बलि बलि जे विष्णु तना जस गावै । विष्णु मिलै सबही सचुपावै ॥
 वावा वाही जानियै वा जाने इहु होइ ।
 इहु अरु ओहु जग मिलै तब मिलत न जानै कोइ ॥

शशशा सो नीका करि सोधहु । घट पर चाकी बात निरोधहु ॥
 घट परचै जौ उपजै भाउ । पूरि रह्या तह त्रिभुवन राउ ॥
 षष्ठा खोजि परै जौ कोई । जो खोजै सो बहुरि न होई ॥
 खोजि बूझि जौ करै विचारा । तौ भव जल तरत न लावै बारा ॥
 सस्सा सो सह सेज सवारै । सोई सही संदेह निवारै ॥
 अल्प सुख छाड़ि परम सुख पावा । तब इह त्रिय ओहु कंत कहावा ॥
 हाहा होत होइ नहीं जाना । जबही होइ तबहि मन माना ॥
 है तौ सही लखै जौ कोई । तब ओही उह एहु न होई ॥
 लिउँ लिउँ करत फिरै सब लोग । ता कारण व्यापै बहु सोग ॥
 लक्ष्मीवर स्यो जौ लिव लागै । सोग मिटै सब ही सुख पावै ॥
 खक्खा खिरत खपत गये केते । खिरत खपत अजहूँ नहि चेते ॥
 अब जग जानि जौ मना रहै । जह का बिछुरा तह थिरु लहै ॥
 बावन अक्खर जोरे आन । सक्या न अक्खरु एक पछानि ॥
 सत का सबद कबारा कहै । पंडित होइ सो अनभै रहै ॥
 पंडित लोगह कौ व्यवहार । ज्ञानवन्त कौ तत्त्व बोचार ॥
 जाकै जीय जैसी बुधि होई । कहि कबीर जानैगा सोई ॥ १५२ ॥
 बिंदु ते जिन पिंड किया अगनि कुंड रहाइया ।
 दस मास माता उदरि राख्या बहुरि लागी माइया ॥
 प्राणी काहे कौ लोभि लागै रतन जनम खोया ।
 पुरब जनम करम भूमि बीजु नार्हीं बोया ॥
 बारिक ते विरध भया होना सो होया ।
 जा जम आइ भोट पकरै तबहि काहे रोया ॥
 जीवन की आसा करै जम निहारै सासा ।
 बाजोगरी संसार कबीरा चेति ढालि पासा ॥ १५३ ॥
 बुत पूजि पूजि हिंदू मुये तुरक मुये सिर नाई ।
 ओइ ले जारे ओइ ले गाड़े तेरी गति दुहूँ न पाई ॥

मन रे संसार अंध गहेरा ।
 चहुँ दिसि पसरयो है जम जेवरा ॥
 कबित पढ़े पढ़ि कविता मूये कपड़ के दारै जाई ।
 जटा धारि धारि जोगी मूये तेरी गति इनहि न पाई ॥
 द्रव्य संचि संचि राजे मूये गड़िले कंचन भारी ।
 वेद पढ़े पढ़ि पंडित मूये रूप देखि देखि नगरी ॥
 राम नाम बिन सबै बिगूते देखहु निरखि सरीरा ।
 हरि के नाम बिन किन गति पाई कहि उपदेस कबीरा ॥१५४॥
 भुजा बाँधि भिला करि डारयो । हस्ती कोपि मूँड महि मारयो ॥
 हस्ती भागि कै चासा मारै । या मुरति कै है बलिहारै ॥
 आहि मेरे ठाकुर तुमरा जोर । काजी बकिबो हस्ती तोर ॥
 रे महावत तुम्ह डारौ काटि । इसहि तुरावहु घालहु साटि ॥
 हस्त न तोरै धरै ध्यान । वाकै रिदै बसै भगवान ॥
 क्या अपराध संत है कीना । बाँधि पाट कुंजर को दोना ॥
 कुंचर पोटलै लै नमस्कारै । बूझी नहों काजी अंधियारै ॥
 तीन बार पतिया भरि लीना । मन कठोर अजहू न पतीना ॥
 कहि कबीर हमारा गोबिंद । चौथे पद महि जन की जिंद ॥१५५॥
 भूखे भगति न कीजै । यह माला अपनी लीजै ॥
 है माँगो संतन रेना । मैं नाही किसी का देना ॥
 माधव कैसी बनै तुम संगे । आपि न देउ तले बहु मंगे ॥
 दुइ सेर माँगौ चूना । पाव घोउ संग लूना ॥
 अधसेर माँगौ दाले । मोकौ दोनों बखत जिवाले ॥
 खाट माँगौ चौपाई । सिरहाना और तुलाई ॥
 ऊपर कौ माँगौ खोंधा । तेरी भगति करै जनु बाँधा ॥
 मैं नाही कीता लब्धो । इक नाउ तेरा मैं फब्धो ॥
 कहि कबीर मन मान्या । मन मान्या तौ हरि जान्या ॥१५६॥

मन करि मक्का कबला करि देही । बोलनहार परस गुरु एही ॥
 कहु रे मुल्ला बाँग निवाज । एक मसीति दसै दरवाज ॥
 मिसिमिलि तामसु भर्म क दूरी । भाखि ले पंचे होइस बूरी ॥
 हिन्दू तुरफ का साहिब एक । कह करै मुल्ला कह करे सेख ॥
 कहि कबीर हौ भया दिवाना । मुसि मुसि मनुआ सहजि समाना ॥१५७॥
 मन का स्वभाव मनहि बियापो । मनहि मारि कवन सिधि थापो ॥
 कवन सु मुनि जो मन को मारै । मन कौ मारि कहहु किस तारै ॥
 मन अंतर बोलै सब कोई । मन मारै बिन भगति न होई ॥
 कहु कबीर जो जानै भेउ । मन मधुसूदन त्रिभुवण देउ ॥ १५८ ॥
 मन रे छाड़हु भर्म प्रकट होइ नाचहु या माया के डाढ़े ।
 सूर किसन मुखरन ते डरपै सती कि साँचै भाड़े ॥
 डगमग डांडि रे मन बौरा ।
 अब तो जरै मरै सिधि पाइयै लीनो हाथ सिंधोरा ॥
 काम क्रोध माया के लोने या बिधि जगत बिगूचा ।
 कहि कबीर राजा राम न छोड़ौ सगल ऊँच ते ऊँचा ॥ १५९ ॥
 माता जूठी पिता भी जूठा जूठेही फल लागे ।
 आवहि जूठे जाहि भी जूठे जूठे मरहि अभागो ॥
 कहु पंडित सूचा कवन ठाउ । जहाँ बैसि हौ भोजन खाउ ॥
 जिहवा जूठो बोलत जूठा करन नेत्र सब जूठे ।
 इंद्रो की जूठो उतरसि नाहि ब्रह्म अगनि के जूठे ॥
 अगनि भी जूठी पानी जूठा जूठो बैसि पकाइया ।
 जूठी करछी परोसन लागा जूठे ही बैठि खाइया ॥
 गोबर जूठा चौका जूठा जूठी दीनी करा ।
 कहि कबीर तेई नर सूचे साची परी विचारा ॥ १६० ॥
 मरन जीवन की संका नासी । आपन रंगि सहज परगासी ॥
 प्रकटी ज्योति मिथ्या अधियारा । राम रतन पाया करत विचारा ॥

जह अनंद दुख दूर पयाना । मन मानकु लिव तत्तु लुकाना ॥
 जो किछु होआ सु तेरा भाणा । जौ इन बृभै सु सहजि समाणा ॥
 कहत कबीर किलविष गये खीणा । मन भाया जग जीवन लीणा ॥१६१॥
 माई मोहिं अवरु न जान्यो आनां ।

सिव सनकादि जासु गुन गावहि तासु बसहि मेरे प्रानां ॥
 हिरदै प्रगास ज्ञान गुरु गम्मित गगन मंडल महि ध्यानां ।
 विषय रोग भय बंधन भागे मन निज घर सुख जानां ॥
 एक सुमति रति जानि मानि प्रभु दूसर मनहि न आनां ।
 चंदन बास भये मन बास न त्यागि घट्यो अभिमानां ॥
 जो जन गाइ ध्याइ जस ठाकुर तासु प्रभू है थानां ।

तिह बड़ भाग बस्यो मन जाके कर्म प्रधान मथानां ॥
 काटि सकति सिव सहज प्रगास्यो ऐकै एक समानां ।
 कहि कबीर गुरु भेटि महासुख भ्रमत रहें मन मानां ॥१६२॥
 माथे तिलक हथि माला वानां । लोगन राम खिलौना जानां ॥
 जौ है बैरा तौ राम तोरा । लोग मर्म कह जानै मोरा ॥
 तोरौ न पाती पूजौ न देवा । राम भगति बिन निहफल सेवा ॥
 सतिगुरु पूजौ सदा सदा मनावो । ऐसी सेव दरगह सुख पावो ॥
 लोग कहै कबीर बैराना । कबीर का मर्म राम पहिचाना ॥१६३॥
 माधव जल की प्यास न जाइ । जल महि अगनि उठी अधिकाइ ॥
 तू जलनिधि है जल का मीन । जल महि रहैं जलै बिन खीन ॥
 तू पिंजर है सुअटा तोर । जम मंजार कहा करै मोर ॥
 तू तरवर है पंखी आहि । मन्द भागी तेरो दर्सन नाहि ॥१६४॥
 मुंद्रा मोनि दया करि भोली पत्र का करहु बिचारु रे ।
 खिथा इहु तन सीधौ अपना नाम करो आधारु रे ॥
 ऐसा जाग कमावै जोगी । जप तप संजम गुरु मुख भोगी ॥

बुद्धि बिभूति चढ़ाओ अपनी सिंगी सुरति मिलाई ।
 करि बैराग फिरौ तन नगरी मन की किंगुरी बजाई ॥
 पंच तत्व लै हिरदै राखहु रहै निराल मताड़ा ।
 कहत कबीर सुनहु रे संतहु धर्म दया करि बाढ़ी ॥ १६५ ॥
 मुसि मुसि रोवै कबीर की माई । ए बारिक कैसे जीवहि रघुराई ॥
 तनना बुनना सब तज्यो है कबीर । हरि का नाम लिखि लियो सरीर ॥
 जब लग तागा बाहउ बेही । तब लग बिसरै राम खनेही ॥
 ओछी मति मेरी जाति जुलाहा । हरि का नाम लख्यो मैं लाहा ॥
 कहत कबीर सुनहु मेरी माई । हमरा इनका दाता एक रघुराई ॥ १६६ ॥
 मेरी बहुरिया को धनिया नाउ । ले राख्यो राम जनिया नाउ ॥
 इन मुंडियन मेरा घर धुधरावा । विटवहि राम रमैआ लावा ॥
 कहत कबीर सुनहु मेरी माई । इन मुंडियन मेरी जाति गवाई ॥ १६७ ॥
 मैला ब्रह्मा मैला इन्दु । रवि मैला है मैला चंदु ॥
 मैला मलता इहु संसार । इक हरि निर्मल जाका अन्त न पार ॥
 मैला ब्रह्मंडा इकै ईस । मैले निसि बासुर दिन तीस ॥
 मैला मोती मैला हीरु । मैला पवन पावक अरु नीरु ॥
 मैले सिव संकरा महेम । मैले सिध साधिक अरु भेष ॥
 मैले जोगी जगम जटा समेति । मैला काया हंस समेति ॥
 कहि कबीर ते जन परवान । निर्मल ते जो रामहि जान ॥ १६८ ॥
 मैला धरती मैला आकास । घटि घटि मौलिया आतम प्रगास ॥
 राजा राम मौलिया अनत भाइ । जह देखौ तह रहा समाइ ॥
 दुतिया मैले चारि बेद । सिमृति मैलो सिउ कतेब ॥
 संकर मैल्यो जोग ध्यान । कबीर को स्वामी सब समान ॥ १६९ ॥
 जम ते उलटि भये है राम । दुख बिनसे सुख कियो बिस्राम ॥
 बैरी उलटि भये हैं मीता । साकत उलटि सुजन भये चीता ॥
 अब मोहि सर्व कुसल करि मान्या । सान्ति भई जब गोबिंद जान्या ॥

तन महि होती कोटि उपाधि । उलटि भई सुख सहजि समाधि ॥

आप पछानै आपै आप । रोग न व्यापै तीनों ताप ॥

अब मन उलटि सनातन हूआ । तब जान्या जब जीयत मूआ ॥

कहु कबीर सुख सहज समाओ । आपि न डरो न अवर डराओ ॥१७०॥

जोगी कहहि जोग भल मीठा अवरु न दूजा भाई ।

रुंडित मुंडित एकै सबदी एकहहि सिधि पाई ॥

हरि बिनु भरमि भुलाने अंधा ।

जा पहि जाउ आप छुटकावनि ते बाँधे बहु फंधा ॥

जह ते उपजी तही समानी इहि बिधि बिसरी तबही ।

पंडित गुणी सूर हम दाते एहि कहहि बड़ हमही ॥

जिसहि बुझाए सोई बूझै बिनु बूझै क्यों रहियै ।

सति गुरु मिले अंधेरा चूके इन बिधि प्राण कुलहियै ॥

तजिवा वेदा हने विकारा हरि पद दढ़ करि रहियै ।

कहु कबीर गूँगै गुड़ खाया पूछे ते क्या कहियै ॥ १७१ ॥

जोगी जती तपी संन्यासी बहु तीरथ भ्रमना ।

लुंजित मुंजित मौनि जटा धरि अंत तऊ मरना ॥

ताते सेविअ ले रामना ।

रसना राम नाम हितु जाकै कहा करे जमना ॥

आगम निगम जोतिक जानहि बहु बहु व्याकरना ।

तंत्र मंत्र सब औषध जानहि अंत तऊ मरना ॥

राज भोग अरु छत्र सिंहासन बहु सुंदरि रमना ।

पान कपूर सुवासक चंदन अंत तऊ मरना ॥

वेद पुरान सिमृति सब खोजे कहूँ न ऊबरना ।

कहु कबीर यों रामहि जपौ मेटि जनम मरना ॥ १७२ ॥

जोनि छाड़ि जौ जग महि आयो । लागत पवन खसम बिसरायो ॥

जियरा हरि के गुन गाउ ॥

गर्भ जेनि महि उर्ध्व तपु करता । तौ जठर अग्नि महि रहता ॥
 लख चौरासीह जौनि भ्रमि आयो । अब के छुटके ठौर न ठायो ॥
 कहु कबीर भजु सारिंगपानी । आवत दीसै जात न जानी ॥१७३॥
 रहु रहु री बहुरिया घूँघट जिनि काढ़ै । अंत की बार लहैगो न आढ़ै ॥
 घूँघट काढ़ि गई तेरी आगै । उनकी गैल तोहि जिनि लागै ॥
 घूँघट काढ़े की इहै बड़ाई । दिन दस पाँच बहू भले आई ॥
 घूँघट तेरो तौपरि साचै । हरि गुन गाइ कूदहि अरु नाचै ॥
 कहत कबीर बहू तब जीतै । हरि गुन गावत जनम व्यतीतै ॥१७४॥
 राखि लेहु हमते बिगरी ।
 सील धरम जप भगति न कीनी है अभिमान टेढ़ पगरी ॥
 अमर जानि संची इह काया इह मिथ्या काची गगरी ।
 जिनहि निवाजि साजि हम कीये ति । हि बिसारि औ लगरी ॥
 संधि कोहि साध नही कहियौ सरनि परे तुमरी पगरी ।
 कहि कबीर इह बिनती सुनियहु मत घालहु जम की खवरी ॥१७५॥
 राजन कौन तुमारै आवै ।
 ऐसो भाव बिदुर को देख्यो ओहु गरीब मोहि भावै ॥
 हस्तो देखि भर्मते भूला श्रो भगवान न जान्या ।
 तुमरो दूध बिदुर को पानी अमृत करि मैं मान्या ॥
 खीर समान खागु मैं पाया गुन गावत रैन बिहानी ।
 कबीर को ठाकुर अनद बिनोदी जाति न काहु की मानी ॥१७६॥
 राजा राम तू ऐसा निर्भव तरन तारन राम राया ॥
 जब हम होते तब तुम नाही अब तुम हहु हम नाहो ।
 अब हम तुम एक भये हहि एकै देखति मन पतियाही ॥
 जब बुधि होती तब बल कैसा अब बुधि बल न खटाई ।
 कहि कबीर बुधि हरि लई मेरी बुधि बदली सिधि पाई ॥१७७॥

राजा स्निमामति नहीं जानी तेरी । तेरे संतन की हौं चेरी ॥

हसतो जाइ सु रोवत आवै रोवत जाइ सु हसै ।

बसतो होइ सो ऊजरू ऊजरू होइ सु वसै ॥

जल ते थल करि थल ते कूआ कूप ते मेरु करावै ।

धरती ते आकास चढावै चढे अकास गिरावै ॥

भेखारी ते राज करावै राजा ते भेखारी ।

खल मूरख ते पंडित करिबो पंडित ते मुगधारी ॥

नारी ते जो पुरुख करावै पुरुखन ते जो नारी ।

कहु कबीर साधू का प्रांतम सुमूरति बलिहारी ॥ १७८ ॥

राम जपौ जिय ऐसे ऐसे । ध्रुव प्रह्लाद जप्यो हरि जैसे ॥

दीन दयाल भरोसे तेरे । सब परवार चढ़ाया बेड़े ॥

जाति सुभावै ताहु कम मनावै । इस बेड़ें कौ पार लँघावै ॥

गुरु प्रसादि ऐसी बुद्धि समानी । चूकि गई फिरि आवन जानी ॥

कहु कबीर भजु सारंगपानी । उरवार पार सब एको दानी ॥ १७९ ॥

राम सिमरि राम सिमरि राम सिमरि भाई ।

राम नाम सिमरन विन बूड़ते अधिकाई ॥

बनिता सुत देह ग्रेह संपति सुखदाई ।

इनमें कछु नाहि तेरो काल अवधि आई ॥

अजामल गज गनिका पतित कर्म कीने ।

तेऊ उत्तरि पार परे राम नाम लीने ॥

सूकर कूकर जोनि भ्रमतेऊ लाज न आई ।

राम नाम छाड़ि अमृत काहे विष खाई ॥

नजि भर्म कर्म विधि निषेध राम नाम लेही ।

गुरु प्रसादि जन कबीर राम करि सनेही ॥ १८० ॥

री कलवारि गवारि मूढ़ मति उलटो पवन फिरावौ ।

मन मतवार मेर सर भाठी अमृत धार चुवावौ ॥

बोलहु भइया राम की दुहाई ।

पीवहु संत सदा मति दुर्लभ सहजे प्यास बुझाई ॥

भय बिच भाउ भाई कोउ बूझहि हरि रस पावै भाई ।

जेते घट अमृत सबही महि भावै तिसहि पियाई ॥

नगरी एकै नव दरवाजे धारत बर्जि रहाई ।

त्रिकुटी छूटै दस वादर खलै ताम न खीवा भाई ॥

अभय पद पूरि ताप तह नासे कहि कबोर बोचारी ।

उवट चलंते इहु मद पाया जैसे खोद खुमारी ॥ १८१ ॥

रे जिय निलज्ज लाज तोहि नाही । हरि तजि कत काहू के जाही ॥

जाकौ ठाकुर ऊँचा होई । सो जन पर घर जात न सोही ॥

सो साहिब रहिया भरपूरि । सदा संगि नाही हरि दूरि ॥

कवला चरन सरन है जाके । कहु जन का नाहीं घर ताके ॥

सब कोऊ कहै जासु की बाता । जो सम्म्रथ निज पति है दाता ॥

कहै कबीर पूरन जग सोई । जाकै हिरदै अबरु न होई ॥ १८२ ॥

रे मन तेरो कोइ नहीं खिंचि लेइ जिन भार ।

बिरख बसेगे पंखि को तैसे इहु संसार ॥

राम रस पीया रे । जिह रस बिसरि गये रस और ॥

और मुये क्या रोइये जौ आपा थिर न रहाइ ।

जो उपजै सो बिनसिहँ दुख करि रोवै बलाइ ॥

जह की उपजी तह रची पीवत मरद न लाग ।

कह कबीर चित चेतिया राम सिमिर बैराग ॥ १८३ ॥

रोजा घरै मनावै अल्लहु खादति जीय संघारै ।

आपा देखि अवर नहीं देखै काहे कौ भख मारै ।

काजी साहिब एक तोही महि तेरा सोच बिचार न देखै ।

खबरि न करहि दीन के बैरे ताते जनम अलेखै ॥

सांच कतेब बखानै अल्लहु नारि पुरुष नहि कोई ।

पढ़ै गुनै नाही कछु बैरं जौ दिल महि खबरि न होई ॥

अछहु गैव सगल घट भीतर हिरदै लेहु विचारी ।

हिंदू तुरक दुहू महि एकै कहै कबीर पुकारी ॥ १८४ ॥

लंका सा कोट समुंद सी खाई । तिह रावन घर खबरि न पाई ॥

क्या माँगौ किछु थिरु न रहाई । देखत नयन चलयो जग जाई ॥

इक लख पृत सवा लख नाती । तिह रावन घर दिया न बाती ॥

चंद सूरज जाके तपत रसोई । बैसंतर जाके कपरे धोई ॥

गुरु मति रामै नाम बसाई । अस्थिर रहै न कतहू जाई ॥

कहत कबीर सुनहु रे लोई । राम नाम बिन मुक्ति न होई ॥ १८५ ॥

लख चौरासी जीअ जोनि महि भ्रमत नंदु बहु थाको रे ।

भगति हेतु अवतार लियो है भाग बड़ो बपुरा को रे ॥

तुम जो कहत हो नंद को नंदन नंद सु नंदन काको रे ।

धरनि अकास दसो दिसि नाही तब इहु नंद कहा थो रे ॥

संकट नहीं परै जोनि नहि आवै नाम निरंजन जाको रे ।

कबीर को स्वामी ऐसो ठाकुर जाकै माई न बापो रे ॥ १८६ ॥

विद्या न पढो बाद नहीं जानो । हरि गुन कथत सुनत बैरानो ॥

मेरे बाबा मैं बैरा, सब खलक सैयानो, मैं बैरा ।

मैं बिगरो बिगरै मति औरा । आपन बैरा राम कियो बैरा ॥

सति गुरु जारि गयो भ्रम मोरा ॥

मैं बिगरे अपनी मति खोई । मेरे भर्भि भूलो मति कोई ॥

सो बैरा आपु न पछानै । आप पछानै त एकै जानै ॥

अबहि न माता सु कबहुँ न भाता । कहि कबीर रामै रँगि राता ॥ १८७ ॥

बिनु सत सती होइ कैसे नारि । पंडित देखहु रिदै बीचारि ॥

प्रोति बिना कैसे बधै सनेहू । जब लग रस तब लग नहि नेहू ॥

साह निसत्तु करै जिय अपनै । सो रमयै कौ मिलै न स्वपनै ॥

तन मन धन गृह सौपि सरीरु । सोई सोहागनि कहै कबीरु ॥ १८८ ॥

विमल वस्त्र केते हैं पहिरे क्या बन मध्ये बासा ।
 कहा भया नर देवा धोखे क्या जल बोरयो ज्ञाता ॥
 जीय रे जाहिगा मैं जाना । अविगत समझ इयाना ॥
 जत जत देखौ बहुरि न पेखौ संग माया लपटाना ॥
 ज्ञानी ध्यानी बहु उपदेसी इहु जग सगलो धंधा ।
 कहि कबार इक राम नाम विनु या जग माया अंधा ॥ १८६ ॥
 बिषया व्याप्या सकल संसारु । बिषया लै डूबा परवारु ॥
 रे नर नाव चौड़ि कत बोड़ी । हरि स्यो तोड़ि बिषया संगि जोड़ी ॥
 सुर नर दाधे लागी आगि । निकट नीर पसु पीवसि न भागि ॥
 चेतत चेतत निकस्यो नीर । सो जल निर्मल कथत कबीर ॥ १८७ ॥

वेद कतेब इफतरा भाई दिल का फिकर न जाई ।
 टुक दम करारी जौ करहु हाजिर हजूर खुदाई ॥
 बंदे खोजु दिल हर रोज ना फिरि परेसानी माहि ।
 इह जु दुनिया सहरु मेला दस्तगीरी नाहि ॥
 दरोग पढ़ि पढ़ि खुसी होइ बेखबर वाद बकाहि ।
 हक सच्चु खालक खलक म्याने स्याम मूरति नाहि ॥
 असमान म्याने लहंग दरिया गुसल करद न बूद ।
 करि फिकरु दाइम लाइ चसमे जहँ तहाँ मौजूद ॥
 अल्लाह पाकं पाक है सक करो जे दूसर होइ ।
 कबीर कर्म करीम का उहु करे जानै सोइ ॥ १८९ ॥
 वेद कतेब कहहु मत भूठे भूठा जो न बिचारै ।
 जौ सब मै एकु खुदाइ कहतु है तौ क्यों मुरगी मारें ॥
 मुझा कहहु नियाउ खुदाई । तेरे मन का भरम न जाई ॥
 पकरि जीउ आन्या देह बिनासी माटी कौ बिसमिल कीया ।
 जोति सरूप अनाहत लागो कहु हलालु क्यों कीया ॥
 क्या उज्जू पाक किया मुह धोया क्या मसीति सिर लाया ।

जौ दिल मैहि कपट निवाज गुजारहु क्या हज कावै जाया ॥
 तू नापाक पाक नहीं सुझया तिसका मरम न जान्या ।
 कहि कबीर भिस्त ते चूका दोजक स्यों मन मान्या ॥१८२॥
 बेद की पुत्रो सिमृति भाई । साँकल जंवरी लैहै आई ॥
 आपन नगर आप ते बाँध्या । मोह कै फाधि काल सरु साध्या ॥
 कटी न कटै तूटि नह जाई । सो सापनि हाँड जग कौ खाई ॥
 हम देखत जिन्ह सब जग लूट्या । कहु कबीर मैं राम कहि छूट्या ॥१८३॥
 बेद पुरान सबै मत सुनि के करी करम की आसा ।
 काल ग्रस्त सब लोग सियाने उठि पंडित पै चले निरासा ॥
 मन रे सरगो न एकै काजा । भज्यो न रघुपति राजा ॥
 बन खंड जाइ जोग तप कीनो कंद मूल चुनि खाया ।
 नादी बेदी सबदी मौनी जम के परै लिखाया ॥
 भगति नारदी रिदै न आई काछि कूछि तन दीना ।
 राग रागनी डिंभ होइ बैठा उन हरि पहि क्या लीना ॥
 परयो काल सबै जग ऊपर माहि लिखे भ्रम ज्ञानी ।
 कहु कबीर जन भये खलासे प्रेम भगति जिह जानी ॥१८४॥
 षट नेम कर कोठड़ी बाँधी बस्तु अनूप बीच पाई ।
 कुंजी कुलफ प्राण करि राखे करते वार न लाई ॥
 अब मन जागत रहु र भाई ।
 गाफिल होय कै जनम गवायो चोर मुसै घर जाई ॥
 पंच पहरुआ दर सहि रहते तिनका नहीं पतियारा ।
 चेति सुचेत चित होइ रहु तौ लै परगासु उजारा ॥
 नव घर देखि जु कामनि भूली बस्तु अनूप न पाई ।
 कहत कबीर नवै घर मूसे दसवें तत्त्व समाई ॥ १८५ ॥
 संत मिलै किछु सुनिगे कहियै । मिलै असंत मष्ट करि रहियै ॥
 बाबा बोलना क्या कहियै । जैसे राम नाम रमि रहियै ॥

संतन स्यों बोले उपकारी । मूरख स्यों बोले भूख मारी ॥
 बोलत बोलत बढ़हि विकारा । बिनु बोले क्या करहि विचारा ॥
 कहु कबोर छूछा घट बोलै । भरिया होइ सु कबहु न डोलै ॥ १८६ ॥
 संतहु मन पवनै सुख बनिया । किछु जोग परापति गनिया ॥
 गुरु दिखलाई मोरी । जितु मिरग पड़त है चोरी ॥
 मूँदि लिये दरवाजे । बाजिले अनहद वाजे ॥
 कुंभ कमल जल भरिया । जल भेच्या ऊभा करिया ॥
 कहु कबोर जन जान्या । जौ जान्या तौ मन मान्या ॥ १८७ ॥
 संता मानौ दूता डानाँ इह कुटवारी मेरी ।
 दिवस रैन तेरे पाउ पलोसौ कंस चवर करि फेरी ॥
 हम कूकर तेरे दरबारि । भौकाई आगे बदन पसारि ॥
 पूरब जनम हम तुम्हरे सेवक अब तौ मित्र्या न जाई ।
 तेरे द्वारे धुनि सहज की मथै मेरे दगाई ॥
 दागे होहि सुरन महि जूझहि बिनु दागे भगि जाई ।
 साधू होई सुभ गति पछानै हरि लये खजानै पाई ॥
 कोठरे महि कोठरी परम कोठरी बिचारि ।
 गुरु दीनी बस्तु कबीर कौ लेवहु बस्तु सम्हारि ॥
 कबीर दोई संसार कौ लीनी जिसु मस्तक भाग ।

अमृत रस जिन पाइया थिरता का सोहाग ॥ १८८ ॥

संध्या प्रात स्नान कराही । ज्यों भये दादुर पानी माही ॥
 जो पै राम नाम रति नाही । ते सबि धर्मराय कै जाही ॥
 काया रति बहु रूप रचाही । तिन कै दया सुपनै भी नाही ॥
 चार चरण कहहिं बहु आगर । साधू सुख पावहि कलि सागर ॥
 कहु कबीर बहु काय करीजै । सरबस छोड़ि महा रस पीजै ॥ १८९ ॥
 सत्तरि सै इसलारु है जाके । सवा लाख पै कावर ताके ॥
 सेख जु कही यहि कोटि अठासी । छप्पन कोटि जाके खेल खासी ॥

मो गरीब की को गुजरावै । मजलसि दूरि महल को पावै ॥
 तेतसि करोडी हैं खेल खाना । चौरासी लख फिरै दिवाना ॥
 बाबा आदम कौ कछु न दरि दिखाई । उनभी भिस्त घनेरी पाई ॥
 दिल खल हलु जाकै जर दरुबानी । छोड़ि कतेब करै सैतानी ॥
 दुनिया दोस रोस है लोई । अपना कीया पावै सोई ॥
 तुम दाते हम सदा भिखारी । देउ जबाब होइ बजगारी ॥
 दास कबीर तेरी पनह समाना । भिस्त नजीक राखु रहमाना ॥२००॥
 सनक सनंद अंत नहीं पाया । वेद पढ़े पढ़ि ब्रह्मे जनम गवाया ॥
 हरि का विलोबना विलोवहु मेरे भाई । सहज विलोवहु जैसे तत्त्व न जाई ॥
 तनु करि मटकी मन माहिं विलोई । इसु मटकी महिं सबद संजोई ॥
 हरि का विलोना मन का बीचारा । गुरु प्रसादि पावै अमृत धारा ॥
 कहु कबीर न दर करे जे मीरा । राम नाम लगि उतरे तीरा ॥२०१॥
 सनक सनंद महेस समाना । सेषनाग तेरो मर्म न जाना ॥

संत संगति राम रिदै बसाई ॥

हनूमान सरि गरुड़ समाना । सुरपति नरपति नहि गुन जाना ॥
 चारि वेद अरु सिमृति पुराना । कमलापति कमला नहि जाना ॥
 कह कबीर सो भ्रमै नाहीं । पग लगि राम रहै सरनाही ॥२०२॥
 सब कोई चलन कहत है ऊंहा । ना जानौ बैकुंठ है कहा ॥
 आप आपका मरम न जाना । बातन हो बैकुंठ बखाना ॥
 जब लग मन बैकुंठ की आस । तब लग नाहो चरन निवास ॥
 खाई कोट न परल पगारा । ना जानौ बैकुंठ दुआरा ॥
 कहि कबीर अब कहियै काहि । साध संगति बैकुंठै आहि ॥ २०३ ॥
 सर्पनी ते ऊपर नही बलिया । जिन ब्रह्मा विष्णु महादेव छलिया ॥
 मारु मारु सर्पनी निर्मल जल पैठी । जिन त्रिभुवन डसिले गुरुप्रसादि खोठी ॥
 सर्पनी सर्पनी क्या कहहु भाई । जिन साचु पछान्या तिन सर्पनी खाई ॥
 सर्पनी ते आन छूछ नहो अवरा । सर्पनी जीती कहा करै जमरा ॥

इहि सर्पनी ताकी कीती होई । बल अबल क्या इसते होई ॥
एह बसती ता बसत सरीरा । गुरु प्रसादि सहजि तरे कबोरा ॥२०४॥

सरीर सरोवर भीतरै आछै कमल अनूप ।
परम ज्योति पुरुषोत्तमो जाकै रेख न रूप ॥

रे मन हरि भजु भ्रम तजहु जग जीवन राम ॥

आवत कछू न दीसई नह दीसै जात ।

जहाँ उपजै बिनसै तही जैसे पुरबनि पात ॥

मिथ्या करि माया तजा सुख सहज बोचारि ।

कहि कबोर सेवा करहु मन संझि मुरारि ॥ २०५ ॥

सासु की दुखी ससुर की प्यारी जेठ के नाम डरौं रे ।

सखी सहेली ननद गहेली देवर कै बिरहि जरौं रे ॥

मेरी मति बौरी मैं राम बिसारयो किन बिधि रहनि रहौ रे ।

सेजै रमत नयन नहीं पेखौ इहु दुख कासौं कहौ रे ॥

बाप साबका करै लराई मया सद मतवारी ।

बड़े भाई के जब संग होती तब हौ नाह पियारी ॥

कहत कबोर पंच को भगरा भगरत जनम गवाया ।

भूठी माया सब जग बाँध्या मैं राम रमत सुख पाया ॥२०६॥

सिव की पुरी बसै बुधि सारु । तह तुम मिलि कै करहु बिचारु ॥

ईत ऊत की सोझी परै । कौन कर्म मेरा करि करि मरै ॥

निज पद ऊपर लागो ध्यान । राजा राम नाम मोरा ब्रह्म ज्ञान ॥

मूल दुआरै बंध्या बंधु । रवि ऊपर गहि राख्या चंदु ॥

पच्छम द्वारै सूरज तपै । मेर डंड सिर ऊपर बसै ॥

पंचम द्वारे की सिल ओढ़ । तिह सिल ऊपर खिड़की और ॥

खिड़की ऊपर दसवा द्वार । कहि कबोर ताका अंतु न पार ॥२०७॥

सुख माँगत दुख आगै आवै । सो सुख हमहु न माँग्या भावै ॥

विषया अजहु सुरति सुख आसा । कैसे होइहै राजा राम निवासा ॥

इसु सुख ते सिव ब्रह्म डराना । सो सुख हमहुँ साँच करि जाना ॥
 सनकादिक नारद मुनि सेखा । तिन भी तन महि मन नहीं पेखा ॥
 इस मन कौ कोई खोजहु भाई । तन छूटै मन कहा समाई ॥
 गुरु परसादी जयदेव नामा । भगति कै प्रेम इनहो है जाना ॥
 इस मन कौ नहीं आवन जाना । जिसका भर्म गया तिन साचु पछाना ॥
 इस मन कौ रूप न रेख्या काई । हुकमे होया हुकम बूझि समाई ॥
 इस मन का कोई जानै भेड । इहि मन लीण भये सुख देड ॥
 जीउ एक और सगल सरीरा । इस मन कौ रवि रहै कबोरा ॥२०८॥
 सुत अपराध करत है जेते । जननी चीति न राखसि तेते ॥
 रामय्या हैं बारिक तेरा । काहे न खंडसि अवगुन मेरा ॥
 जे अति कोप करे करि धाया । ताभी चीत न राखसि माया ॥
 चित्त भवन मन परयो हमारा । नाम बिना कैसे उतरसि पारा ॥
 देहि बिमल मति सदा सरीरा । सहजि सहजि गुन रवै कबोरा ॥२०९॥
 सुन्न संध्या तेरी देव देवा करि अधपति आदि समाई ।
 सिद्ध समाधि अन्त नहीं पाया लागि रहे सरनाई ॥
 लेहु आरती हो पुरुष निरंजन सति गुरु पूजहु भाई ।
 ठाढा ब्रह्मा निगम बिचारै अलग्न न लखिया जाई ॥
 तत्तु तेल नाम कीया बाती दीपक देह उज्यारा ।
 जोति लाइ जगदीस जगाया बूझै बूझनहारा ॥
 पंचे सबद अनाहद बाजे संगे सारिंगपानी ।
 कबीर दास तेरी आरती कीनी निरंकार निरबानी ॥ २१० ॥
 सुरति सिमृति दुइ कन्नी मुंदा परमिति बाहर खिंथा ।
 सन्न गुफा महि आसण बैसण कल्प विवर्जित पंथा ॥
 मेरे राजन मैं बैरागी जोगी । मरत न साग बिजोरी ॥
 खंड ब्रह्मंड महि सिंडी मेरा बटुवा सब जग भासमाधारी ।
 ताडो लागी त्रिपल पल्लटियै छूटै होई पसारी ।

मन पवन्न दुइ तूबा करिहै जुग जुग सारद साजी ।

थिरु भई नंती टूटसि नाही अनहद किंगुरी बाजी ॥

सुनि मन मगन भये है पूरे माया डोलन लागी ।

कहु कबीर ताकौ पुनरपि जनम नही खेलि गयो बैरागी ॥२११॥

सुरह की जैसी तेरी चाल । तेरी पृछट ऊपर भूमक बाल ॥

इस घर मह है सुतूढ़ि खाहि । और किसही के तू मति ही जाहि ॥

चाकी चाटै चून खाहि । चाकी का चौथरा कहाँ लै जाहि ॥

छींकें पर तेरी बहुत डीठ । मत लकरी सोंटा परै तेरी पीठ ॥

कहि कबीर भोग भले कीन । मति कोऊ मारै ईंट ठेम ॥२१२॥

सो मुल्ला जो मन स्यो लरै । गुरु उपदेस काल स्यो जुरै ॥

काल पुरुष का मरदै मान । तिस मुल्ला को सदा सलाम ॥

है हुजूरि कंत दूरि बतावहु । दुंदर बाधहु मुंदर पावहु ॥

काजो सो जो काया बीचारै । काया की अग्नि ब्रह्म पै जारै ॥

सुपनै बिन्दु न देई भरना । तिसु काजो कौ जरा न भरना ॥

सो सुरतान जो दुइ सुर तानै । बाहर जाता भीतर आनै ॥

गगन मंडल महि लस्कर करै । सो सुरतान छत्र सिर धरै ॥

जोगी गोरख गोरख करै । हिंदू राम नाम उच्चरै ॥

मुसलमान का एक खुदाई । कबीर का स्वामी रखा समाई ॥२१३॥

स्वर्ग वास न वाछियै डरियै न नरक निवासु ।

होना है सो होइहै मनहि न कीजै आसु ॥

रमय्या गुन गाइयै । जाते पाइयै परम निधानु ॥

क्या जप क्या तप संयमो क्या व्रत क्या इस्नान ।

जब लग जुक्ति न जानियै भाव भक्ति भगवानु ॥

सम्पै देखि न हृषियै बिपति देखि न रोइ ।

ज्यो सम्पै त्यो विपत है बिधि ने रच्या सो होइ ॥

कहि कबीर अब जानिया संतन रिदै मभारि ।

सेवक सो सेवा भले जिह घट बसै मुरारि ॥ २१४ ॥

हज्ज हमारी गोमती तीर । जहाँ बसहि पीतम्बर पीर ॥

बाहु बाहु क्या खूब गावता है । हरि का नाम मेरे मन भावता है ॥

नारद सारद करहि खवासी । पास बैठी बिधी कवला दासी ॥

कंठे माला जिहवा राम । सहस नाम लै लै करी सलाम ॥

कहत कबीर राम गुन गावै । हिंदू तुरक दोऊ समझावै ॥ २१५ ॥

हम घर सूत तनहि नित ताना कंठ जनेऊ तुमारे ।

तुम तो बेद पढ़हु गायत्री गोबिंद रिदै हमारे ॥

मेरी जिहवा विष्णु नयन नारायण हिरदै बसहि गोबिंदा ।

जम दुआर जब पूछसि बवरं तब क्या कहसि मुकंदा ॥

हम गोरू तुम ग्वार गुसाइ जनम जनम रखवारे ।

कबहु न पार उतार चराइहु कैसे खसम हमारे ॥

तू बाह्यन मैं कासी का जुलहा बूझहु मोर गियाना ।

तुम तौ पाचे भूपति राजे हरि सो मोर धियाना ॥ २१६ ॥

हम मसकीन खुदाइ बन्दे तुम राजसु मन भावै ।

अल्लह अवलि दीन का साहिब जोर नहीं फुरमावै ॥

काजी बोल्या अनि नही आवै ॥

रोजा धरै निवाजु गुजारै कलमा भिस्त न होई ।

सत्तरि काबा घटही भीतर जे करि जानै कोई ॥

निवाजु सोई जो न्याइ बिचारै कलमा अकलहि जानै ।

पाँचहु मुसि मुसला बिछावै तब तौ दीन पछानै ॥

खसम पछानि तरस करि जीय महि मारि मणी करि फोकी ।

आप जनाइ और को जानै तब होइ भिस्त सरीकी ॥

माटी एक भेष धरि नाना तामहि ब्रह्म पछाना ।

कहै कबीरा भिस्त छोड़ि करि दोजक स्थौ मन माना ॥ २१७ ॥

हरि बिन कौन सहाई मन का ।

मात पिता भाई सुत बनिता हितु लागो सब फन का ॥

आगै कौ किछु तुलहा बाँधहु क्या भरोसा धन का ।

कहा बिसासा इस भांडे का इत नकु लगैठन का ॥

सगल धर्म पुन फल पावहु धूरि बाँछहु सब जन का ।

कहै कबीर सुनहु रे संतहु इहु मन उडन पखेरु बन का ॥ २१८ ॥

हरि जग सुनहि न हरि गुन गावहि । बातनही असमान गिरावहि ॥

ऐसे लागन स्यो क्या कहिये । जो प्रभू कीये भगति ते बाहज तिनते

सदा डराने रहिये ॥

आपन देहि चुरु भरि पानी । तिहि निदहि जिह गंगा आनी ॥

बैठत उठत कुटिलता चालहि । आप गये औरनहू घालहि ॥

छाडि कुचर्चा आन न जानहि । ब्रह्माहू को कह्यो न मानहि ॥

आप गये औरनहू खावहि । आगि लगाइ मंदिर में सोवहि ॥

औरन हँसत आपहृति काने । तिनकौ देखि कबीर लजाने । २१९ ॥

हिंदू तुरक कहाँ ते आये किन एह राह चलाई ।

दिल महि सोच विचार कवाड़े भिस्त दोजक किन पाई ॥

काजी तै कौन कतेब बखानी ।

पढ़त गुनत ऐसे सब मारे किनहू खबर न जानी ॥

सकति सनेह करि सुन्नति करियै मै न बदैगा भाई ।

जौ रे खुदाई मोहि तुरक करैगा आपनहो कटि जाई ॥

सुन्नति किये तुरक जे होइगा औरत का क्या करियै ।

अर्द्ध सरीरी नारि न छोड़े ताते हिंदू ही रहिये ॥

छाडि कतेब राम भजु बैरे जुलम करत है भारी ।

कबीर पकरी टेक राम की तुरक रहै पचि हारी ॥ २२० ॥

हीरै हीरा बेधि पवन मन सहजे रखा समाई ।

सकल जोति इन हीरै बेधी सति गुरु बचनी में पाई ॥

हरि की कथा अनाहद बानी । हंस है हीरा लेइ पछानी ॥
 कहि कबीर हीरा अस देख्यो जग महि रह्या समाई ।
 गुपता हीरा प्रगट भयो जब गुरु गम दिया दिखाई ॥ २२१ ॥
 हृदय कपट मुख ज्ञानी । भूठे कहा बिलोवसि पानी ॥
 काया मांजसि कौन गुना । जौ घट भीतर है मलनां ॥
 लौकी अठ सठि तीरथ न्हाई । कौरापन तऊ न जाई ॥
 कहि कबीर बोचारी । भव सागर तारि मुरारी ॥ २२२ ॥
